Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(मासि
त ट्रस्ट
संस्थान
प्रकाशन
तान
ाक)
ादक
रानी
६६६३६
सिंह मार्ग
ाई वाला
दिल्ली-५
—१२)
क पौंड
०१)
मूल्य १)
ंक ७
९७२

प्रश्न : दीपमाला पर

कौन है जलने को तैयार ?
कौन है मरने को तैयार ?

इसलिए कि अँधेरा रह न सके,
इसलिए कि पाप उभर न सके,
इसलिए कि अधर्म ठहर न सके,
इसलिए कि मौत लहर न सके,

कौन है जलने को तैयार ?
कौन है मरने को तैयार ??

मत वादों की पागल दुनियां,
स्वार्थ द्वेष में उलझी दुनियां,
दंभ दर्प में डूबी दुनियां,
मृत्यु मार्ग पर बढ़ती दुनियां,

आज बदलनी लेकर प्यार,
कौन है जलने को तैयार ?

किसने दूध पिया है माँ का,
किसने मोल सत्य का आंका,
पापों की पागल सेना से,
कौन लड़ेगा, बढ़कर बांका,

धर्म की ले ज्योतित पतवार
कौन है जलने को तैयार ?

प्रश्न है गूँज रहा दिन रात,
होगा कैसे दिव्य प्रभात,
कब डूबेगी काली रात,
मिटें ये कैसे झंझावात,

धर्म पर चले सकल संसार,
कौन है जलने को तैयार ?

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गहन रात्रि अन्धकार में प्रकाश-पर्व मनानें के लिए वेद-सूर्य ज्योतित करना हमारा परम कर्त्तव्य है। ऋषि-मुनियों की पावन परम्परा और राम-कृष्ण-दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट संस्कृति का आधार 'वेद' है।

'वेद' का प्रकाश फैलेगा तो अंधेरा रह नहीं सकता। 'वेद' नहीं तो प्रकाश नहीं।

प्रकाश पर्व मनाना है तो 'वेद' का प्रचार करो! घर-घर में वेद पहुँचाओ।

मेरे भाई! बहन!

सोचो! समझो और वेद-प्रसार में पूरी शक्ति से लग जाओ—

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वतंत्रता समरांगण के प्रथम सेनानी थे ऋषि दयानन्द ! ऋषि द्वारा ज्योतित स्वराज्य की दीप्त ज्योति से देश का कोना-कोना ज्योतिर्मय ो गया।

हिंसा का मार्ग हो या अहिंसा का जिसने भी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष कया—प्ररणा के मूल में ऋषि का दिखाया दीप ही रहा।

स्वराज्य को सुराज्य बनाने के लिए ऋषि का आदर्श आवश्यक है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

गहन रात्रि अन्धकार में प्रकाश-पर्व मनाने के लिए वेद-सूर्य ज्योतित करना हमारा परम कर्त्तव्य है। ऋषि-मुनियों की पावन परम्परा और राम-कृष्ण-दयानन्द द्वारा निर्दिष्ट संस्कृति का आधार 'वेद' है।

'वेद' का प्रकाश फैलेगा तो अंधेरा रह नहीं सकता। 'वेद' नहीं तो प्रकाश नहीं।

प्रकाश पर्व मनाना है तो 'वेद' का प्रचार करो! घर-घर में वेद पहुँचाओ।

मेरे भाई! बहन!

सोचो! समझो और वेद-प्रसार में पूरी शक्ति से लग जाओ—

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वतंत्रता समरांगण के प्रथम सेनानी थे ऋषि दयानन्द ! ऋषि द्वारा ज्योतित स्वराज्य की दीप्त ज्योति से देश का कोना-कोना ज्योतिर्मय हो गया।

हिंसा का मार्ग हो या अहिंसा का जिसने भी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया—प्ररणा के मूल में ऋषि का दिखाया दीप ही रहा।

स्वराज्य को सुराज्य बनाने के लिए ऋषि का आदर्श आवश्यक है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सम्पादकीय

प्रकाश ही जीवन है !

दीवाली की सबसे बड़ी उपलब्धि यही है कि हमारे आप के घर में कहीं भी अंधेरे का एक कण भी रहने न पाए।

अंधेरे का अर्थ है दुःख, कष्ट, चिन्ता और वे सारे तत्त्व जो हमें पीड़ा देते हैं। कलह-फूट-द्वेष-दुर्भावनाओं को चुन-चुन कर घर से बाहर कर प्रेम का शाश्वत दीप सभी अपने घर-आँगन में जलायें—यह हमारी हार्दिक कामना है।

आप के परिवार पर प्रभु का आशीर्वाद बरसे, सब भाँति वैभव सरसे, सब का, सब विधि कल्याण हो। परिवार का घेरा संकुचित मत करो, बढ़ाते जाओ। जितना बड़ा परिवार होगा, उतना ही आनन्द आप अनुभव करेंगे।

धीरे-धीरे वह स्थिति लाओ कि सारा संसार आपका परिवार बन जाए।

भारतीय संस्कृति में संन्यासी सबसे बड़ा इसीलिए है कि वह संसार को परिवार मानता है। यह हमारे लक्ष्य का चरमोत्कर्ष है। आज परिवार सिकुड़ता जा रहा है और परिणाम स्वरूप दुःख उभरते जा रहे हैं। पश्चिम की सभ्यता में परिवार की इकाई में संभवतः पति-पत्नी भी एक नहीं हो पाते और भारत की संस्कृति में कुटुम्ब की आदर्श सीमा "वसुधैव कुटुम्बकम्" मानी गई है।

आप कितने बड़े हैं? इसका उत्तर इसी बात से दिया जा सकता है कि आप का परिवार कितना बड़ा है। सुख बांटो, दुख स्वयं बंट जायेंगे। उदार मन, उदार भाव सीमाओं को तोड़ एक ऐसी सीमा का निर्माण करते हैं जो असीम है।

भारत को अन्धकार से मुक्त करो। विदेशी राज्य गया तो विदेशी सभ्यता को भी विदाई दो। मम्मी-डैडी शब्दों के उच्चारण से अपनी संतानों को मुक्त कराओ। पैन्ट का पहिरावा कार्यालयों से आगे न बढ़ने पाए। भारत पर, भारत की संस्कृति और परम्पराओं पर गर्व करो।

इतिहास के पृष्ठ व्यक्ति मिल कर लिखते हैं। समय के प्रवाह ने अंधकार से प्यार करने की प्रेरणा फैलायी है। दीपावली का पर्व प्रकाश का आमंत्रण है। इस आमंत्रण के मूल में छिपा है प्यार-उत्साह-जीवन-आशा और आनन्द का मंत्र।

निराशा छोड़ दो, बंधन तोड़ दो, युग को मोड़कर नयी सुबह की नयी किरण का स्वागत करो, इसी लिए कि वह नित नवीन और अत्यन्त प्राचीन है।

धरती का प्रथम चरण प्रकाश की वन्दना के साथ आरम्भ हुआ था और प्रलय तक यह क्रम चलता रहेगा। हम रहें या न रहें—प्रकाश रहेगा, प्रकाश ही जीवन है।

भाषण नहीं काम

सफलता किसी भी क्षेत्र में यदि इष्ट है तो हमें भाषण देने की प्रवृत्ति कम करनी होगी और काम अधिक से अधिक करने की आदत बना सेवा का व्रत लेना होगा। कर्म ही जीवन है, इस मंत्र को जीवन में ढाल कर ही हम संसार का अंधेरा दूर कर सकते हैं।

—राकेश रानी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दीप जलाओ

दीप जलाओ ! दीप बुझाओ !!
दीप पंक्ति से द्वार सजाओ !
जगमग-जगमग दीप हार से,
जीवन बन्दनवार बनाओ !

युग वीणा के स्वर बोझिल हैं,
कंपित है जीवन की वाणी।
रुनझुन पायल झंकृत स्वर हैं,
नृत्य कर रही है नादानी।
ज्ञान और अज्ञान भटकते,
दीप जला कर राह दिखाओ !

ऐसे दीप बुझा दो साथी,
जिन से बढ़ता आज अँधेरा,
उन दीपों को दीप न समझो
जिससे व्याकुल हुआ सवेरा।
स्वर्ग बने घर आंगन सबका
ऐसे शाश्वत दीप जलाओ !

मर्यादा के जय आँगन में,
कांप रहा है क्यों उजियारा ?
धर्म धरा पर अंधकार क्यों,
भूल चुका "सच" पथ बेचारा,
झंझा वातों की झंझा में
दीप जला अज्ञान मिटाओ !

सच का जीवन दीप सजाओ,
दीप जलाओ ज्ञान ज्योतिका,
प्रभु का मधु संगीत गुंजाओ,
दीप जलाओ !

—राकेश रानी—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ऋषिवर तुम्हें कोटि-कोटि नमस्कार

देश दारुण दुःख से ग्रस्त था,
रवि की सहस्र रश्मियां अम्बर में संकुचित हो रही थीं।
भूमण्डल में प्रकाश हो कैसे ?
मानव ! स्मरण कर उस वेला को,
ज्ञान रविरश्मि माला मूर्च्छित थी, तब अज्ञान घन के—
आंचल में छिपी, मदपान कर, मादकता से !
मुसकान भी स्तब्ध थी, प्रखरता प्रसुप्त थी उस भानु की !
मानवता दूर थी मानव से,
भारत मां का वक्षस्थल चीर डाला था,
दुष्ट दैत्य दानव दल ने,
मां की प्रतिमा थी, पर प्रति मां में मां न थी।
सरस्वती थीं पर रसवती न थी।
रसना थी पर रसना में रस न था।
संवाद था पर समवाद न था।
चाहना थी, पर चाह ना थी।
मोहन था किन्तु मोहन में मोह न था।
मंजुलता थी पर मंजु-लता न थी।
मनचले थे पर मन चले न थे।
वेद के प्रति वेदना थी पर-वेद-ना थे।
नारी में मधुरता थी पर नारी मधु-रता न थी,
उत्थान-ऊषा वधू का भूषण था अज्ञान तिमिर, चिर से।
क्या न था ? सब कुछ था ! पर क्या था ? कुछ न था !
क्यों ? कैसे ? कब ? कहां ? ये प्रश्न जागृत थे।
सहसा प्रभा तब जाग उठी प्रभाकर की।
ज्योत्स्ना जगमगा उठी शशाङ्क की।
मेघ फटे, तिमिर हटे, कब जब प्रभा उसकी—
हिमगिरि के उत्तुंग शिखर से कल्लोल कर बहती हुई,
शीतलता की सरिता के सरस कणों को समेटती हुई,
सिकतापुञ्ज से भी सुरभि सन्निहित कर उतर पड़ी भूमण्डल पर।
तब क्या हुआ ? इस भूतल की परिधि में अपरिचित-सी—
प्रवेश कर गई, गुर्जर प्रान्तान्तर्गत टंकारा ग्राम में,
वह शीतलता-समन्वित-शोभा मयी ज्ञान-मंदाकिनी की धवल धारा।
शैशव था काल उसका, कुछ विकसित हुआ जीवन,
पुष्प-पराग लिए वेद का।

कोलाहल मचा, अन्तस्तल में उसके, तोड़ बन्धन,
छोड़ ममता, परिजन स्नेह जालमुक्त हो वह, विपरीत,
चल पड़ा लौकिक धरा के।
प्रसुप्त जगत् जाग उठा,
पर कुछ न्यूनता थी उसमें—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मिले गुरुवर, प्रवर दीप्ति, प्रखर ज्योति अमन्द—
लिये, धीरे से सर्वस्व अर्पण कर दिया सुपात्र जान, उसको।
मानो उदधि ने उड़ेल दिया उदरस्थ तोयनिधि—
क्षण में उस पर।
संस्कृत हो समावर्तन संस्कार से—
वह चल पड़ा पथिक, ध्येय लिये, श्रेय पर।
अवलोकन कर पथिक को—
संध्या की अरुणिमा छिप गई न जाने कहां।
प्रभात हुआ, भास्कर की आभा से जगमगा उठा—
संसार।
दिग् दिगन्त में प्रवाहित होने लगी ज्ञान धारा।
वह कलाकार, यह कलाकार, सब कलाकार झूम उठे,
ओ३म्केतु चूम उठा गगन।
यज्ञ की सुरभि से नभ मण्डल सुरभित हो चला।
स्वतन्त्रता का मन्त्र जाग उठा, जय घोष हुआ खण्ड-खण्ड—
पाखण्ड हुआ हुँकार से उस देव के,
प्रचार से वेद के ध्वस्त हुआ धर्म ध्वंजियों का दुर्ग।
अध्वान जो कि आवृत्त था पङ्क से,
कण्टकाकीर्ण था, पुष्पपराग से हो गया पूरित !
आह्वान किया स्वतन्त्रता देवी का,
गान किया सभ्यता के मन्त्र का
मान किया संस्कृत का, परित्राण किया नारी का,
कल्याण जन-जन का,
वेद के विधान से निर्माण किया नूतन,
क्या न किया ? सर्वस्व देकर।
उस महान् की मानवता गा सके कौन ?
असंख्य उपकार गिना सके कौन ?
निर्माण से उसके निर्माण हुआ देश का, जाति का, विश्व का।
निर्वाण भी उसका विश्व को प्रकाश दिया,
अन्धकार नाश किया।
कुछ लो, मानव ! लो,
निर्वाण से भी उसके कुछ ले लो।
अभी समय है—देखो,
आज सहस्र दीप ज्योतित हो उत्सुक हैं,
दे रहे हैं ज्योति दान,
स्वीकार करो मानव ! स्वीकार करो ! अन्तर्ज्योतिः
अमर ज्योति, अक्षय ज्योति के पुनरुद्धारक ऋषिवर !
तुम्हें कोटि-कोटि नमस्कार !
वैदिक धर्म की जय ! ऋषिवर दयानन्द की जय !! भारत माता की जय !!!

—विद्याभास्कर शास्त्री

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पाखंड की आंधीः कलियुगी........

ईश्वर बनकर : ईश्वर भक्तों को बहकाने वाले : श्री प्रेमपालसिंह रावत जो बाल योगेश्वर के नाम से लाखों व्यक्तियों के गुरु बन ८ जैम्बो-जेट लेकर नई दिल्ली पहुँच रहे हैं।

भौतिकता से ऊबा हुआ संसार ईश्वर को जानना चाहता है और उसकी भूख बढ़ती जा रही है। भूख मिटाने में समर्थ-ज्ञान और ईश्वर के सच्चे ज्ञाता आर्य समाज के कर्णधार गहरी नींद में सो गए हैं या पदों के पीछे दौड़ रहे हैं—जिसका परिणाम—बाल योगेश्वर—साईं बाबा, आनन्द मार्ग, ब्रह्मा कुमारी, और जय गुरुदेव मत के रूप में प्रगट हो रहा है।

ज्ञान के प्रसारक सो गए हैं और अज्ञान के विक्रेताओं की बन आयी है। दुनियां बहक रही है और हम मूक दर्शक बने देख रहे हैं।

काश कि राजधानी दिल्ली के आर्य समाजों में जीवन होता ? किसी के मन में पीड़ा होती और ८-१० व्यक्ति भी जागरूक होते तो भारत की राजधानी में होने वाले इस षड्यन्त्र को रोका जा सकता था।

डिवाइन लाइट मिशन नाम से स्थापित इस संस्था की एक प्रचार पुस्तिका इस समय हमारे सामने है इसे पढ़कर जो तथ्य उभरते हैं वह इस बात का प्रतीक हैं कि आज विज्ञान की दृष्टि से संसार भले ही कितना ही आगे बढ़ गया हो—अध्यात्म की दृष्टि से वह पूर्ण अज्ञानी है। जिससे एक साधारण बालक भी केवल नारे और आध्यात्म के नाम से उन्हें बहका सकता है।

सारे गुरुडम को रोकने का केवल एक उपाय है कि—
आर्य समाज पूरी शक्ति से जहाँ इन पाखंडों पर प्रहार करे वहाँ सच्चे अध्यात्म के प्रसार का भी नेतृत्व करे। और कोई मार्ग रक्षा का नहीं है—

—भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद भाष्य प्रकाशन के लिए

उदारतर हों - आज ही

अपनी आहुति भेजिए

१२५०० प्रतियां छप रही हैं -

१२००) का कागज प्रतिदिन चाहिए

कुल तीन लाख रुपये

कार्य की सफलता के लिए

चाहिए।

आप क्या दे सकते हैं स्वयं

निर्णय कीजिए। बढ़ते चरण

बढ़ते रहें, इस लिए आप

से सहयोग मांग रहा हूं

आशा के साथ आपका -

भारतेन्द्र नाथ

जो भी आप भेज सकें वह शीघ्र

भेज दीजिए। —— भारतेन्द्र नाथ

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मैं हृदय मन्दिर से लिख रहा हूँ ~ भारतेन्द्र नाथ

आओ ! घर का अँधेरा दूर करें !

दीपमाला की पंक्तियां जला कर मुस्कराते हुए भाई बहनों को हमारा निमंत्रण है कि वे अपने घर का, अपने मन का, अपने जीवन का अन्धकार भी दूर करें।

मिट्टी के दीपक तो कुछ घण्टे जल कर बुझ जाएंगे पर अपने मन मन्दिर में प्रकाश का जो दीपक आप जलाएंगे वह तो जीवन भर आपका मार्ग दर्शन करेगा।

मन का दीप यदि नहीं जला तो मिट्टी के दीप हमें आनन्द और प्रकाश नहीं दे सकते। अंधेरा यदि जीवन में छाया है तो फिर सही मार्ग हम कैसे पा सकेंगे ? सोचिए और ज्ञान का दीप मन में जलाने का प्रयत्न कीजिए।

अपने हृदय को देखिए— क्या वहां राग, द्वेष, क्रोध, ईर्ष्या है ? क्या आपके मन में किसी के भी प्रति शत्रुता के भाव हैं ? क्या किसी को हानि पहुंचाने की भावना के अंकुर कहीं किसी भी रूप में अवशिष्ट हैं ? क्या किसी को हानि पहुंचा कर धन संग्रह की प्रवृत्ति के कण कहीं शेष हैं ? यदि उत्तर हां में हो तो निश्चित रूप से अंधकार आपके मन पर छाया है।

इस अंधकार में रहकर आपको क्या मिलेगा ? जीवन की अनमोल घड़ियां अन्धे होकर खो देना कहां की बुद्धिमत्ता है ? इसलिए स्वीकार करो हमारा निमंत्रण और अपने मन मन्दिर को सजा, चमका, दीवाली के दिन ज्ञान का दीपक जलाने का निश्चय करो।

संकल्प करो कि मन का अंधेरा हम भगाएंगे। मन को गंगा-सा पवित्र बना स्वयं को शुद्ध करेंगे। हमारे जीवन की वीणा के निर्झर से वह संगीत प्रवाहित होगा जिसे सुन हम ही नहीं हमारा सारा आस पास झूम जाएगा।

मनुष्य वही है जिसका मन पवित्र है। स्वर्ग वहीं है जहां राग-द्वेष का कलुष नहीं। सोचो, समझो और विचार करो। और ज्ञान का, सत्य का, जीवन का दीप जला अपने मन मन्दिर को ज्योतित कर दो।

ऋषि दयानन्द की जय

हमारा मन संसार के हर स्थान से ऋषि दयानन्द की जय का स्वर सुनना चाहता है। इसी स्वर की गूंज मंदिरों, मस्जिदों, गिरजा घरों के कंगूरों से गूंजती हुई

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सर्वत्र हम देखना चाहते हैं। मनुष्य को मनुष्य बनाने के लिए ऋषि दयानन्द ने जिस उदात्त जीवन दर्शन का प्रसार किया था उस पर सारी धरती को चलते हुए हम देखना चाहते हैं।

हम ऐसी क्रांति चाहते हैं जिसमें संसार के सारे मजहब और वादों की आहुति दे दी जाए और एक ऐसे नए विश्व का उदय हो जिसमें मनुष्य केवल मनुष्य हो। उसका धर्म एक हो, देश एक हो, लक्ष्य, उपास्य एक हो।

जहरीली दीवारों की मरम्मत से, लीपा पोती से काम चलने वाला नहीं, संसार को स्वर्ग बनाना है तो अधर्म की हस्ती को मिटाना होगा और सत्य, ज्ञान, न्याय, मानवता पर आधारित एक ऐसा संसार बनाना होगा जहां सभी एक घोंसले की तरह मिलकर रहें। 'वेद' के शब्दों में "यत्र विश्वं भवत्येकनीडं" की कल्पना को साकार रूप देकर हमें गुरुदेव देव दयानन्द के दिव्य स्वप्न को पूरा करना होगा। बातों प्रस्तावों, योजनाओं से नहीं, त्याग, बलिदान और कर्म के आधार पर हमें क्रांति की अलख जगानी होगी। और...

१९७५ की आर्य समाज की शताब्दी के अवसर पर आर्य समाज को ऋषि दयानन्द का आर्य समाज बना विश्व विजय का अभियान आरम्भ करना होगा।

किन्तु इसके लिए कौन तैयार है? इस के लिए किस के पास समय है? कौन अपने जीवन के अरमानों की आहुति देगा।"

झूठे भाषणों और लच्छेदार प्रस्तावों से आर्य राज्य का सपना दिखाने वाले व्यक्ति, आर्य समाज के सर्वोच्च संगठन पर अधिकार जमा राजनैतिक दलों की सेवा में मेवा प्राप्त करने वाले शूरवीर नेता जिन के पास आर्य समाज के लिए समय नहीं, जिन में सच को सच और झूठ को झूठ कहने का साहस नहीं, वे कैसे इस क्रांति का नेतृत्व करेंगे?

कहीं वकील, कहीं व्यापारी, कहीं बाबू, कहीं करोड़पति आर्यसमाज की गद्दी संभाले बैठे हैं। झगड़े, मुकदमे और लकीर पीटने से आगे उनके पास क्या है? कोई माई का लाल आगे आकर बताए तो सही कि उसने अपना क्या छोड़ा है आर्यसमाज के लिए? जिन्होंने त्याग किया उनके बल पर आर्यसमाज आगे बढ़ा है। उनके बल पर नहीं जो संसद् सदस्य बनने के लिए आर्यसमाज का प्रयोग कर रहे हैं।

हम जानते हैं कि आज आर्यसमाज के कर्णधार आर्यसमाज के उत्कर्ष की सब से बड़ी दीवार हैं। वे न कुछ करते हैं न करने देना चाहते हैं। उनका हृदय सत्यार्थ प्रकाश के प्रसार से उछलता नहीं, अपितु उन की छाती पर इससे सांप लोटता है। ऋषि जीवन के प्रसार के लिए उठाए गए पगों को वे तोड़ देना चाहते हैं। वेद-प्रचार के अभियान को वे कुचल देना चाहते हैं।

ऐसे व्यक्ति ऋषि दयानन्द की जय मुख से बोलकर भी ऋषि की जय के साधन नहीं जुटाना चाहते।

हमारा दृढ़ विश्वास है कि यदि किसी छू मन्तर से आर्यसमाज के नेताओं को सद्बुद्धि आ जाए तो संसार पर वैदिक धर्म की विजय पताका फहराने में देर नहीं लगेगी, पर सद्बुद्धि कैसे आए? इस प्रश्न का उत्तर हमारे पास नहीं है।

हम उस महान् संगठन के सेवक हैं जिसे ऋषि ने अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए स्थापित किया था। लेखराम—श्रद्धानन्द और सैकड़ों वीर शहीदों

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ने रक्त देकर जिसे पनपाया था । त्याग, बलिदान और सेवा के बल से जिसने वैदिक धर्म की जय के गीत गाए थे ।

हम आर्यसमाज के उसी पवित्र रूप को जागृत करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं और करते रहेंगे । मिनिस्टर पूजा और संसद् वरण का आर्यसमाज जिन्हें इष्ट होगा होगा, हमारे गुरु दयानन्द को वह इष्ट नहीं था । मुकदमे, फूट, पार्टी बाजी और स्वार्थ की गंदी नाली में पड़े व्यक्तियों को हम आर्यसमाज का नेता मानने को तैयार नहीं ।

हमारा मस्तक तो उस नेतृत्व के सम्मुख झुकेगा जो वेद पताका उठा अपना सर्वस्व दयानन्द के चरणों में अर्पित कर विश्व विजय के लिए आगे बढ़ेगा ।

दयानन्द के वीर सैनिकों को हम दयानन्द संस्थान की ओर से विश्व विजय का अभियान आरम्भ करने का निमंत्रण देते हैं । हम पुकारते हैं उस आर्य शक्ति को जो लेखराम की शहादत का मोल चुका सके ।

१९७५ आ रहा है, आर्यो देखो, देश का कोई कोना ऐसा न रह जाए जहां ऋषि दयानन्द की जय के स्वर न पहुंच पाएं । शहीदों के पवित्र बलिदान की सौगन्ध लेकर हम उठें और "ऋषि दयानन्द की जय", ऋषि के सिद्धान्तों की जय, वेद की जय, के स्वर सर्वत्र गुंजाएं ।

पूरी शक्ति और साधना से उठो ! नेता क्या कर रहे हैं यह मत सोचो, देखो ! आप क्या कर सकते हैं ? आप के अपने क्षेत्र में आप कैसे ऋषि का सन्देश पहुंचा सकते हैं ? इसका निर्णय स्वयं करो और काम में जुट जाओ ।

भारत के प्रत्येक दयानन्द भक्त को दीवाली के दिन देश का सारा अंधेरा मिटा ऋषि दयानन्द के चरणों में श्रद्धा-सुमन अर्पित करने का हम निमंत्रण दे रहे हैं ।

आर्य नेताओ !

एकान्त में गंभीरता पूर्वक बैठकर सोचो, चिन्तन करो ! कहीं हमारे ही हाथों से :—

ऋषि दयानन्द की हत्या न हो जाए ?

कौन जानता था कि संसार का सबसे महान् आन्दोलन उसके कर्णधारों की पद लिप्सा और स्वार्थ की भूख की भेंट चढ़ जाएगा । किसे मालूम था कि दुनियां के सबसे पवित्र महान् आत्मा के अनुयायी अपनी अयोग्यता से मानव जाति को अन्धकार में भटकने के लिए छोड़ देंगे ।

और किसे ज्ञात थी विधि की यह विडंबना कि एक तपस्वी-योगी और महर्षि के चलाए आन्दोलन पर वकील, बाबू और राजनैतिक सत्ता के भूखे नेता अधिकार कर सब कुछ चौपट कर देंगे ?

आज मन पर बहुत चोट लगी है । दशहरे की शाम को राजधानी में ६० मील का चक्कर लगा कर लौटे हैं । रात्रि के ग्यारह बजे हैं नींद भी आ रही है, पर फिर भी सोने को मन नहीं करता ।

एक मित्र ने शाम को एक पत्रिका दी, जिसमें डिवाइन लाइट मिशन के प्रचार की विदेश के केन्द्रों की विस्तृत सूचना थी । ढोंग-झूठ और धोखे से दुनियां को बहकाने की बेमिसाल मिसाल सामने है ....

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कितना विचित्र है कि अज्ञान पंख फैलाकर फैले और ज्ञान सिमटता जाए। आज हजारों रावण देश में जले, पर अधर्म के रावण को कौन जलाएगा ?

कितने पाप, कितने ढोंग, कितनी ठगी धर्म के नाम पर देश-विदेश में बढ़ रही है किसे चिन्ता है ? आर्य समाज स्थापना शताब्दी आ रही है, पर कोई सिर मिला कर बैठने को तैयार नहीं। पैसा इकट्ठा कर एक शानदार जलसा मना लेना और बात है और इस ५५ करोड़ के देश में दयानन्द के नाम और काम को गुंजाना और बात है।

सच कहें तो वे हमें दुश्मन समझते हैं, मौन रहें तो लक्ष्य मिट रहा है समझ नहीं आताकि किया क्या जाए ?

आर्य समाज के कर्णधार सारे भेद भुलाकर यदि आठ दिन के लिए एक साथ बैठ कर गम्भीरता से सोचें और कुछ निर्णय कर काम में जुट जाएं तब तो कुछ आशा की जा सकती है अन्यथा जो रफ्तार चल रही है, उसे बदलना कठिन है।

उपदेशक, विद्वान और संन्यासी एक जगह बैठें, आर्य समाज के वह नेता जो आर्य समाज के लिए ही सोचते हैं, आगे आएं—और कोई ऐसा मार्ग निकालें जिस पर चलकर देश और विदेश में वैदिक विचारधारा की गूंज गुँजायी जा सकती हो।

काम बहुत बड़ा है और समय कम। तूफान का जोर इतना है कि सभी के पांव लड़खड़ा गए हैं फिर भी अपनी सौवीं वर्षगाँठ पर—हम क्या ऋषि दयानन्द की तरह फिर से केवल प्रभु के विश्वास पर धर्म ध्वजा नहीं उठा सकते ?

अज्ञान के अंधेरे में जब आँधी का वेग पूरे बलपर हो दीपक जलाना साधारण व्यक्ति का काम नहीं है। मौत की छाया में जीवन का गीत प्रभु भक्त ही गा सकता है।

इसलिए आज हम अपने अन्तर की प्राण शक्ति से अपने उन साथियों को पुकारते हैं जो सारे अन्धड़ को समाप्त कर धरती पर वेद पताका फहराने का व्रत ले सकें।

हमारी पुकार यदि सर्वोच्च संगठन के अधिकारी वर्ग के कानों तक पहुंच सके तो हम उन से करबद्ध सादर अनुनय कर याचना करेंगे कि वे आज की निर्णायक घड़ी में कर्त्तव्य बोध को हृदयंगम करें। समस्त आर्य शक्ति को एकत्र कर निर्णय करें कि आर्यसमाज शताब्दी कैसे मनायी जाए ?

अपने चन्द साथियों के साथ पार्टी बाजी के आधार पर आप के सम्मेलन भले ही हो जाएं देश-विदेश में फैलते अधर्म को समाप्त करने का उपक्रम आप न कर सकेंगे।

मारीशस में सम्मेलन कर लीजिए या अमरीका में, जब तक धर्म की सोई आत्मा को जागृत कर अधर्म को चुनौती नहीं देंगे, धर्म नहीं फैलेगा।

ये और वो का प्रश्न नहीं, प्रश्न है दयानन्द के दिव्य स्वप्नों का, प्रश्न है वेद का, धर्म का, इसके लिए सभी ऋषि-भक्त सौगन्ध खाकर, व्रत लेकर प्रेम के मन्त्र और त्याग के अस्त्र से युक्त हो विजय वरण का दृढ़ निश्चय करें, यह समय की माँग है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य समाज शताब्दी का आयोजन ग्राम-ग्राम-गली-गली और डगर-डगर में होना चाहिए। देश और विदेश के प्रत्येक व्यक्ति तक आर्य समाज का कर्तव्य और लक्ष्य पहुँचाने की भावना के अंकुर सभी के हृदय में उठें और श्रद्धा से, उमंग से, प्यार से, तेज से, त्याग से, तप से हम दयानन्द की सेना सजाएं।

कहीं बाल योगेश्वर, कहीं रजनीश, कहीं साईं बाबा, कहीं यवन, कहीं आनन्द मार्गी, कहीं भौतिकवादी नास्तिक, कहीं ईसाई और कहीं सैक्यूलर ऋषि दयानन्द की विचारधारा का नामो निशान मिटाने के साधन जुटा रहे हैं।

हमारा प्रश्न आपके हृदय से है, आप के उस मन से है जिसमें कलुष न हो ? बताओ ! धर्म की जय के लिए आप क्या कर रहे हो ? बताओ अधर्म मिटाने के लिए आपने क्या सोचा है ? बताओ संगठन का बिगुल कब बजेगा, कब सजेगी, दयानन्द की सेना ?

जानता हूँ उत्तर आप के पास नहीं है। होगा भी तो आप देंगे नहीं, फिर भी रात्रि के अन्धकार में प्रकाश की बाट देखते हुए हम आप से राह बदलने का आग्रह करते हैं।

आर्य समाज की जय, धर्म की जय, सत्य की जय, ऋषि दयानन्द की जय के लिए जलाओ ज्ञान का दीपक—ताकि अंधेरा मिटे—सूरज उगे और धरती हर रोज दीवाली मना सके।

हिन्दुओ ! संगठित हो जाओ !

जिसे अभिमान हो रहा राम पर, कृष्ण पर, वेद पर, उपनिषदों पर, दर्शन शास्त्र और भारत की संस्कृति पर, वह सभी राष्ट्रीयता की और भावना की दृष्टि से हिन्दू हैं।

भले ही सिद्धान्त की दृष्टि से आप हमसे सहमत न हों, किन्तु व्यवहार की दृष्टि से आर्यत्व के सब से अधिक समीप 'हिन्दू' हैं। हिन्दू शब्द से जो ध्वनित होता है उस में वह पावन परम्परा ओतप्रोत है जिसे हम आर्य परम्परा का वर्तमान रूप कह सकते हैं।

आज इस पावन परम्परा को समाप्त करने का षड़यन्त्र पूरे बल से चल रहा है। मुसलमान-ईसाई-कम्यूनिस्ट और अनेक विजातीय तत्त्व हिन्दू धर्म की आधार शिला को नष्ट करने पर तुल गए हैं। नए-नए ढोंग, नए-नए अवतार, ईसाई राज्यों के षड़यन्त्र स्वरूप हिन्दू धर्म की जड़ों पर कुल्हाड़ा चला रहे हैं।

आर्य परम्परा की पावन गंगा में इतना गंदला पानी मिलाया जा रहा है कि असली गंगाजल की खोज कठिन हो गई है। वेद, शास्त्र और दर्शन के स्थान पर नए-नए गुरु-गुरुओं के ढोंग सभी कुछ जलाने में लगे हैं।

ऐसी स्थिति में आज आवश्यक हो गया है कि धर्म के सत्य स्वरूप की रक्षा के लिए हिन्दू मात्र संगठित हो जाएं।

चारों धामों के चार शंकराचार्य, मठों और गद्दियों के सारे महन्त सनातनी, आर्यसमाजी, सिक्ख और वे सभी जिन्हें अपने हिन्दू होने का गर्व है फिर संगठित हों और सभी एक स्वर से वेद के नाम पर एक हो जाएं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

'वेद' के अर्थ और भावों पर विवाद के स्थान पर सभी हिन्दू 'वेद' को धर्म-ग्रंथ के रूप में स्वीकारें और बाइबिल-कुरान के आक्रमण से मोर्चा लें।

एक ईश्वर और एक मार्ग के पथिक हम एक होकर "ओ३म्" पताका सर्वत्र लहराएं। भुला दें छोटे-छोटे भेदों को, मिटा दें सारी भेदभाव की दीवारें और एकता का मन्त्र सभी मिलकर गुंजाएं।

'वेद' हमारा धर्मग्रंथ, "ओ३म्" हमारा उपास्य और राम-कृष्ण हमारे आदर्श प्रतीक बनें। हम सब समझ लें कि हमारे धर्म, संस्कृति और परम्परा पर इतना बड़ा संकट कभी नहीं मंडराया जितना आज छाया है। अनेक रावण सेनाएँ सजा धर्म-सीता को हरने चढ़ आए हैं।

रक्षा का उपाय है संगठन। आज छोटे-छोटे भेदों पर लड़ने का नहीं एक होने का समय है। संसार को सत्य-धर्म की शिक्षा देने और ईसाइयत व इस्लाम के आक्रमण से रक्षा का मार्ग है संगठन।

फूट रही तो भाग्य फूट जाएगा—एकता ही वह मंत्र है जिससे हम सारी आसुरी सेना का सामना कर विजय वरण कर सकते हैं।

भेद भुला कर एक बनो अब, एक बनो धरती को जीतो !
जीवन की प्रेरक वीणा का, आमन्त्रण स्वीकार करो प्रिय !!

आर्यसमाज शताब्दी कैसे मनायें ?

शताब्दी मनाने की जो योजनाएं सामने हैं उनकी सफलता और व्यवहारिकता संदिग्ध है। यदि मान भी लिया जाए कि योजना पूरी तरह सफल हो जाएगी तब भी इससे आर्यसमाज को कोई लाभ होगा, इसकी संभावना नहीं।

सबसे बड़ा निर्णायक पक्ष यह है कि—आयोजन केवल बम्बई में हो या सारे संसार में ? हमारे विचार में कम से कम भारत में और विदेशों में भी जहाँ आर्य-समाज के केन्द्र हैं, शताब्दी मनाने का कार्यक्रम तैयार होना आवश्यक है।

और इसके लिए आवश्यक है कि हमारे सर्वोच्च संगठन के अधिकारी—जो शताब्दी समारोह का संचालन करें—

१. वे पूर्ण समय देने वाले हों।

२. उनकी निष्ठा-आस्था केवल आर्यसमाज के लिए हो और वे सारे राज-नैतिक-व्यक्तिगत कामों को छोड़कर मई १९७५ तक शताब्दी समारोह के अतिरिक्त और कोई काम न करें।

३. आर्यसमाज के सभी पक्ष सारे भेदभाव भुला इस समारोह आयोजन में आमंत्रित किए जाएं।

शताब्दी समारोह आयोजन के लिए वे सभी संन्यासी, उपदेशक, कार्यकर्ता जो भी २ वर्ष का समय दे सकें, उन का एक सम्मेलन बुलाया जाए और सारे देश-विदेश को बांटकर—केन्द्र से समारोह आयोजन का संचालन किया जाए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हमारा उद्देश्य एक या दो बड़े सम्मेलन करना न होकर संसार में आर्यसमाज की गूंज गुंजाना होना चाहिए।

सब कुछ हो सकता है यदि केन्द्र में प्राण हों। स्वार्थ भावना और दलबन्दी से ऊपर उठकर "आर्यसमाज और ऋषि दयानन्द" की जय के लिए कार्य करने का निश्चय करें।

आलोचना प्रत्यालोचना से काम नहीं चलेगा। आवश्यकता है आत्म निरीक्षण और कार्य की। जो काम पिछले २०० वर्षों में न हो सका हो वह आगामी ढाई वर्ष में करने का व्रत लेकर हम संसार को नयी राह, नया सन्देश दें।

धर्म ईश्वर और सत्य मार्ग दर्शन की बढ़ती भूख में भटकता हुआ मनुष्य नकली वस्तुएं खाकर पेट भर रहा है। जिस दिन हम असली माल लेकर बाजार में पहुंचेंगे सब उसे लेने टूट पड़ेंगे।

आर्य नेताओ! आत्म विश्वास लेकर विश्व विजय की तैयारी करो।

—भारतेन्द्र नाथ

❋

शोक.......समाचार

"जन-ज्ञान" के मान्य संरक्षक और वेद प्रचार के अपूर्व साधक नागरथ पेन्ट्स प्रा० लि० के स्वामी श्री कृष्ण कपूर का २० अक्टूबर को कानपुर में देहान्त हो गया। उनके जाने से आर्यसमाज और "दयानन्द संस्थान" की अपूरणीय क्षति हुई है। रुग्ण होने से कुछ घण्टे पूर्व आपने वेदभाष्य के लिए १० सहस्र रुपये दिलाने का आश्वासन दिया था। पिछले ३ वर्षों में आपने हजारों रुपया स्वयं भी दिया था और परिचितों से भी दिलाया था। हम दिवंगत के प्रतिश्रद्धा से नत हैं और उनके परिवार के दुःख में दुःखी—

सम्पादक—

इस अंक के चित्र

प्रथम पृष्ठ का चित्र आर्यसमाज के संस्थापक महर्षि दयानन्द सरस्वती का है। आप पर पूर्ण लेख पढ़िए—पृष्ठ १७ पर।

आवरण के द्वितीय पृष्ठ का चित्र लाला लाजपतराय का है। इनका जीवन सभी को नयी प्रेरणा दे सकता है।

आवरण के तृतीय पृष्ठ पर आदर्श संन्यासी आर्यसमाज के लौह पुरुष स्वामी स्वतंत्रतानन्द जी महाराज का चित्र है। इन का जीवन दर्शन हमें नयी शक्ति दे सकता है।

卐

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मोक्ष-मार्ग

पातंजलमहाभाष्यचरकप्रतिसंस्कृतैः ।
मनो वाक् काय दोषाणां हर्त्रेऽहिपतये नमः ॥

दयार्द्र महर्षि पतंजलि ने जन साधारण के उद्धार के लिए मन, वाणी और देह दोषों को धोने वाले पातंजलयोग, व्याकरण महाभाष्य, और आयुर्वेदीय चरक ग्रन्थों की क्रमशः रचना की है, इस कृपा के लिए कृतज्ञता पूर्वक हम श्रद्धांजलि चरणों में भेंट रूप से धरते हैं ।

चरक में यद्यपि कायिक रोगों की चिकित्सा को ही मुख्यता प्राप्त है परन्तु प्रसंग वशात् निवृत्ति मार्ग का भी सुन्दर व्याख्यान किया, वह सन्दर्भ मुमुक्षुजनों के परम कल्याणार्थ इन सूत्रों में है ।

क्षीणस्नेहो निशान्तेषु निवृतो जनसंहतेः ।
आत्मन्यासरुचिर्योगी निर्वाणं याति दीपवत् ॥

योगीराज स्व० श्री जगन्नाथ पथिक द्वारा संग्रहीत यह अनमोल रत्न 'जन-ज्ञान' सदस्यों को सादर अर्पित—संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

नात्मार्थं नापि कामार्थं अथभूतदयां प्रति

—चरक

१—निवृत्तिरपवर्गः

निवृत्ति को ही अपवर्ग—मोक्ष कहते हैं। प्रवृत्ति ही संसार की जननी है। प्रवृत्ति मन की वह भावना है जो प्रकृति वा कारण रूप पदार्थ को विकार की आकृति में परिणत करने के लिए निरन्तर बाधित करती रहती है। एक मट्टी की ईश्वरीय रचना—वृक्ष, लता, फूल, फल, औषधि, पत्थर, लोहा सोना आदि मूलभूत कारण पदार्थों को विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ, वस्त्र, आभूषण, पात्र—बर्तन, मकान आदि बन्धन के हेतु नानाविधि सामग्री के रूप में यही—मानस भावना जन्म देती है। इसी भांति अन्य भूतों को अपने साथ जोड़ने के लिए इसी प्रवृत्ति से प्रेरित होकर ही मनुष्य ने अपनी सुविधा के लिए अन्य कई रूपों में भी बदल डाला है। यह क्रम यहीं पर परिसमाप्त नहीं हो जाता, वरन् वेगवती सरिता नदी के प्रबल प्रवाह के समान बढ़ता ही जाता है—निरन्तर बढ़ता ही जाता है।

यदि मनुष्य इस प्रवाह के विपरीत मुख करके, पीछे को लौट पड़े, तथा अनावश्यकताओं से मन हटाकर, आसक्ति को त्यागते हुए, नई सृष्टि को जन्म न दे तो इस क्रमपूर्वक त्याग-भाव अर्थात् वैराग्य की पराकाष्ठा को ही अपवर्ग—मोक्ष-आत्म-

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्थिति आदि शब्दों से कहेंगे। यही परमपद है—शान्त धाम है—यही अक्षर ब्रह्म—आनन्द पद, नामों से निर्दिष्ट है—

२—तत् परं, प्रशान्तं तत्तु तदक्षरं, तद्ब्रह्म, समोक्षः।

वही परमपद, शान्तिमय धाम, अक्षय, ब्रह्म, और मोक्ष आदि नामों से निर्देश किया जाता है।

३—तत्र मुमुक्षूणामुदयानि व्याख्यास्यामः।

उदयनानि। अब महाभाग मोक्षार्थियों के लिए उपाय दर्शाते हैं।

४—तत्र लोकदोषदर्शिनो मुमुक्षोरादित एवाचार्य्याभिगमनम्।

संसार से जो अपना पीछा छुड़ाना चाहे, तो उसकी अभिप्सा, केवल मात्र ग्रन्थों के स्वाध्याय तथा गुरुजनों के उपदेश श्रवण मात्र से उत्पन्न हुई न होनी चाहिए, अपितु लोकमत विषय दोषों का उसे कई बार यथार्थ रूप से अनुभव हो चुकना भी आवश्यक है। उसे यह स्थिर वैराग्य ही इन आगे कहे जाने वाले उपायों पर आचरण करने के लिए उत्साहित तथा उद्देश्य में सफल बनाने के लिए हेतुरूप होगा।

जो निवृत्ति मार्ग के कुशल उपदेष्टा हों, साधक की प्रवृत्ति को निज प्रभाव से अपने अनुकूल बना सकें, तथाच ज्ञान वैराग्य की सजीव मूर्ति हों, ऐसे आचार्य में साधक की अटूट श्रद्धा, भक्तिभाव का उद्रेक होना अत्यावश्यक है—यही तरिणी है।

५—तस्योपदेशानुष्ठानम्।

ऐसे गुरुवर के प्रत्येक वचन को पूर्ण सामर्थ्य से, यथार्थरूप में, तत्काल पालन करना शिष्य अपना धर्म समझे।

६—अग्नेरेवोपचर्य्या।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अग्नि के समान—आगे ले जाने वाले पथप्रदर्शक, आचार-विचार सिखाने वाले गुरु की तन मन से सेवा करे।

७–धर्मशास्त्रान्तगमनं, तदर्थावबोध, स्तेनावष्टम्भ:, तत्र यथोक्ता क्रिया।

पूर्व पठित धर्म शास्त्रों को आचार्य के सत्संग से संगत–समास करे—अर्थात् शङ्का समाधान पूर्वक शास्त्रों के यथार्थ भाव को समझे, समाधान से तृप्त होकर असंशयात्मा बने, शास्त्र में सश्रद्ध हो, शास्त्र वचनों को प्रमाण करके शास्त्रोक्त सब कर्त्तव्य कर्म को श्रद्धा से यथाविधि पाले।

८–सतामुपासनमसतां परिवर्जनमसंगतिर्दुर्जनेन।

निवृत्ति मार्ग के पथिक भद्रजनों के पास ही उठे बैठें, उन से ज्ञान गोष्ठी करना अपना ध्येय बना लें, जो निवृत्ति मार्ग गामी नहीं हैं तथा विघ्नकारक भी नहीं हैं उनसे उपेक्षा त्याग भाव को प्रधानता दें। और प्रवृत्ति मार्ग में कौन—निवृत्ति में विघ्नभूत लम्पटों का तो वाङ्मात्र से भी स्पर्श न होने दें—दर्शन से भी सदा बचें, उनसे सर्वदा-सर्वथा पृथक् ही रहें।

९–सत्यं, सर्वभूतहितमपुरुषमनति काले, परीक्ष्य-वचनम्।

वाणी से जो कुछ बोलें वह परीक्षित सत्य हो, प्राणिमात्र का हित साधने वाला हो, मधुर शब्दों में उसे बोलें, 'क्या यह समय के अनुकूल है' यह भी जांच लेना आवश्यक है।

१०–सर्वप्राणिषु चात्मन्येवावेक्षा। आत्मनी वावेक्षा।

साधक जैसे अपनी देख-रेख तथा सुख साधनों में चेष्टा करता है—सचेष्ट रहता है वैसा ही अन्य प्राणियों से भी बर्ते, आत्मन: प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

११–सर्वासामस्मरणमसंकल्पनमप्रार्थनमभिभाषणं च स्त्रीणाम् ।

किसी भी स्त्री के पाने की लालसा, भेंट–सम्मिलन की कामना, वार्तालाप तथाच तत्सम्बन्धी विशेष घटनाओं की स्मृति आदि सबको त्याग दे अर्थात् मनोगत स्त्रीमात्र के राग विशिष्ट विचारों को सर्वथा आने ही न दे–त्याग दे। आठ प्रकार के मैथुन मन, वचन, कर्म से त्याग दे।

१२–सर्वपरिग्रहत्यागः ।

अपनी आवश्यकताओं के मिष–बहाने से जीव ने जितने पदार्थ संग्रह किए हुए हैं–ये परिग्रह कहाते हैं। मनुष्य राग द्वारा इनमें बंधा रहता है, अतः इन पदार्थों में बने राग को, तथा पदार्थों को सर्वथा त्यागने में सचेष्ट रहे।

१३–कौपीनं प्रच्छादनार्थम् ।

वस्त्र सम्बन्धी बन्धन को इतना ढीला कर ले कि ओढ़ने को कन्था तथा धारण के निमित्त कौपीन मात्र रहे। अर्थात् परिधान तथा आच्छादन में–सर्वस्व कौपीन ही रह जाए।

१४–धातु रागनिवसनम् ।

सौन्दर्य-शोभार्थ स्वर्ण आदि धातु तथा रंगीन वस्त्र त्याग दे तथा अपने आश्रम की सूचना के निमित्त गेरू वा कषाय रंग से वस्त्र रंग ले। अथवा सोना-चाँदी आदि धातु और सुन्दर रंगीन वस्त्र त्याग दे।

१५–कन्था सीवनहेतोः सूची पिप्पलकम् ।

छोटी बड़ी गृहस्थ की विविध सामग्री को त्याग दे, केवल सुई धागा कन्था सीने के लिए साथ ले ले।

१६–शौचाधानहेतोर्जलकुण्डिका ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शौचादि शुद्धि के निमित्त केवल जलपात्र, तथा

१७–दण्डधारणम् ।

शस्त्रास्त्रों के स्थान में दण्ड मात्र ही हाथ में रक्खे ।

१८–भैक्ष्यचर्यार्थं पात्रम् ।

विविध भाण्डाडम्बर को त्याग कर भिक्षापात्र ही रक्खे ।

१९–प्राणधारणार्थमेककालमग्राम्यो यथोप्पन्नोऽभ्यवहारः ।

जीवन रक्षा के लिए उचित मात्रा में एक समय ही भोजन करे, परन्तु वह भोज्य पदार्थ ग्राम्य-अशिष्ट-अस्वास्थ्यकर तथा अपवित्र न हो, इसे अवश्य ध्यान में रख ले—अन्यथा फिर जैसा भी बना हो—पर सात्विक हो, और सुविधा से प्राप्त हो सके उसे ननुनच किए बिना ग्रहण करे ।

२०–श्रमापनयनार्थशीर्णशुष्कपर्णतृणास्तरणोपधानम् ।

थकावट को दूर करने के लिए, वृक्षों से स्वतः पतित सूखे पत्तों तथा सूखे घास से बिछौने और तकिए का कार्य साध ले—चटाई आदि से काम चला ले ।

२१–ध्यानहेतोः कायनिबन्धनम् ।

अधिक काल तक ध्यान की स्थिरता के लिए आसन को स्थिर करे, अथवा शरीरगत किसी केन्द्र पर ध्यान जमाए, वा योग—पट्ट का प्रयोग कर ले ।

२२–वनेष्वनिकेतवासः ।

वन में रहे पर वहां भी पक्के घर न बनाए । पर्ण कुटीर वा गुफा आदि अति शीतोष्ण वर्षा से बचने को बना ले ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

२३–तन्द्रा निद्राऽऽलस्यादि कर्मवर्जनम् ।

शरीर को तथा मन को कर्त्तव्य कर्मों से बचाना—तन्द्रा तथा आलस्य है। इन्हें तथा अतिनींद आदि तम प्रधान चेष्टाओं को बलपूर्वक त्याग दे।

२४–इन्द्रियार्थेष्वनुरागोपतापनिग्रहः ।

इन्द्रियों के विषय रूप, रस आदि द्वारा जो राग-मोह तथा द्वेष-भावनाएं जाग उठती हैं उन्हें रोके अथवा जागृत ही न होने दे। अर्थात् सब वस्तुओं से यथार्थ उपयोग लेता हुआ भी उपेक्षाबुद्धिः अनासक्ति भाव रक्खे—उनसे सदा अछूता रहे।

२५–सुप्तस्थितगतप्रेक्षिताहारविहारप्रत्यङ्गचेष्टादि-केष्वारम्भेषु स्मृतिपूर्विका प्रवृत्तिः ।

सोना, उठना, बैठना, चलना, फिरना, खाना, पीना, देखना सुनना आदि समस्त क्रियाओं को करते समय इस बात को न भूले, प्रत्युत 'मैं आत्मा हूं मेरा शरीर से कोई सम्बन्ध नहीं, यह सब क्रिया कलाप बुद्धि द्वारा सम्पादित हो रहा है जो कि भोगवश शरीर रक्षा के लिए हो है, वह भी यथार्थ ज्ञान की परिसमाप्ति तक, अतः मुझे इनमें हर्ष विषाद न मानना चाहिए।' ऐसी स्मृति पूर्वक सदा प्रवृत्ति रहे।

२६-सत्कारस्तुतिगर्हावमानक्षमत्वम् ।

किसीप्रकार की भी शारीरिक सेवा अर्थात् अनुकूल साधनों से विविध प्रकार के सुख पहुंचाना सत्कार है, तथा प्रतिकूल चेष्टाओं से पीड़ित करना अवमान है, एवं किसी के शुभ कार्यों तथा सद्भावनाओं का सुन्दर वर्णन करना स्तुति, तथा ग्राम्य—असभ्य भावों का प्रकाशन गर्हा होती है, इन्हें अपने प्रतिकूल अनुभव करके कष्ट न माने, और अनुकूलता में—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सत्कार से यद् किंचिद्मात्र भी सुख न मानें—अर्थात् इन्हें अपने प्रति अनुभव करने का जब-जब अवसर आए तब-तब अपने स्वभाव में कोई भी अन्तर न आने दे।

२७–क्षुत् पिपासाऽयासश्रमशीतोष्णवातवर्षासुखदुःख-संस्पर्शसहत्वम्।

भूख, प्यास, कठिनाई, थकावट, सर्दी, गर्मी, आंधी, वर्षा—सुख, दुःख, दैवात् आए इनमें से एक, वा सबके आघात का वीरता से सामना करे, धैर्य को न त्यागे, अपितु साहस से सहे।

२८–शोकदैन्यमानोद्वेगमदलोभरागेर्ष्याभय–क्रोधादिभिरसञ्चालनम्।

एवं दुःखोत्पादक मानसिक विघ्नों—चिन्ता, असमर्थता, अभिमान, घबराहट, लोभ, मोह, डाह, भय, क्रोधादि ध्येय से पतित करने वाले कुत्सित वेगों को, दृढ़पद व्यक्ति सदा ही दमन करता रहे और अपने कर्त्तव्य पथ से विचलित न हो।

२९–अलंकारादिषूपसर्गसंज्ञा।

वस्त्राभूषणादि समस्त श्रृंगार तथा सौन्दर्यवर्धक सामग्री तथा साधनान्तरों को अनर्थ—पतन का हेतु समझे।

३०–लोकपुरुषयोः सर्गादिसामान्यावेक्षणम्।

यह मनुज शरीर भगवान् की विशाल सृष्टि का सर्वांगीण लघुसा चित्रपट—रूप है। इसमें सूक्ष्मरूप से पांचों महाभूत इन्द्रियों के रूप में दिव्य शक्तियां हैं, बाल्यादि अवस्थाएं कृत-युग द्वापर आदि हैं, मृत्यु जगत् के प्रलय काल के समान हैं, जैसे सूर्य, चन्द्र, पृथिवी आदि विराट्‌रूप प्रभु के अंग हैं और इस विशाल विश्व शरीर के अधिष्ठातृ देव स्वयं प्रभु हैं एवमेव यह आत्मा भी सृष्टि के नियन्ता प्रभु के सदृश, इस मनुज

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शरीर का संचालन कर रहा है—आँधी, वर्षा, तुषार, उलकापात, अग्निदाह आदि अनेक उपद्रवों के होने पर भी भगवान् दुःखी नहीं होते, प्रलय होने पर भी हाहाकार नहीं करते, तो वात, पित्त, कफ़ के प्रकोप से, तथा अन्यान्य रोगों तथा च मृत्यु के समय—जो कि शरीर रूपी सृष्टि के उपद्रव हैं यह आत्मा दुःखी क्यों—हो ? आत्मा भी तो प्रभु के समान सब कुछ करता हुआ भी अकर्त्ता है, इन सब परिवर्त्तनों से इसका कुछ भो तो सम्बन्ध नहीं।' इस प्रकार प्रतिक्षण यदि मोक्षार्थी, इस सामान्य समानता की भावना से सब घटनाओं का द्रष्टा बना रहे और इनमें लिप्त न हो तो वह क्लेशों से सदा मुक्त रह सकता है—और आनन्दमग्न रह सकता है।

३१—कार्यकालात्ययभयम्।

जिस कार्य के लिए जो समय निश्चित कर लिया है उस से न चूके, इसका सदा ध्यान रक्खे—यही युक्त चेष्टा है।

३२—योगारम्भे सततमनिर्वेदः।

योगानुष्ठान में कभी शिथिल न हो। वरन् उसे श्रद्धा, उत्साहपूर्वक, निरन्तर आनन्दानुभव पूर्वक करे।

३३—सत्वोत्साहोऽपवर्गाय।

मोक्ष प्राप्ति के लिए मानस उल्लास को सदा स्थिर रक्खे।

३४—धी-धृति-स्मृति-बलाधानम्।

आत्मा, मन, बुद्धि, और शारीरिक बल को स्थिर बनाए रहे—क्षीण न होने दे। शरीर माध्यं खलु धर्म साधनम्।

३५—नियमनमिन्द्रियाणां चेतसि चेतस-आत्मन्यात्मनश्च।

विषयों से हटाकर इन्द्रियों को चित्त के, चित्त को आत्मा के, और आत्मा को प्रभु के आधीन कर दे।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

३६—धातुभेदेन शरीरावयवं संख्यानमभीक्षणम् ।

'यह शरीर त्वचा, नस, नाड़ी, मांस, रुधिर, वसा, अस्थि, वीर्य, मल-मूत्र, पीप आदि से निर्मित है। जिसे मनुष्य सुन्दर तथा पवित्र समझता है पर वह तो अपवित्रता—और अस्पृश्यता का घर है, इसमें सौन्दर्य नाम की वस्तु तो आत्मा के विना कोई है ही नहीं' इत्यादि विपरीत भावनाओं के बारम्बार के चिन्तन से वैराग्य भावना को दृढ़ करे, जिससे कि सौन्दर्य के भ्रम से इसकी ओर आकृष्ट होकर पतन का भय ही न रहे। आमा के सम्बन्ध से ही शरीर तेजस्वी—चमकीला-हृष्ट पुष्ट—सुन्दर बना है और आकर्षक है। आत्मा जब इसे त्याग देती है तो निस्तेज होकर गलने सड़ने लगता है—भयंकर और भूत बन जाता है फिर इसे स्पर्श करने का साहस भी नहीं होता। इसका अन्त भी भस्मान्त है।

३७—सर्वकारणवद् दुःखमस्वमनित्यमित्यवगमः ।

कारण वाले उत्पत्तिशील सब पदार्थ, आत्मा के लिए अनुपकारी—दुःखदाई—तथा अस्थिर हैं—ये आत्मा का कुछ भी कल्याण वा उपकार नहीं कर सकते, प्रत्युत निकटतम स्थित शरीर की भांति बन्धन तथा दुःख का कारण हैं—ये भावनाएं चित्त में दृढ़ करता रहे।

३८—सर्वप्रवृत्तिष्वघसंज्ञा, सर्वसंन्यासेषु—सुख मित्यभिनिवेशः ।

प्रत्येक प्रवृत्ति—संसार सम्बन्धी आसक्ति युक्त कार्य को पाप, तथा प्रत्येक अनासक्त—निष्काम, निवृत्ति कर्म—त्याग में ही सुख-शान्ति-आनन्द लाभ की आस्था को दृढ़ करे।

३९—एष मार्गो मोक्षाय, अतोऽन्यथा बध्यते ।

यही मार्ग मोक्ष का है, इसके विपरीताचरण में बन्धन है।

४०—इत्युदयानि व्याख्यातानि ।

यह मोक्ष के साधनों का व्याख्यान समाप्त हुआ ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रार्थना-पुष्पांजलि

—पं० चन्द्रभानु जी सिद्धान्तभूषण

पुष्टिदाता प्रभु !

१–ओं अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवेदिवे ।
यशसं वीरवत्तमम् ॥ ऋग्वेद मण्डल १। सूक्त १। मन्त्र ३

हे महादानी (अग्ने) आगे ले जाने वाले ईश्वर ! आपकी कृपा से स्तुति करने वाला मनुष्य (रयिम्) उस विद्या आदि तथा सुवर्ण आदि धन को अवश्य प्राप्त होता है कि जो धन प्रतिदिन (पोषमेव) महापुष्टि करने वाला और सत्कीर्ति को बढ़ाने वाला है।

हे भगवन् ! आपकी कृपा से मैं वैसे सुवर्ण रत्न आदि तथा चक्रवर्ती* राज्य और विज्ञान रूप धन को प्राप्त होऊं जिसके द्वारा विद्या, शूरवीरता धैर्य, चातुर्य, बल और पराक्रम आते हैं तथा दृढ़ अंग वाले, धर्मात्मा, न्यायप्रिय तथा अत्यन्त वीर पुरुष प्राप्त होते हैं। हे प्रभो ! आपकी कृपा से मैं सदैव धर्मात्मा होके अत्यन्त सुखी रहूं।

The Mightiest Donor

God Radiant, bless us, your devotees, with power day by day to attain immense treasures of rare wealth, supreme knowledge and benign leadership, so as to fortify us with virtues of the highest learning, chivarly, tolerance, wisdom, potency and fellow feelings, Blessed with these virtues, we seek thy favour, O Lord, to lead a life of piety and prosperity.

समर्पण की महिमा

२—ओं यदङ्ग दाशुषे त्वमग्ने भद्रं करिष्यसि ।
तवेत् तत्सत्यमङ्गिरः ॥ ऋग्वेद म० १। सू० १। मन्त्र ६।

---

*चक्रवर्ती राज्य का अभिप्राय दूसरे देशों पर अपना आधिपत्य स्थापित करना नहीं किन्तु अपने समान ही उनको धर्मयुक्त तथा न्यायप्रिय बनाये रखने के लिये उन पर अनुशासन स्थापित करना है। शासन उनका ही उनके देश में बना रहेगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हे (अङ्ग) मित्र ! (दाशुषे) जो आपको आत्मा आदि दान करता है, आप के कार्यों के लिये अपना सर्वस्व समर्पण कर देता है उसको (भद्रं) सांसारिक और पारमार्थिक सुख अवश्य देते हो।

हे (अङ्गिरः) प्राणप्रिय ! (तव सत्यं इत्) यह आपका सत्यव्रत है कि स्वभक्तों को परमानन्द देना, यही आपका स्वभाव हमको अत्यन्त सुख कारक है। हम इससे सदैव आशा सम्पन्न बने रहते हैं।

आप मुझको ऐहिक (इस लोक का) और पारमार्थिक (आध्यात्मिक तथा पारलौकिक) इन दोनों सुखों का दान शीघ्र दीजिये जिससे सब दुःख दूर हों, हमको सदा सुख हो रहे।

The Bliss of Surrender

O Lord, Giver of Vigour and Vitality, it is your Divine supreme law that you confer bliss and beatitude on those who surrender their all to you. And this is the beacon of peace and hope for us all.

Give me, my Bounteous God, peace on this earth and in the life beyond.

प्रभु से पुकार

३—ओं तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं
धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे
रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये॥

ऋ० म० १। सू० ८९। मन्त्र ५

हे सबसे ऊपर विराजमान् स्वामिन् ! आप ही चर और अचर जगत् के (ईशानम्) रचने वाले हो। (धियं जिन्वम्) जो बुद्धि सब विद्याओं से युक्त हो सकती है तथा विज्ञान स्वरूप बन सकती है उसको आप प्रकाशित करने वाले हैं एवं सबको तृप्त करने वाले हैं। (पूषा) आप सब के पोषक हो, उन आपको हम (नः अवसे) अपनी रक्षा के लिये (हूमहे) पुकारते हैं। (यथा वेदसां वृधे असत्) जिस प्रकार से आप हमारे विद्यादि धनों की वृद्धि तथा रक्षा करने के लिये (अदब्धः रक्षिता) किसी से भी न दबने वाले होकर रक्षा करने में तत्पर हो, वैसे ही कृपा करके आप (स्वस्तये) हमारी स्वस्थता के

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

लिए (पायुः) निरन्तर रक्षक अर्थात् विनाश के निवारण करने वाले हो ।

आप से पालित हम लोग सदैव उत्तम कामों से उन्नति और आनन्द को प्राप्त हों ।

May He Be Our Saviour

O, Lord Divine, you are the Supreme Controller, the Creator of all that is movable and immovable, the Enligtened of Intellect, the Sustainer and Nourisher of all. We invoke thee, our Saviour, for your blessings for continual advancement and preservation of knowledge and righteousness. you are the ever vigilant guardian of our well-being.

So protected and nourished by you, we may ever live with peace and piety.

दुष्ट से सुरक्षा

४—ओं पाहि नो अग्ने रक्षसः पाहि धूर्त्तेरराव्णः ।
पाहि रीषत उत वा जिघांसतो बृहद् भानो यविष्ठ्य ॥

ऋग्वेद म० १ । सूक्त ३६। मन्त्र १५

हे सब शत्रुओं के दाह करने वाले अग्ने ! परमेश्वर ! (रक्षसः नः पाहि) राक्षस हिंसाशील दुष्ट स्वभाव वाले देह धारियों से हमारी रक्षा करो। (धूर्त्तः अराव्णः) जो धूर्त हो अथवा जो कृपण हो उस मनुष्य से भी हमारी रक्षा करो, हमारे अन्दर इनके संसर्ग से धूर्त्तता तथा कंजूसी न आने पावे ।

हे (बृहद् भानो) महातेजस्वी तथा (यविष्ठ्य) सब से अधिक बलवान् प्रभो ! (रीषत उत वा जिघांसतः पाहि) जो भी दुष्ट हम को मारने लगे तथा जो मारने की इच्छा करता है, उन सब से हमारी रक्षा करो । हम उनसे सावधान रहें तथा सुरक्षा का प्रबन्ध कर लेवें। प्रभु स्वयं सावधान हैं, उनका भक्त भी सावधान रहना चाहिये ।

Deliver us from Evil

O God, Glorious and Righteous, protect us from the unrighteous, and the wicked and deliver us from the harm of the fraudulent and the bad characters. Thou art Almighty and Supreme Glory and we seek Thy protection againts all evils.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उसकी महिमा अपार है

५—ओं त्वमस्य पारे रजसो व्योमनः
स्वभूत्योजा अवसे धृषन्मनः।
चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोऽपः
स्वः परिभूरेष्या दिवम् ॥
ऋ० म० १। सूक्त ५२। मन्त्र १२

हे परम ऐश्वर्य वाले परमात्मन्! (अस्य व्योमनः रजसः) इस आकाश लोक के पार तथा भीतर (स्वभूत्योजा) अपने ऐश्वर्य और बल से विराजमान होके (धृषन् मनः) दुष्टों के मन को घर्षण तिरस्कार करते हुए सब जगत् तथा विशेष हम लोगों के (अवसे) अच्छी प्रकार से रक्षण के लिये (त्वम्) आप सावधान हो रहे हो, इससे हम निर्भय हो के आनन्द कर रहे हैं।

आप (भूमिम्) इस पृथिवी को (स्वः) सुख विशेष तथा मध्यस्थ अन्तरिक्ष में स्थित लोकों को एवं (दिवम्) परम आकाश को—इन सबों को (ओजसा) अपने सामर्थ्य से ही रचना करके यथावत् धारण कर रहे हो।

आप ही (परि भूः एषि) सबके ऊपर वर्त्तमान हैं और सब को प्राप्त हो रहे हैं।

हे अनन्त प्रभो! आप ही (आ दिवम्) प्रकाशमान सूर्यादि लोक (अपः) अन्तरिक्ष लोक और जल इन सब के (प्रतिमान) परिमाण करने वाले नाप तोल करने वाले हो परन्तु आप स्वयं अपरिमेय हैं, नाप तोल से परे—अनन्त हो। आपका पार हम कैसे पा सकते हैं।

कृपा करके हमको अपना तथा सृष्टि का विज्ञान दीजिये, हम आपके शिष्य हैं, बालक हैं।

The Glory Immeasurable

O God, Boundless and Immeasurable, You are the creator and Preserver of this Earth, the planets and everything in between and beyond. Your might and majesty pervades the entire universe. We beseech Thee, the Limitless, to bless us with Your benovelent enlightenment and unfold the secret of this Universe.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्य और दस्यु

६—ओं वि जानीह्यार्यान् ये च दस्यवो
बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान् ।
शाकी भव यजमानस्य चोदिता
विश्वेत्ता ते सधमादेषु चाकन ॥

ऋ० म० १ । सूक्त ५१ । मन्त्र ८

हे यथायोग्य सबको जानने वाले ईश्वर ! आप (आर्यान्) विद्याधर्मादि उत्कृष्ट स्वभाव वाले तथा उच्च कोटि के आचरणों से युक्त व्यक्तियों को आर्य नाम से जानते हैं।

(ये च दस्यवः) और जो नास्तिक, डाकू, चोर, विश्वासघाती, मूर्ख, विषयलम्पट, हिंसादि दोषयुक्त, उत्तम कर्मों में विघ्न डालने वाले स्वार्थी, स्वार्थ साधन में सदा तत्पर, वेद विद्या विरोधी अनार्य मनुष्य हैं (बर्हिष्मते) सर्वोपकारक यज्ञ के विध्वंस करने वाले हैं, इन सब दुष्टों को आप (रन्धय) मूल सहित नष्ट कर दीजिये।

और (शासद् अव्रतान्) ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ संन्यास आदि धर्म के अनुष्ठान अर्थात् इनके व्रत से रहित, वेद के मार्ग का उच्छेदन करने वाले, वेद की शिक्षा के विरुद्ध चलने वाले अनाचारियों को यथायोग्य नियन्त्रित करो जिससे वे भी शिक्षा युक्त हो के शिष्ट हों अथवा आर्य सज्जनों के वश में ही रहें।

आप ही (शाकी) जीव को परम शक्ति युक्त करने वाले और (चोदिता) उत्तम कामों में प्रेरणा करने वाले हैं। आप हमें दुष्ट कामों से हटाने वाले हों।

मैं भी (सधमादेषु) उत्कृष्ट स्थानों में निवास करता हुआ, उच्च पदों पर स्थित होता हुआ (विश्वेत्ता ते) तुम्हारी आज्ञानुकूल सब उत्तम कर्म करने की (चाकन) कामना करता हूं। सो मेरी यह कामना पूरी करें, मेरे पथ प्रदर्शक बनें।

The Righteous and the Evil

The God, All knower, is the source of all energy and power. He is the inspirer of all that is good and divine, and Protector from all that is base and unrighteous. We resolve solemnly to reside in surroundings pure and pious, and follow the path of nobility, inspired by God Divine. Guide us, O Lord, with Your Holy Will in this resolve.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

उत्तम प्रतिष्ठायुक्त सदैव हमको रखो

७- ओं ऊर्ध्वो नः पाह्यंहसो नि केतुना
विश्वं समत्रिणं दह ।
कृधी न ऊर्ध्वाञ्चरथाय जीवसे
विदा देवेषु नो दुवः ॥

ऋग्वेद म० १। सूक्त ३६। मन्त्र १४

हे सर्वोपरि (सबके ऊपर) विराजमान परब्रह्मन् ! आप (ऊर्ध्वः) सबसे उत्कृष्ट हो, हमको भी अपनी कृपा से उत्कृष्ट गुण वाले करो (नः पाहि) तथा ऊर्ध्व देश में एवं उच्च पद पर हमारी रक्षा करो।

हे सब पापों से दूर करने वाले प्रभो ! हमको (केतुना) विज्ञान अर्थात् विविध विद्याओं का दान देकर (अंहसः निपाहि) अविद्यादि महापाप से सदैव अलग रखो। भूल-चूक से पृथक् करो। तथा (विश्वं निपाहि) इस सकल संसार का भी नित्य पालन करो।

हे सत्यमित्र न्याय कारिन् ! जो कोई प्राणी (अत्रिणम्) हमसे शत्रुता करता है उसको (अर्थात् बाह्य शत्रु को) और काम-क्रोधादि आन्तरिक शत्रुओं को आप (संदह) सम्यक् भस्मीभूत करो अर्थात् उन्हें अच्छी प्रकार जलाओ।

हे कृपानिधे ! (कृधी न ऊर्ध्वान्) हमको विद्या, शौर्य (शूर-वीरता), धैर्य, बल, पराक्रम, चातुर्य, विविध धन, ऐश्वर्य, विनय, साम्राज्य, उत्तम मति, उत्तम प्रीति, स्वदेश को सुखी करने के लिये सेवा भाव आदि गुणों में सब मनुष्यों से अधिक करो।

(चरथाय जीवसे) सबसे अधिक आनन्द की प्राप्ति, सब देशों में स्वतन्त्रतापूर्वक जाना आना, आरोग्य से युक्त देह, शुद्ध मानस बल और विज्ञान इत्यादि के लिये हमको उत्तमता से सम्पन्न और अपनी पालना युक्त करो। (देवेषु विदाः) विद्वानों के मध्य में भी विद्यादि उत्तमोत्तम धन को प्राप्त कराओ अर्थात् प्रतिष्ठा युक्त सदैव हमको रक्खो।

Invocation for Name and Fame

O Lord Benovelent, bless us to attain the highest virtues.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

of learning, chivalry, fortitude, prowess, wisdom and intelligence, coupled with humility, love and fellowship. Grant us tranquility of mind, physical and spiritual power, freedom from infirmities and ignorance, and enlightenment of the highest order, so that we may attain name and fame all over.

सुनीति और स्वराज्य

८—ओं ऋजुनीती नो वरुणो मित्रो नयतु विद्वान् ।

अर्यमा देवैः सजोषाः ॥ ऋ० म० १ । सू० ९० । मन्त्र १

हे महाराजाधिराज परमेश्वर ! आप हमको (ऋजुनीती) सरल (शुद्ध) कोमलतादि गुणों की विशेषता से युक्त चक्रवर्ती राजाओं की नीति को (नयतु) कृपादृष्टि से प्राप्त कराइये।

आप (वरुणः) सर्वोत्कृष्ट होने से वरुण हो, सो हमको वरराज्य (श्रेष्ठ राज्य), वर विद्या, वर नीति देओ तथा (मित्रः) सबके मित्र अर्थात् शत्रुता रहित हो, हमको भी आप मित्र गुणयुक्त न्यायाधीश कीजिये। (विद्वान्) तथा आप सर्वोत्कृष्ट विद्वान् हो। हमको भी सत्यविद्या से युक्त सुनीति दे के साम्राज्य का अधिकारी शीघ्र कीजिये।

आप (अर्यमा) प्रियाप्रिय को छोड़ के न्याय में वर्त्तमान हो न्यायकारी हो, सब संसार के जीवों के पाप और पुण्यों की यथायोग्य व्यवस्था करने वाले हो, सो हमको भी आप न्याय प्रिय बनायें, हम किसी के साथ अन्याय न करने वाले हों जिससे (देवैः सजोषाः) आपकी कृपा से विद्वानों वा दिव्य गुणों के साथ उत्तम प्रीतियुक्त होकर हम आपमें रमण करने वाले, आपके भक्ति रस में निमग्न होने वाले और आप का सेवन करने वाले हों। आपको भूलने वाले न हों।

हे कृपा सिन्धो भगवन् ! आप हमारी सहायता करते रहें जिससे सुनीति युक्त हो के हमारा स्वराज्य अत्यन्त बढ़े।

May He lead us to Sound Policies

May the Lord of the Universe confer upon us the highest political wisdom. He is the Supreme Excellence. May He confer upon us supreme sovereignty, the choicest knowledge and the choicest polity. He is the universal friend. May He confer upon us virtues of friendship for all, coupled with the capacity

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

for the fairest justice. He is the supreme Knowledge. May He confer upon us His benign gift of the wisest polity for the guidance of state craft. He is the Supreme Judge, adjudicating justly and judiciously on the good and evil deeds of all living beings. May he confer upon us the virtues of justice and fairplay, free from attachment and prejudice. Blessed with the gifts of the highest knowledge, fairest justice, and the wisest state craft polity, may we ever remain your devotees. Help us, O God Benovelent, with the most righteous statecraft polity for the ever expanding frontiers of our sovereign state.

भगवान् की मित्रता

९—ओं त्वं नः सोम विश्वतो रक्षा राजन्नघायतः।
न रिष्येत् त्वावतः सखा ॥

ऋ० म० १। सूक्त ९१। मन्त्र ८

हे सोम राजन्नीश्वर ! तुम (अघायतः) जो कोई प्राणी हममें पापी हों या पाप करने की इच्छा करने वाले हों। (विश्वतः रक्ष) उन सब प्राणियों से हमारी रक्षा करो। हम उन प्राणियों की कुसंगति से बचें तथा पाप से प्रेम करने वाले न हों।

जिसके आप सगे मित्र हो (न रिष्येत्) वह कभी विनष्ट नहीं होता। हमें पूर्ण विश्वास है कि आप की सहायता से हमें तिल मात्र भी दुःख वा भय कभी नहीं होगा। जो आपका मित्र हो, उसको भला दुःख क्योंकर हो।

Guarantor Against All Harm

You are the Lord of Divinity and Piety. Protect us, O Lord, from the sinful. We seek Thy benign shelter and worthy friendship, for that alone is the surest guarantee against harm or grief.

प्रभु के दिव्य कर्मों को देखो

१०—ओं विष्णोः कर्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे।
इन्द्रस्य युज्यः सखा ॥ ऋ० म० १। सूक्त २२। मन्त्र १९

हे जीवो ! (विष्णोः कर्माणि पश्यत) व्यापक ईश्वर के किये जगत् की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयादि दिव्य कर्मों को तुम देखो।

(प्रश्न) किस हेतु से हम लोग जानें कि व्यापक विष्णु के कर्म हैं?

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

(उत्तर)—(यतो व्रतानि पस्पशे) जिसकी कृपा से हम लोग ब्रह्मचर्यादि व्रत तथा सत्य भाषणादि व्रत पालन करने और ईश्वर के नियमों के अनुकूल कर्मों का अनुष्ठान करने को जीव सुशरीर-धारी होकर समर्थ हुए हैं। यह सब काम उसी के सामर्थ्य से है। क्योंकि (इन्द्रस्य युज्यः सखा) इन इन्द्रियों के साथ वर्त्तमान, कर्मों का कर्त्ता और भोक्ता जो जीव है, इसका वही प्रभु एक योग्य मित्र है अन्य कोई नहीं।

ईश्वर जीव का अन्तर्यामी है, उससे बढ़ कर जीव का हितकारी कोई और नहीं हो सकता, इससे हमें परमात्मा से सदा मित्रता रखनी चाहिये।

Worthy Friend and Guide

In this Commandment, the devotees are enjoined to study minutely this universe, the Supreme Manifestation of God All-Pervading. This is His creation. He is its Maintainer, and its Destroyer. Out of His Manifestation has come into being the Jiva. It is incumbent on the Jiva to follow resolutely the path of divine righteousness and continence. For Jiva, Who is the doer of deeds and undergoer of their consequences, the All knower God is the only Worthy Friend and Guide.

प्रभु का दिया ऐश्वर्य सुखकारी हो

११—ओं शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु
शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः
शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥

ऋ० म० ७। सूक्त ३५। मन्त्र २

हे ईश्वर! (भगः) आप और आपका दिया हुआ ऐश्वर्य (शं नः) हमारे लिये सुखकारक हो। (शं उ नः शंसो अस्तु) आपकी कृपा से हमारी सुखकारक प्रशंसा सदैव हो। (पुरन्धिः शं उ सन्तु रायः) संसार के धारण करने वाले आप तथा वायु और प्राण एवं (रायः) सब धन आपकी कृपा से आनन्ददायक हों।

(शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः) सत्य यथार्थ धर्म, सुसंयम और जितेन्द्रियादि लक्षणयुक्त व्यक्ति की जो प्रशंसा (पुण्यस्तुति) सब

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संसार में प्रसिद्ध है वह हमारे लिये परमानन्द-दायक और शान्ति-युक्त हो।

(शं नो अर्यमा) न्यायकारी आप (पुरुजातः) अनन्त सामर्थ्य युक्त हमारे लिये कल्याणकारक होओ। हम भी न्यायसम्पन्न तथा सामर्थ्यशाली बनें।

Happiness—A Gift Divine

The Lord of Peace and contentment is the Bestower of prosperity and riches. Fame is His Gift. He is the Revealer of Eternal Truth, Guardian of all Laws Divine, Dispenser of Justice, and the mightest of the mighty. May His Supreme Powers ever grant us peace, happiness and contentment to enjoy all worldly riches and reputation.

प्रकृति के पदार्थों का ठीक उपयोग करो

१२—ओं तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो
अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः॥

ऋ० म० ७। सू० ३। मन्त्र २५

हे भगवन्! (तत् नः इन्द्रः) वह सूर्य (वरुणः) चन्द्रमा (मित्रः) वायु (अग्निः) अग्नि (आपः) जल (वनिनः ओषधीः) वृक्षादि वनस्थ सब पदार्थ आपकी आज्ञा से सुखरूप होकर (जुषन्तः) हमारी सेवा करें। हम इनसे लाभ उठाने वाले हों तथा ये हमारे लिए उपयोगी सिद्ध हों।

हे रक्षक! (मरुतां उपस्थे) प्राणादि के सुसमीप बैठे हुए हम—प्राण साधना और प्राणायाम करते हुए आपकी कृपा से (शर्मन्त्स्याम) सुखयुक्त सदा रहें।

(स्वस्तिभिः) सब प्रकार के रक्षणों से, कल्याणकारी साधनों से (यूयं पात) आप हमारी रक्षा करो। किसी प्रकार से हमारी हानि न हो।

Invocation For Peace and Prosperity

We beseech, Thee, O Lord Divine, that the Sun, the Moon, the Wind, the Energy, the water and the vegetation may, with your command, serve us for our welfare and progress. May we ever enjoy peace and happiness by performing pranayama. Give us protection O God, at all times, and in all directions, to guarantee our well-being, progress, and freedom trom harm.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

घर-घर में अध्यात्म गंगा बहाने के लिए

१. मां गायत्री

गायत्री मंत्र पर महर्षि दयानन्द, श्रीपाद पं० दामोदर जी सातवलेकर, महात्मा आनन्द स्वामी, स्व० प्रभु आश्रित जी, व स्वामी समर्पणानन्द जी के विचार।

मूल्य ८० पैसे : ५०) सैकड़ा

२. ईश्वर भक्ति

स्व० स्वामी सर्वदानन्द जी की अनुपम प्रेरक महान् रचना। प्रभु से मिलने का मार्ग दर्शन।

मू० ६० पैसे : ४०) सैकड़ा

पं० धर्मदेव विद्यामार्तण्ड के परिश्रम का परिणाम

एक अनुपम ग्रन्थ

Christianity and Vedas

वेद और बाइबिल का तुलनात्मक अध्ययन अब छप कर तैयार है—
गहरायी में पैठ कर कुछ जानने के इच्छुक मंगाएं और बाँटें

मूल्य १)५०

स्वामी दयानन्द

तीसरा संस्करण : ४० रंगीन चित्रों सहित

लागत १)५३ = बिक्री मूल्य १००) सैकड़ा

भारी संख्या में मंगाइए : दीपावली पर बांटिए

जन-ज्ञान-प्रकाशन

१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रचार के लिए

आकर्षक वैदिक साहित्य

1. Light of Truth : अंग्रेजी 'सत्यार्थ-प्रकाश' Rs. 10.00

महर्षि दयानन्द के महान् ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश का मास्टर दुर्गाप्रसाद कृत यह अनुवाद प्रत्येक दृष्टि से अनुपम है। छपाई, कागज, जिल्द सभी दृष्टि से अत्यन्त आकर्षक यह ग्रंथ लागतमात्र पर दिया जा रहा है। पृष्ठ ५७८। साइज डिमाई आठवां—मूल्य १०)। कपड़े की जिल्द १२)।

2. Life and Teachings of Swami Dayanand मूल्य १०.००

महर्षि का अंग्रेजी जीवन-चरित्र

बाबा छज्जूसिंह द्वारा लिखित यह अनमोल ग्रंथ महर्षि के जीवन पर अनुपम प्रकाश डालता है। स्व० पं० लेखराम द्वारा संग्रहीत सामग्री के आधार पर तैयार यह जीवन अपने ढंग का अनुपम है। इसमें देश-विदेश के नेताओं द्वारा दी गई श्रद्धांजलियां महर्षि के जीवन की प्रमुख घटनाएं : प्रमुख शास्त्रार्थ और ३४ पृष्ठ आर्ट पेपर के, १६ रंगीन चित्र, आकर्षक, पूरी कपड़े की जिल्द अपने ढंग की आप ही है। भेंट के लिए सर्वोत्तम पृष्ठ ४२२। साइज डिमाई आठवाँ— मूल्य १०) मात्र

3. Teachings of Swami Dayanand

महर्षि दयानन्द की विचारधारा और शिक्षाओं से सभी को परिचित कराने के लिए अनुपम पुस्तक। मूल्य १)

4. Ten Commandments

आर्यसमाज के १० नियमों की अभूतपूर्व व्याख्या : स्व० पं० चमूपतिजी की लेखनी से। मूल्य १)

5. Message of the Arya Samaj to the Universe [नया संस्करण]

भारतेन्द्र नाथ साहित्यालंकार लिखित—आर्यसमाज का संदेश फैलाने हेतु प्रभावशाली पुस्तिका—जिसका ८ भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। ५० पैसे

6. Vedic-Prayer

संध्या, प्रार्थना मंत्र, हवन, स्वस्तिवाचन, शान्तिप्रकरण ईशोपनिषद् आदि सभी की पूर्णव्याख्या हिन्दी और अंग्रेजी में एक साथ और चुने हुए भजन—भेंट के लिए अत्युत्तम मूल्य २)५०

7. Dayanand the Great (तीसरा नया संस्करण)

पं० वेद मित्र ठाकुर लिखित प्रभावशाली ट्रैक्ट मूल्य १५ पैसे

8. An introduction to the Arya Samaj (नया संस्करण)

आर्यसमाज से सभी को परिचित कराने के लिए, प्रभावशाली ट्रैक्ट मूल्य १५ पैसे

9. The Great Gaytri मूल्य २० पैसे : १५) सैकड़ा

गायत्री मंत्र का यह सुन्दर अंग्रेजी अनुवाद प्रत्येक दृष्टि से आकर्षक है। ७५) रिम के सर्वश्रेष्ठ कागज पर रंगीन मोहक छपाई

10. The Vedic Fundamentals

वैदिक धर्म के मूल सिद्धान्त समझने हेतु प्रभावपूर्ण मार्ग दर्शन

11. Vedic-Life वेद मंत्रों द्वारा जीवन दर्शन मूल्य २.५०

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

12. Christianity and Vedas पं० धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड १)५०

१३. वैदिक-सत्संग-पद्धति (हिन्दी) [नया पांचवां संस्करण] मूल्य ६० पैसे

केवल हिन्दी में, इसमें प्रत्येक मंत्र के साथ उसका अर्थ दिया गया है। २८ पौंड बढ़िया कागज, तिरंगा बढ़िया आवरण, महर्षि का चित्र। चुने हुए भजन। ८४ पृष्ठ। मूल्य ६० पैसे। ५० रु० सैंकड़ा।

१४. वैदिक-समाजवाद मूल्य ८० पैसे

समाजवाद के सम्बन्ध में वेद का दृष्टिकोण क्या है? कैसा समाजवाद सभी के लिए कल्याणकारी है? यह जानने के लिए प्रभावपूर्ण पुस्तक

१५. धर्मग्रन्थावलोकन १·५०

संसार के प्रमुख धर्म ग्रन्थों का प्रामाणिक परिचय

१६. गीत-मंजरी (नया संस्करण) मूल्य १)

ईश्वर भक्ति के गीत और प्रभु से प्रार्थना करते हुए यदि आप सचमुच अपने आपको भुलाना चाहते हैं तो "गीत मंजरी" का सहारा लीजिए।

१७. अमृत-पथ (सजिल्द) ३)

धर्म और अध्यात्म का मार्ग दर्शक ग्रन्थ

१८. वेद-ज्योति ४०० मंत्रों का अर्थ सहित संग्रह, मूल्य ३)

१९. प्रार्थना मंत्र व्याख्या मूल्य ४० पैसे

हरिशरण जी सिद्धान्तलंकार लिखित प्रार्थना मन्त्रों की अनुपम व्याख्या।

२०. भारत की अवनति के ७ कारण

ब्र० जगदीश एम० ए० की लोह लेखनी द्वारा लिखित। पृष्ठ ६८। ५० पैसे

२१. वैदिक-अध्यात्म-ज्योति मूल्य २)

वेदमंत्रों का प्रेरक ग्रन्थ

२२. योग-जीवन मूल्य २)

योग का हमारे जीवन में जो महत्वपूर्ण स्थान है उसका हृदयग्राही वर्णन ग्रंथ की अपनी विशेषता है। आसन, प्राणायाम, यम और नियम को हृदय पटल पर अंकित करने में सक्षम ग्रंथ प्रत्येक दृष्टि से उपादेय है।

२३. नीति दोहावली मूल्य ८० पैसे

प्रत्येक आवश्यक विषय पर उपयोगी दोहे-कविताएं और प्रमाण जीवन के संदर्भ में प्रेरक मार्ग दर्शन —आचार्य जगदीश विद्यार्थी द्वारा संग्रहीत।

२४. ज्ञान-ज्योति ४०० मन्त्रों का अनुपम भाष्य मूल्य ३)

२५. माँ गायत्री तीसरा नया संस्करण ८० पैसे

२६. वैदिक-सिद्धान्त मूल्य २)

वैदिक सिद्धान्त अकाट्य हैं। यह स्वयंसिद्ध बात ग्रंथ पढ़ कर हृदयंगम हो जाती है। आर्य समाज के सुप्रसिद्ध विद्वान् श्रद्धेय पं० यशःपाल सिद्धान्तालंकार की विद्वत्ता, प्रतिभा का चमत्कार देख आप मुग्ध हो जाएंगे। प्रत्येक दृष्टि से

२७. आर्य समाज के नियम मूल्य ८० पैसे

ज्ञान की अनुपम खोज, महर्षि के शिष्य पं० मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या द्वारा लिखित पहला संस्करण १८९१ में छपा था। आर्य समाज को जानने समझने का अपूर्व साधन है।

२८. लाल आंधी ८० पैसे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कम्यूनिज्म क्या है, कैसा है यह क्या करेगा ? इसका असली रूप महात्मा नारायण स्वामी, वैद्य गुरुदत्त और श्री चिरंजीलाल प्रेम की प्रभावपूर्ण लेखनी द्वारा प्रचार के लिये प्रस्तुत है।

२९. दहला पागल हो गया — ८० पैसे

३०. वेदामृत— — ३)

पं० सातवलेकर जी व स्व० स्वामी वेदानन्द जी द्वारा संपादित--प्रत्येक विषय पर वेद मंत्रों का अनुपम मार्ग दर्शन ग्रन्थ

३१. वैदिक भक्तिवाद—

भक्ति का रस बरसे तो जीवन सरसे, इसे पीने पिलाने के लिए पुस्तक उपस्थित है। मूल्य २५ पैसे

३२. ईश्वर भक्ति— — ६० पैसे

परमात्मा से मिलने का सीधा मार्ग-दर्शन स्वामी सर्वदानन्द जी द्वारा ६० पैसे

३३. सत्यार्थ प्रकाश

राज संस्करण सजिल्द ३)। उपहार संस्करण कपड़े की जिल्द ४)

१०) सैकड़ा के उपयोगी प्रचार ट्रैक्ट

३४. आर्यसमाज क्या मानता है ? --मदनमोहन विद्यासागर
३५. विश्व को वेद का संदेश --भारतेन्द्र नाथ
३६. महर्षि दयानन्द की विशेषताएं --महात्मा नारायण स्वामी
३७. आर्यसमाज की विचारधारा --गंगाप्रसाद उपाध्याय
३८. आर्यसमाज की मान्यताएं --पं० रामचन्द्र देहलवी
३९. निमंत्रण : आर्य समाज का --गंगाप्रसाद उपाध्याय
४०. आर्य समाज के दस नियम --रघुनाथ प्रसाद पाठक
४१. ईसाई पादरी उत्तर दें। --स्वामी श्रद्धानन्द
42. Achallenge To The Christian Faith ३) सैकड़ा
43. Bible in the Balance चार्ल्स स्मिथ—१५) सैकड़ा
४४. ज्ञान विज्ञान का शत्रु ईसाई मत --ओमप्रकाश त्यागी १०) सैकड़ा
४५. पोप की सेना का भारत पर हमला --भारतेन्द्र नाथ १०) सैकड़ा
४६. ईसाइयों की प्रचार प्रणाली --जगत्कुमार शास्त्री १०) सैकड़ा
४७. पादरियों को चुनौती --स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती १०) सैकड़ा
४८. बाइबल को चुनौती --ओमप्रकाश त्यागी १५) सैकड़ा
४९. ईसाइयत की वास्तविकता --शांतिप्रकाश महोपदेशक १०) सैकड़ा
५०. बाइबल कसौटी पर --चार्ल्स स्मिथ १५) सैकड़ा
५१. सत्संग महिमा-स्वामी वेदानन्द तीर्थ २०) सैकड़ा
५२. स्वामी श्रद्धानन्द-जीवन चरित्र --५० पसे
५३. उपनिषद्-त्रयी --८० पैसे
५४. ऋषि दयानन्द-जीवन चरित्र -श्रद्धांजलियों सहित पृष्ठ २६०
४० चित्रों सहित मूल्य १०० सैकड़ा

[डाक व्यय अलग होगा]

जन-ज्ञान-प्रकाशन
१५९७, हरध्यानसिंह रोड, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"जन-ज्ञान" [मासिक] के नियम

१—"जन ज्ञान" "दयानन्द संस्थान" का मासिक मुख पत्र है। इसका उद्देश्य—(क) महर्षि दयानन्द के लक्ष्य को पूर्ण करना (ख) संसार के प्रत्येक व्यक्ति तक वेद का पावन संदेश पहुँचाना और (ग) अज्ञान, पाखण्ड की समाप्ति के लिए प्रत्येक सम्भव पग उठाना है।

२—'जन-ज्ञान' में व्यक्तिगत राग द्वेष और पार्टीबाजी के लेख व सूचनायें किसी भी स्थिति में प्रकाशित नहीं किये जायेंगे।

३—वैदिक सिद्धान्तों के विरुद्ध विज्ञापनों का प्रकाशन भी किसी स्थिति में नहीं होगा।

४—"जन-ज्ञान का वार्षिक शुल्क बारह रुपया, एक प्रति का एक रु० है। सदस्यों को विशेषांक वार्षिक मूल्य में ही दिये जायेंगे।

५—प्रत्येक माह की **दो-या तीन तारीख को** 'जन-ज्ञान' भेज दिया जाता है। यदि दस तक भी न मिले तो समझिये कि आपका 'जन-ज्ञान' कोई और पढ़ रहा है। दस तारीख तक 'जन-ज्ञान' न मिले तो अपने पोस्ट आफिस को पत्र लिखें और उसकी एक प्रति हमें भेजें। पत्र प्राप्त होने पर 'जन-ज्ञान' दुबारा बिना टिकट लगाये बैरंग भेजा जायेगा। **बीस तारीख के बाद या बिना पोस्ट मास्टर के पत्र की प्रतिलिपि के किसी भी शिकायती पत्र पर ध्यान नहीं दिया जायेगा।**

६—विशेषांक सुरक्षित मंगाने के लिए १ रुपये के टिकट पन्द्रह दिन पूर्व आने चाहिएं। विशेषांक किसी भी स्थिति में दुबारा न भेजे जायेंगे।

७—किसी भी प्रकार का पत्र व्यवहार करते समय अपनी ग्राहक संख्या लिखना न भूलें।

८—समस्त ड्राफ्ट, मनीआर्डर आदि **'जन ज्ञान'** Jyn·Gyyn के नाम भेजें। दिल्ली से बाहर के व्यक्ति चैक न भेजें।

९—नये सदस्य धन भेजते समय **'नया सदस्य'** शब्द अवश्य लिखें और मनीआर्डर कूपन पर पता अवश्य लिखें।

१०—"जन-ज्ञान" सदस्यों को 'जन-ज्ञान प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित सम्पूर्ण साहित्य पौने मूल्य में दिया जायेगा।

प्रबन्धक
जन-ज्ञान (मासिक)
१५९७, हरध्यानसिंह रोड, करौल बाग,
नई दिल्ली—५

फोन : ५६६६२९

चारों वेदों का भाष्य मंगाने के लिए
५१) आज ही भेजिए।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रियायती रेटों पर : आकर्षक चित्र

अनेक साइजों में

चित्र जो सामने के पृष्ठ पर छपा है।

घर-घर में ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज के महापुरुषों के चित्र पहुंचाने की दृष्टि से हमने यह चित्र

लागत से अत्यन्त कम मूल्य पर देने का निश्चय किया है—

अब आप का कर्त्तव्य है कि अधिक से अधिक मंगाकर

इनका प्रचार करें—

१—२०×२० इन्च का अत्यन्त आकर्षक सुन्दर बढ़िया कागज पर चित्र जो सर्वत्र १॥) में बिक रहा है—बिल्कुल वही चित्र ५०) सैकड़ा

२—१०×१० इंच का यही चित्र—बढ़िया कागज पर—२५) सैकड़ा

३—१०×१० इंच का महर्षि दयानन्द का चित्र—२५) सैकड़ा

४—१५×२२ इंच का १० नेताओं का चित्र दोनों ओर पत्ती लगा हुआ—२५) सैकड़ा

ध्यान रहे कि स्टाक थोड़ा है। दुबारा छपने पर इस मूल्य पर नहीं मिलेगा—

मंगाइये—और घर-घर में ऋषि चित्र पहुंचाइए—

—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

आर्यसमाज के प्रकाशस्तंभ

चित्र व कैलेण्डर

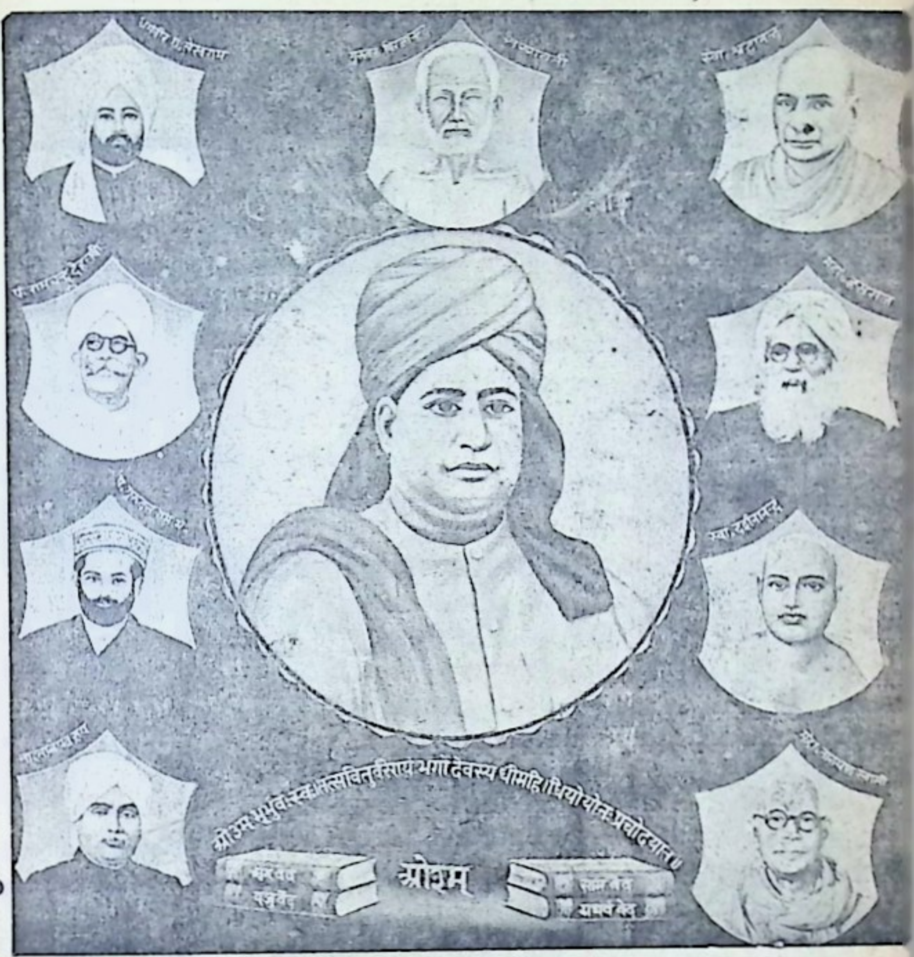

इस चित्र को घर-घर में पहुंचाने का

व्रत लीजिए

दयानन्द-संस्थान, १५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मुफ्त साहित्य प्रचारक मंगाएं। मासिक पुस्तकालयों को केवल ६० पैसे डाक व्यय लेकर वर्ष भर भेजा जाएगा। विज्ञापन का उत्तम साधन है।

नमूना मुफ्त मंगाएं।

पंडित जयदेव ब्रदर्स, आत्माराम मार्ग, कारेली बाग, बड़ौदा

अपनी

आवश्यकताओं

वर-वधू

नौकरी आदि

के लिये

जनज्ञान

में

विज्ञापन दीजिए

धन भेजते समय अपना ग्राहक नम्बर अवश्य लिखें। वी० पी० न मंगाएं।

—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद भाष्य का प्रचार घर-घर में करो !

५१) में चारों वेदों का पूरा भाष्य आप को मिलेगा

१५ नवंबर १९७२ तक
अपना आदेश भेजें

भूलिए नहीं–वेद का पढ़ना पढ़ाना प्रत्येक आर्य का परम धर्म है–

घर-घर में 'वेद' पहुंचाने का
संकल्प लीजिए

अध्यक्ष
दयानन्द संस्थान नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शुभ कामनाओं सहित

नागरथ पेन्टस प्रा० लिमिटेड

४६—फजलगंज कानपुर
(फैक्टरी व बिक्री कार्यालय)
शाखाएं—दिल्ली, पटना, कलकत्ता और रांची

निर्माता

उच्च कोटि के एनेमल व विशेष पेन्ट्स

ट्रेड्स, इन्डस्ट्री और डिफैन्स

पंजीकृत कार्यालय २- टालसटाय मार्ग, नई दिल्ली

परिवारों के लिए एक अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ

वैदिक---गृहस्थाश्रम

प्रसिद्ध वैदिक विद्वान् पं० विश्वनाथ वेदालंकार द्वारा
लिखित भेंट करने योग्य

२८४ वेद मंत्रों की अनुपम व्याख्या पृष्ठ ४१८—सजिल्द मूल्य ५)
किन्तु जन ज्ञान (मासिक) के सदस्यों को केवल २ रु० ५० पैसे में दी जाएगी
थोड़ी सी प्रतियां हैं : शीघ्र मंगाएं

छप कर तैयार है—शीघ्र मंगाएं

वैदिक—डायरी

मूल्य १) २५। १००) सैकड़ा। बहुत थोड़ी प्रतियां छपी हैं शीघ्रता करें

कपड़े की जिल्द
मूल्य २)

जन-ज्ञान-प्रकाशन
९७, हरध्यानसिह मार्ग, नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

दीपावली पर मँगाइए

१. सत्यार्थ प्रकाश प्रचार संस्करण   सजिल्द मूल्य ३)

२५० प्रतियों तक कमीशन २५ प्रतिशत

२५० से अधिक लेने पर ३३ प्रतिशत

२. सत्यार्थ-प्रकाश (उपहार संस्करण)

कपड़े की पूरी जिल्द : बढ़िया कागज ३२५) सैकड़ा

३. ऋषि जीवन २५० पृष्ठ–४० चित्र

मूल्य सजिल्द १५०) सैकड़ा। अजिल्द १००) सैकड़ा

आज ही आदेश भेजिए

व्यवस्थापक

जन-ज्ञान-प्रकाशन

१५६७ हरध्यान सिंह मार्ग नई दिल्ली-५

आर्य समाज शताब्दी के उपलक्ष्य में

एक लाख सत्यार्थप्रकाश बांटने हैं

पांच लाख "ऋषि जीवन"–और ऋषि दयानन्द क संदेश और वेद भाष्य घर-घर पहुंचाना है

इस पवित्र कार्य में सहयोग के लिए हम उन्हें पुकारते हैं–

जो "ऋषि दयानन्द की जय" चाहते हों

दयानन्द के वीर सैनिक उठें और घर-घर में सत्यार्थ-प्रकाश–ऋषि जीवन–वेद भाष्य पहुंचाएँ

प्रभु के आशीर्वाद

अध्यक्ष दयानन्द संस्थान नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद भाष्य के सम्बन्ध में विवरण

१. वेद भाष्य का साईज १०×१५ इंच है। पृष्ठ लगभग २००० होंगे। कागज ३२ पौंड सफेद वढ़िया चिकना है। जिल्द वढ़िया पक्की मजबूत व सर्वश्रेष्ठ होगी।

२. भाष्य में विषय, मंत्र, पदार्थ, भावार्थ, स्वर, छन्द, देवता, ऋषि सभी होंगे। चारों वेदों के सारे मंत्रों का पूर्ण भाष्य होगा।

३. जितना भाष्य ऋषि दयानन्द का प्राप्त है वह होगा। शेष श्रेष्ठ उच्च वैदिक विद्वानोंका होगा। मंत्र १६ प्वाईंट में शेष १२ में होगा।

४. लागत ८०) के लगभग आएगी। मूल्य १५ नवम्वर १९७२ तक ५१) की दर से भेजना होगा। धन संपूर्ण एक साथ भेजना होगा। विना पूरा धन प्राप्त हुए आदेश अंकित न होगा।

५. १९७३ के अन्त अन्त तक वेद भाष्य छप जाए, ऐसा प्रयत्न कर रहे हैं। फिर छपने पर भेजा जाएगा। इस सम्बन्ध में कोई पत्र न लिखें। छपने पर हम सूचित कर देंगे।

६. संस्थान इस कार्य को प्रचार की दृष्टि से कर रहा है। अतः वह विश्वास दिलाता है कि छपने पर यदि कोई सज्जन भाष्य न लेना चाहेंगे तो उनका धन लौटा दिया जाएगा।

७. रेल स्टेशन स्पष्ट लिखें। पैकिंग प्रेषण व्यय जो आएगा वह ग्राहक को देना होगा जिसका निर्णय छपने पर ही किया जायेगा।

भारत के घर-घर में इस पवित्र ग्रन्थ को पहुँचाने की दृष्टि से इस का प्रकाशन किया जा रहा है। कृपया पूर्ण सहयोग प्रदान करें।

अधिक से अधिक घरों तक पहुँचा पुण्य तथा यश प्राप्त करें।

विनीत
भारतेन्द्रनाथ—अध्यक्ष
दयानन्द संस्थान
१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग, करौल बाग, नई दिल्ली-५.

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संक्षिप्त जीवन-श्रद्धांजलि—

—बनारसीसिंह

महर्षि दयानन्द सरस्वती

पुण्य-भूमि आर्यावर्त्त की गोदी में समय-समय पर ऐसे महान् मनीषी और महामानव जन्म ग्रहण करते रहे हैं जिन्होंने वर्षों की कठोर साधना से अर्जित वैदिक ज्ञान-विज्ञान की कल्याणदायिनी सरिताएं प्रवाहित कर जन-मन को सत्य पथ का दर्शन कराया है। इन ऋषि, महर्षियों, दार्शनिकों और तत्त्ववेत्ताओं ने राष्ट्र-निर्माण यज्ञ की पावन ज्वालाओं को स्वजीवन की समिधाएं समर्पित कर जारी रखा है और भारत की भा+रत (अर्थात् ज्ञान की खोज में लगा हुआ) संज्ञा को सार्थक सिद्ध किया है। जहां यूनान, मिस्र और रोम की प्राचीन संस्कृतियाँ, जो वैदिक संस्कृति की तुलना में तो पुरानी भी नहीं कही जा सकतीं आज शोधकर्त्ताओं के अन्वेषण की विषय-वस्तु बनकर रह गई हैं वहाँ यह पावन धारा वैदिक ज्ञान-विज्ञान की देन को अपने हृदय मन्दिर में संजोए विश्व आह्वान् कर रही है कि हे जगती तल के विभ्रान्त मानवों! तुम्हारी समस्याओं का निदान, तुम्हारे कल्याण का पथ, भौतिकतावादी दर्शन से कदापि न हो पाएगा अपितु उदात्त वैदिक दर्शन द्वारा ही तुम्हारा सर्वांगीण विकास संभव है।

इन्हीं महापुरुषों की शृंखला में, संत्रस्त मानवता के समक्ष सत्य-पथ को आलोकित करने वाले महान् युग प्रवर्त्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती ने १९वीं शताब्दी के पूर्वार्ध अर्थात् फाल्गुन बदी दशमी संवत् १८८१ को (१२ फरवरी १८२५ ई०) काठियावाड़ के मोरवी राज्यान्तर्गत टंकारा नामक स्थान में एक सम्पन्न, उच्चकुलीन वेदपाठी औदीच्य ब्राह्मण श्री कृपन जी के प्रथम पुत्र के रूप में जन्म लिया था।

उन दिनों समग्र भारतवर्ष निराशा के गहन भंवर से ग्रस्त था। आर्य जाति अपनी महान संस्कृति, परम्परा, धर्म, इतिहास और गौरव को विस्मृत कर अज्ञान के अन्धकार से त्रस्त थी। भारतभूमि की पावन माटी, पोप लीलाओं की प्रचलित परिपाटी से दबी त्राहि-त्राहि कर उठी थी।

संभ्रान्त कुल में जन्मे दयानन्द, जिन्हें माता-पिता ने मूलशंकर नाम दिया था, का लालन-पालन संवर्धन और शिक्षा प्रचलित धार्मिक संस्कारों के अनुरूप ही हुई। कट्टर शैव कृपन जी ने अपने कुलदीपक मूलशंकर को भी अपने आराध्य देव शंकर का भक्त और अनुरक्त बनाने का पूर्ण प्रयास किया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मूलशंकर ने बाल्यावस्था को लांघ किशोर अवस्था की देहरी पर कदम धरा। वह १४ वर्ष के हो गए थे। महाशिवरात्री का पर्व आया। मूलशंकर ने भी शिवमन्दिर में रात्रिभर जागते रहकर कुल के इष्ट देवता को रिझाने का सँकल्प ग्रहण किया। रात्रि का अन्धकार बढ़ता गया। मन्दिर में जाग रहे भक्त जनों पर भी एक-एक कर निद्रादेवी अपना प्रभाव जमाती रही। सहसा ही अर्धरात्रि की निस्तब्धता में मूलशंकर ने देखा कि एक छोटा-सा मूषक शिवलिंग के ऊर्ध्व भाग पर उछलता कूदता भक्तों द्वारा श्रद्धाभक्ति सहित समर्पित सामग्री को नितान्त निर्भयता सहित उदरस्थ करता जा रहा है।

जो घटनाएं जनसाधारण की दृष्टि में सामान्य और महत्त्वहीन होती हैं, उन्हीं को महान् व्यक्तियों के जीवन में असाधारण महत्त्व प्राप्त हो जाता है। शिवलिंग पर चढ़े मूषक ने मूलशंकर की जिज्ञासावृत्ति को जगा दिया। उसके हृदय में एक प्रश्न चिह्न उपस्थित हुआ कि जो शंकर सामान्य मूषक को भी उसकी उद्दण्डता का दण्ड नहीं दे सकता, क्या उसकी पूजा और उपासना में कोई सार है? मूलशंकर में उस रात्रि जगी जिज्ञासा ही, भारत में धार्मिक क्रान्ति व नवजागरण का शंखनाद कर पाने में उसकी सफलता की आधारशिला सिद्ध हुई और उसके लिए यह शिवरात्रि ही बोधरात्रि बन गयी।

तदुपरांत मूलशंकर की जिज्ञासावृत्ति को बहिन की हैजे से हुई मृत्यु व अपने परम श्रद्धेय चाचा जी के विषूचिका के फलस्वरूप हुए निधन ने और भी जागृत किया। वह मृत्यु पर विजय की कामना को मनमें संजोए अमरत्व का पथ खोजने लगा। परिवार में रहकर भी परिवार से अलिप्तता की उसकी बढ़ती हुई मनःस्थिति पर नियन्त्रण पाने के लिए माता-पिता ने मूलशंकर को विवाह के बंधनों में बाँधने का इरादा किया। अब मूलशंकर २१ वर्ष के हो गए थे। एक दिन धुन के धनी युवक मूलशंकर माता-पिता के संकल्प की चिन्ता न कर शौच के बहाने गृह त्याग कर स्वतन्त्र पथ के पथिक बन गए।

मार्ग में इस नवीन वैरागी को कई पाखण्डी साधु मिले, जिन्होंने इससे कीमती अंगूठी और आभूषण और दुपट्टा आदि भी हड़प लिए। किन्तु यह सब गंवाकर भी कुछ शाश्वत की उपलब्धि का मतवाला मूलशंकर बढ़ता रहा और सायले ग्राम में एक ब्रह्मचारी से ब्रह्मचर्यव्रत की दीक्षा ग्रहण कर शुद्ध चैतन्य बन गया। अब उसने काषाय वस्त्र धारण कर हाथ में तूम्बा पकड़ लिया। उन्होंने योगाभ्यास भी आरम्भ कर दिया। वहाँ से वह कोटकांगड़ा चले गए। कोटकाँगड़ा से आप सिद्धपुर स्थित नीलकंठ महादेव में ठहरे। किन्तु इसी बीच उनके पिता को भी उनके संबंध में जानकारी मिल गई थी। अतः वे चार सिपाहियों को लेकर वहाँ आ पहुँचे। उन्होंने ज्यों ही मूलशंकर को देखा त्यों ही आगे बढ़े और उसके काषाय वस्त्र फाड़कर तूम्बा भी तोड़ डाला। वे अपने ठहरने के स्थान पर मूलशंकर को लिवा ले गए और रात्रि में उसकी देखरेख के लिए दो सिपाही भी नियुक्त कर दिए। किन्तु जहाँ चाह वहाँ राह की उक्ति को चरितार्थ कर मूलशंकर पुनः बंधन का परित्याग कर अमरत्व की खोज में अपनी राह पर बढ़ चले।

तदुपरांत शुद्ध चैतन्य बड़ौदा में कुछ दिन ठहरे और वहाँ वेदांत के ग्रंथों का अध्ययन किया। तदुपरांत आप चाणोदक कल्याणी पहुंचे और वहाँ आपने परमानन्द

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

स्वामी दयानन्द सरस्वती

सत्य, धर्म, मानवता और विश्व एकता के प्रसारक देवपुरुष दिव्य दयानन्द की गौरव गरिमा को आज कोई माने या न माने किन्तु संसार का जब कोई निष्पक्ष इतिहास लिखा जाएगा तब सभी एक स्वर से यह स्वीकार किया जाएगा कि मनुष्य को मनुष्य बनाने का जो मार्ग दर्शन दयानन्द ने किया था, उसकी उपमा नहीं—

—संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

परमहंस नामक एक दण्डी संन्यासी से संन्यास की दीक्षा ली और दयानन्द सरस्वती नाम ग्रहण किया।

तदनन्तर विभिन्न स्थानों पर घूमते, अनेक संन्यासियों से नाना ग्रन्थ पढ़ते हुए संवत् १९१२ में हरिद्वार के कुम्भ पर्व पर पहुंचे और वहीं चण्डी पर्वत के वनखण्ड में योगाभ्यास भी करते रहे। वहां से आप ऋषिकेश, केदारनाथ, उत्तरकाशी, तुंगनाथ, जमुनोत्री आदि तीर्थों तथा कानपुर, फर्रुखाबाद आदि नगरों का भ्रमण करते, मार्ग में मिलने वाले साधु संन्यासी व विद्वानों से योग शास्त्र सीखते तथा तांत्रिकों आदि ढोंगी संन्यासियों की पाखंड लीला देखते व अपने अनुभव बढ़ाते हुए कार्तिक सुदी संवत् १९१७ में मथुरा जा पहुंचे।

यहां आपकी दण्डी स्वामी विरजानन्द से भेंट हुई। योग्य गुरु को योग्य शिष्य मिल गया। प्रज्ञा चक्षु विरजानन्द को दयानन्द क्या मिले, खोई हुई ज्योति ही प्राप्त हो गई। आपने ढाई वर्ष तक दण्डी स्वामी जी के श्री चरणों में बैठकर अष्टाध्यायी, महाभाष्य, वेदान्त सूत्र तथा अन्य शास्त्रों का अध्ययन किया। अध्ययन के इस महासागर को लांघकर दयानन्द ने देशाटन की कल्पना अपने हृदय में संजोई और आर्य मर्यादा के अनुरूप दण्डी स्वामी को अत्यन्त प्रिय आधा सेर लवंग एक थाली में रखकर गुरुदक्षिणा समर्पित कर, उनसे अनुमति लेने हेतु उनके समक्ष पहुंचे।

दण्डी स्वामी ने दयानन्द को आदेश दिया :..."जाओ देश का सुधार और उपकार करो, सत्य शास्त्रों का उद्धार करो, मतमतान्तरों की अविद्या को हटाओ। वैदिक धर्म लुप्त होता जा रहा है, उसे पुनः सर्वत्र फैलाओ। मनुष्य-कृत ग्रन्थों के स्थान पर ऋषि-कृत ग्रन्थ ही सर्वथा दोष रहित हैं। इस कसौटी को कभी विस्मृत न करना।"

गुरुदेव का आशीर्वाद प्राप्त कर स्वामी दयानन्द कार्य क्षेत्र में अवतरित हो गए। आप मथुरा से आगरा पहुंचे और वहीं आपने "वैदिक-संध्या" पुस्तक का सँपादन किया। श्री रूपलाल ने इसकी तीस हजार प्रतियां छपवाकर प्रचारित कीं। उसी समय से स्वामीजी ने प्रतिमा खण्डन भी प्रारम्भ कर दिया था। आपने पाखण्ड-खण्डन नामक एक पुस्तक भी लिखी।

यहां से आप माघ बदी १२ संवत् १९२१ को अपने चार शिष्यों सहित ग्वालियर पहुंचे और वहां नरेश से आपकी भेंट वार्ता हुई। वहां से स्वामीजी विभिन्न नगरों का भ्रमण करते हुए चैत्र बदी ११ संवत् १९२२ को पुष्कर के प्रसिद्ध मेले में सम्मिलित हुए और सहस्त्रों लोगों को विशुद्ध वैदिक ज्ञान का प्रकाश देकर सत्य पथ दर्शाया।

पुष्कर से आकर आप अजमेर में ठहरे। यहां राजस्थान के तत्कालीन पोलिटिकल एजेण्ट कर्नल ब्रुक्स ने आपसे भेंट की। उन्होंने स्वामीजी से गोरक्षा के विषय पर वार्तालाप किया। कर्नल महोदय ने भी स्वामीजी के तर्कों के समक्ष परास्त, होकर गोरक्षा का महत्त्व स्वीकार किया।

अजमेर से प्रस्थान कर मार्ग में "पाखंड-खंडन" का अपना व्रत निभाते हुए स्वामी दयानन्द संवत् १९२३ में हरिद्वार में कुम्भ के अवसर पर पधारे और वहां भी नितांत निर्भीकता सहित आपने मूर्तिपूजा के खण्डन का क्रम निभाया।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संवत् १९२४ में स्वामी जी ने भीमगोडे में एक पर्णकुटी बनाकर, उस पर पाखण्ड खण्डिनी भगवी पताका फहराई और पाखण्डी सम्प्रदायों का धुआंधार खण्डन आरम्भ किया। सैकड़ों लोग आपके द्वारा दिए जाने वाले सत्य-ज्ञान के सन्देश को सुनने के लिए उमड़ते रहे। उनकी भ्रान्तियों का निवारण होता रहा और लाखों व्यक्तियों ने पाखंडों से मुख मोड़कर वेद के वास्तविक ज्ञान की निर्मल गंगा में स्नान कर अपने जीवन की सही राह पाई। श्रद्धालु जनों ने जो कुछ भी श्रद्धा सहित समर्पित किया, उसे भी आपने भूखे नंगों में बाँटकर सर्वत्यागी दयानन्द के रूप में पुनः विचरण आरम्भ कर दिया। उन्होंने मौन धारण कर गंगा के किनारे-किनारे विचरण आरम्भ किया। वे कनखल, लंढोरा शुक्रताल, परीक्षितगढ़, गढ़मुक्तेश्वर आदि स्थानों में एकांतवास भी करते रहे और मौन भी धारण किए रहे।

२१ वर्ष की इस घोर तपस्या के अनन्तर स्वामी जी पुनः धर्म प्रचार और पाखंड खंडन की दिशा में प्रवृत्त हो गए। संवत् १९२५ में आप कर्णवास पहुंचे। यहीं ज्येष्ठ शुक्ला दशमी को गंगा स्नान के मेले में करौली के रईस कर्णसिंह बडगूजर ने स्वामी जी पर अपनी तलवार का लोहा परखना चाहा। उन्होंने रासलीला में स्वामी जी को भी बुलाया किन्तु स्वामी दयानन्द ने उसमें सम्मिलित होना अस्वीकार कर दिया। इस अवहेलना पर क्रुद्ध होकर राव स्वामी जी की कुटिया पर आए। स्वामी जी ने निर्भयता सहित पाखंड का खंडन किया। उससे क्षुब्ध हो राव ने अपनी तलवार पर हाथ डाला। किन्तु स्वामी जी ने उनके हाथ से तलवार छीनकर उसे तोड़ डाला। रावकर्णसिंह हतप्रभ होकर वहाँ से अपने डेरे पर लौट गए।

यहाँ से स्वामी जी अलीगढ़ गए जहाँ एक पाखंडी ब्राह्मण ने पान में विष देकर स्वामी जी के प्राण लेने का असफल प्रयास किया। यह अपराधी जब बंदी बनकर स्वामी जी के समक्ष लाया गया तो स्वामी जी ने उसे क्षमा कर दिया। तदुपरांत अलीगढ़ से आप बैलोन, जलेसर आदि होते हुए सोरों आए। अम्बागढ़ में भी आपका मूर्ति-पूजा पर प्रबल शास्त्रार्थ हुआ और सुप्रसिद्ध नैयायिक अंगदराम शास्त्री ने भी स्वामी जी से परास्त होकर उनके प्रति श्रद्धा भक्ति व्यक्त की।

सोरों से स्वामी जी शाहबाजपुर पहुँचे, वहीं आपको दंडी स्वामी विरजानन्द जी के निधन का समाचार मिला। इस समाचार को सुनते ही आपके मुख से बरबस निकल पड़ा "आज संस्कृत व्याकरण का सूर्य अस्त हो गया।" शाहबाजपुर से ककोड़े (बदायूँ), नरौली कम्पिल और कायमगंज होते हुए फर्रुखाबाद आए। वैदिक धर्म के पावन प्रचार का क्रम अबाध गति से जारी रखा। फर्रुखाबाद में आपके प्रयास से पं० विश्म्भरनाथ ने एक संस्कृत पाठशाला का निर्माण कराया। यहाँ से प्रस्थान कर कानपुर, कन्नौज आदि होते हुए आप काशी महानगरी में पधारे। वहाँ भी आपके सत्यधर्म प्रचार की धूम मच गई। महाराजा रामनगर भी चाहते थे कि स्वामी दयानन्द का काशी के पंडितों से शास्त्रार्थ हो, अन्ततः कार्तिक सुदी १२ मंगलवार संवत् १९२६ को काशी के पंडितों से स्वामी जी का शास्त्रार्थ हुआ। अनेक प्रकार के छल-प्रपंचों के बाद भी स्वामी जी का लोहा विरोधियों को भी मानना पड़ा। इसके उपरांत भी स्वामी जी सात बार काशी आए, किन्तु उनके बार-बार आह्वान करने पर भी कोई उनसे शास्त्रार्थ के लिए तैयार न हुआ।

काशी से आप कुम्भ के अवसर पर प्रयाग भी पहुँचे। वहाँ भी गंगातट आपके पावन उपदेशों से गूँज उठा। आप वहाँ से मीरजापुर, डुमरांव व एटा होते हुए पटना

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पधारे। दानापुर में जिस दिन ईसाई मत पर आपका व्याख्यान हुआ उस दिन भारत के तत्कालीन जंगी लाट लार्ड रॉब्र्टस भी आपका उपदेश सुनने पधारे और व्याख्यान के अन्त में आपने श्रद्धासहित स्वामी जी को प्रणाम कर मुक्त कंठ से उनकी प्रशंसा करते हुए कहा "वास्तव में ही सच्चे संन्यासी को संसार में किसी से कोई भय नहीं होता।"

पटना के उपरांत मुंगेर होते हुए भागलपुर आए और यह नगरी भी एक मास तक उनके सदुपदेशों से गूंजती रही। यहीं बर्दवान नरेश ने भी ४ नैयायिक पंडितों सहित आपके दर्शन किए।

संवत् १९२९ में बैरिस्टर चन्द्रशेखर सेन के प्रयास से आप कलकत्ता भी गए और वहाँ श्री सुरेन्द्र मोहन ठाकुर के प्रमोद कानन में आपने आसन लगाया और धर्मोपदेश किया। यहाँ से आप हुगली, छपरा व डुमरांव में शास्त्रार्थ करते और वैदिक धर्म का पुनीत पथ लोगों को दर्शाते हुए काशी आए और वहाँ से प्रयाग पहुँचे, जहाँ विभिन्न मतावलम्बियों से आपका शास्त्रार्थ हुआ। ईसाई पादरी नीलकांत और मौलवी निजामुद्दीन सरीखे धर्म प्रचारकों को भी आपने वेदों के ज्ञान और विज्ञान से अवगत कराया।

आप मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र होते हुए बम्बई पहुँचे और वहाँ ही आपने १८७५ ई० (चैत्र सुदी प्रतिपदा संवत् १९३१) में भ्रमजाल से ग्रस्त जनता जनार्दन में निर्मल वैदिक ज्ञान का प्रचार व प्रसार क्रम जारी रखने हेतु आर्य समाज की स्थापना की और विश्व का उपकार करना ही इसका मुख्य उद्देश्य घोषित किया।

महर्षि अपने कार्य को व्यापक एवम् स्थायी रूप देते जा रहे थे। उन्होंने संस्कृत साहित्य में सुधार का आन्दोलन भी प्रारम्भ किया। बम्बई में आपने 'आर्याभिविनय' नामक पुस्तक की रचना की। तदुपरान्त आपने भारतीय वेद भाष्यों की छानबीन के साथ ही साथ यूरोपीय विद्वानों (विलसन व मैक्समूलर) के वेद भाष्यों को भी एक बंगाली सज्जन की सहायता से पढ़ा। अन्ततः उन्होंने ऋग्वेद भाष्य भूमिका भी लिखी। सम्वत् १९३३ के भाद्र मास के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा का दिवस सदैव स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा। उसी दिन भारत उद्धारक महर्षि दयानन्द ने प्राचीन ऋषि मुनियों से चली आई ईश्वर प्रदत्त वेदनिधि को भारतीय जनता को सौंपना आरम्भ किया था।

इग्लैंड की महारानी विक्टोरिया को राज राजेश्वरी घोषित कराने के लिए १८७७ में लार्ड लिटन ने दिल्ली दरबार आयोजित किया था। इसी अवसर पर महर्षि ने वेदों के पावन प्रकाश में विभिन्न मतावलम्बियों को एकता का प्रशस्त पथ दिखाने का भी प्रयास किया किन्तु कतिपय नेताओं की हठवादिता से आपका प्रयास सफल न हो पाया।

इस पर भी धुन के धनी दयानन्द अपने कार्य में लगे रहे और दिल्ली से मेरठ होते हुए चांदापुर के मेले में पहुँचे और वहां भी अपने वैदिक ज्ञान का महान् प्रकाश जनता जनार्दन को दिखाया।

चांदापुर से स्वामी दयानन्द लुधियाना पहुँचे। वहां वेदसुधा सरसाने के बाद आप लाहौर चले गये और २४ जून, १८७७ ई० को लाहौर नगर में आर्य समाज

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

की स्थापना की गई। वहां से आप अमृतसर आये। तदुपरांत रावलपिंडी, वज़ीरबाद, गुजरात, व मुलतान में आपने वेदों का पावन नाद गुंजाया और जालन्धर से सहारनपुर तथा वहां से मेरठ आए और लगभग १२ मास तक यहाँ ठहरे। तदुपरांत आप दिल्ली होते हुए अजमेर गए जहाँ आपका ग्रे नामक एक अँग्रेज से बाइबिल पर शास्त्रार्थ हुआ। जब वह ऋषि के समक्ष हतप्रभ होने लगा तो उसने अपनी सहायतार्थ पादरी हसबैंड को बुलाया किन्तु उन्हें निराशा ही पल्ले पड़ी। अजमेर से ऋषि पुनः हरिद्वार में कुम्भ के अवसर पर पधारे और वहां पुनः आपने पाखण्ड का खण्डन व वैदिक मत का मंडन किया।

सन् १८७८ में सहारनपुर में महर्षि से थियोसोफिकलसोसाइटी के प्रमुख कर्नल अलकाट व मैडम ब्लेवट्स्की ने भी आपसे भेंटें कीं और वे भी आपसे प्रभावित हुए बिना न रह पाये।

सहारनपुर से महर्षि सातवीं बार काशी पधारे। यहीं आपने राजा शिवप्रसाद के प्रथम निवेदन पर सत्यार्थप्रकाश रचा। इस बार महर्षि लगभग ६ मास तक काशी में रहे और वहां से आगरा, भरतपुर, इन्दौर आदि का भ्रमण करते हुए बम्बई पहुँचे। वहाँ आपने एक प्रमुख अमरीकी तथा ईसाई धर्म प्रचारक जोजफ के गर्व को धूल धूसरित किया। इसी प्रवास के दौरान इंग्लैण्ड के सुप्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृत अनुरागी मोनियर विलियम्स ने महर्षि से भेंट कर अपनी चिर आकांक्षा पूर्ण की।

बम्बई से ही महाराणा उदयपुर के निमन्त्रण पर आप उदयपुर गए और आपने महाराणा सज्जन सिंह को संस्कृत की शिक्षा तो दी ही साथ ही उनकी जीवन सरिणी को भी सुरा और सुन्दरी से सर्वथा विरक्त वैदिक ज्ञान की गंगा में स्नान भी कराया।

महर्षि अमावस सम्वत् १९३९ को उदयपुर से शाहपुर पधारे और शाहपुराधीश श्री नाहर सिंह को दीक्षा दी। वहां से आप जोधपुर नरेश के निमन्त्रण पर चले गए। जोधपुर नरेश ने आपका भावभीना स्वागत किया तथा जोधपुर नगरी में भी आपके व्याख्यानों की धूम मच गई।

एक दिन स्वामी जी आमन्त्रित होकर राजमहल में जोधपुराधीश को दर्शन देने के निमित्त गए। निर्भीक संन्यासी ने भयरहित होकर महल में प्रवेश किया। संयोगवशात वहां उसी समय वेश्या "नन्ही जान" भी आई हुई थी। स्वामी जी के आगमन का समाचार सुनकर महाराजा असमंजस में पड़ गए और वेश्या की पालकी को बड़ी शीघ्रता से उठवाने लगे तथा पालकी को कन्धा भी लगा दिया।

जोधपुर नरेश की शोंचनीय दशा देख महर्षि ने अपने उपदेश में देश के देशी नरेशों के दुश्चरित्र के चित्र खींचे और स्पष्ट शब्दों में कहा कि ये सिंह अब श्वान के तुल्य हो गए हैं।" महाराजा भी उनके उपदेशों से प्रभावित हुए बिना न रहे।

पोपलीला पर हो रहे इन कुठारों के कारण पाखण्ड के प्रहरी स्वामी जी के प्राणों के ग्राहक बन गए। ऐसे ही एक नराधम ने स्वामी जी को २९ सितम्बर १८८३ को दूध में विष दे दिया। औषधि उपचार भी हुआ किन्तु पीड़ा बढ़ती

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

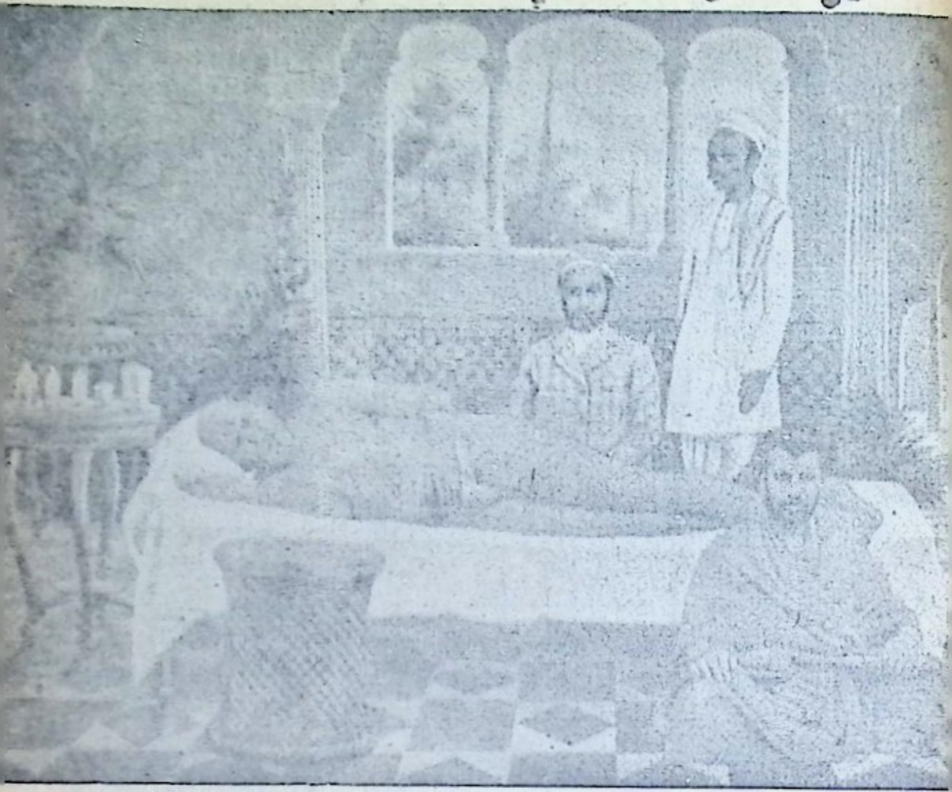

महर्षि दयानन्द : मृत्यु शैय्या पर

ही गई। किन्तु दयानन्द तो दयानन्द ही थे। रोग की विषैली ज्वाला से सन्तप्त होते हुए भी अपने अनिष्ट करने वाले का अनिष्ट करना आपको न भाया और आपने ब्रह्मघाती रसोइए जगन्नाथ को बुलाया। अपराध स्वीकार कर लेने पर उन्होंने स्वयं ही जगन्नाथ को कुछ धन देकर नेपाल चले जाने का परामर्श देकर राठौर राज्यों से बाहर भेज दिया।

कतिपय आर्य पुरुषों के परामर्श पर स्वामी जी को अजमेर ले आया गया। वहां डॉ० लक्ष्मणदास का उपचार शुरू हुआ परन्तु रोग में कोई अन्तर न आया। डॉ० न्यूटन और हकीम पीर जी आदि ने भी आपको देखा। किन्तु अब तो स्वामी जी के रोम-रोम में विष व्याप्त हो चुका था। अन्ततः संध्या ६ बजे दीपावली के दिन कार्तिक बदी अमावस १९४० वि०, (३० अक्टूबर, १८८३ ई०) को मंगलवार के दिन महर्षि सूर्य मण्डल के साथ-साथ इस जीवन संध्या में स्वयं अस्त हो गए और अपने पीछे दीपकों के समान लाखों आर्य पुरुषों के हृदय दीपकों को अज्ञान के अंधकार का नाश करने के लिए वेद की ज्योति को जला गए।

वे चले गए पर उनका कार्य हमें प्रेरणा दे रहा है·········प्रकाश फैलाने और अन्धकार मिटाने की।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—: वेदवाणी :—

जयति जय जय वेद वाणी ।

मधुर मङ्गल कारिणी, जनतारिणी शुचि 'प्रणव'-वाणी ॥१॥

ज्ञान पुञ्ज प्रदायिका है लोक में आलोक लाती
पथ-प्रदर्शन की धरोहर मुक्ति से मनुको मिलाती
युग युगों से कर रहे हैं ऋषि मुनीश्वर आगवानी ॥१॥

सृष्टि के सिद्धान्त की गुरु ग्रन्थियाँ जो खोलती है
त्रित्व के पञ्चम स्वरों में कोकिला सी बोलती है
पान करते हैं रसायन प्रेम से प्रिय प्राण-प्राणी ॥२॥

ज्ञान या विज्ञान की जो आदि उद्गम तालिका है
मानसिक आध्यात्म रथ की शालिनी सञ्चालिका है
विश्व विजयनि वैजयन्ती ला रही है विश्व रानी ॥३॥

विश्व-भाषाएँ कि जिसको जननि अपना मानती हैं
विविध धर्म प्रणालियाँ जिसको सनातन जानती हैं
ऋषि चतुष्टय के हृदय में उदित किरणें स्वर्ग-पाणी ॥४॥

सत्य उस 'जगदीश'[1] की ही लें 'मनोहर'[2] मधु ऋचाएँ
ऋग् यजुओ साम अथर्वका भाष्य भाषा का सजाएँ
क्यों न 'भारत'[3] में प्रफुल्लित आर्य हों 'राकेश रानी'[4] ॥५॥

आज उस ही भारती की आरती सब ही उतारें
ज्ञान-जन जन में समाये अङ्कुव्रत स्वाध्याय धारें
स्वप्न हों साकार ऋषि के श्रुति धराञ्चल की धुराणी ॥६॥

—"प्रणव" शास्त्री एम० ए०

---

१. श्री जगदीश विद्यार्थी । २. श्री मनोहर विद्यालंकार ।
३. श्री भारतेन्द्रनाथ । ४. श्रीमती राकेश रानी ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वैद्य गुरुदत्त

महाभारत का परिचय

महाभारत विश्व का एक महान् ग्रन्थ है। इसमें पूर्ण रूप से अर्थ और धर्म का आदेश है। उसमें इतिहास है तो अतिपावन व मोक्षदायिनी बुद्धि का उपदेश भी है। अमित बुद्धि वाले श्री व्यास ने इसमें धर्मशास्त्र और उत्तम अर्थशास्त्र तथा सर्वोत्तम मोक्ष शास्त्र का वर्णन किया है। धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र मोक्ष, शास्त्र के वर्णन में कुछ कथाएं इस प्रकार लिखी मिलती हैं, जो इतिहास की नहीं वरंच सत्य हैं। सत्य इस अर्थ में, कि उन कथाओं के निष्कर्ष शास्त्र सत्य का निरूपण करते हैं।

भारतीय साहित्य में रामायण और महाभारत का अति उच्च स्थान है। बाल्मीकि रामायण तो काव्य की दृष्टि से एक अत्युत्तम ग्रन्थ है। वैदिक संस्कृति का बहुत श्रेष्ठ निरूपण इसमें मिलता है और तत्कालीन इतिहास वर्णन भी है। बाल्मीकि जी ने इसके उत्तर काण्ड में राम जीवन की पृष्ठ भूमि लिख दी है।

परन्तु महाभारत तो रामायण से बड़ा है और इसका क्षेत्र भी रामायण से अधिक विस्तृत है। यह ग्रन्थ क्या है, अर्थात् इसमें क्या लिखा है और जो कुछ लिखा है वह किस काल के साथ सम्बन्ध रखता है? यह भी इस ग्रन्थ में वर्णन किया गया है।

हम महाभारत के ग्रन्थ में से ही महाभारत का परिचय देना चाहते हैं। यह ग्रन्थ सत्यवती-नन्दन महर्षि व्यास जी का लिखा माना जाता है। इस ग्रन्थ का पहली बार पारायण महाराज जनमेजय के समक्ष महर्षि व्यास के शिष्य वैशम्पायन ने किया था और उन्होंने पारायण आरम्भ करने से पूर्व यह कहा था—

इदं शतसहस्त्रं हि श्लोकानां पुण्यकर्मणाम्।
सत्यवत्यात्मजेनेह व्याख्यातममितौजसा॥

म०भा० १-१ ६२-१४

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अर्थात् अमित तेज रखने वाले सत्यवती नन्दन श्री व्यास जी ने एक लाख श्लोकों वाला यह ग्रन्थ पुण्य-कर्म करने वाले (पाण्डवों) के विषय में लिखा है। इस एक श्लोक में श्री वैशम्पायन जी ने ग्रन्थ लेखक को सत्यवती नन्दन लिखकर यह प्रकट किया है कि पाण्डवों के बाबा के भाई ने ही महाभारत ग्रन्थ लिखा है, जिसमें एक लाख श्लोक हैं।

परन्तु इस समय उपलब्ध महाभारत में इतने श्लोक नहीं मिलते। कुछ कतिपय समालोचकों का यह कहना है कि इसमें कुछ श्लोक पीछे से मिलाये गए हैं। नीलकण्ठी टीका में ४८००० के लगभग श्लोक मिलते हैं; हरिवंश के सोलह सहस्र मिलाने से संख्या एक लाख के लगभग बन जाती है।

पूना के आलोचनात्मक संस्करण में तो श्लोक और भी कम हैं। परन्तु इस योजना में कम होने की सम्भावना ही है, कारण यह कि इस संस्करण में उन श्लोकों को ही लिया गया है जो अधिक से अधिक संस्करणों में मिलते हैं।

यह बात तो सन्देह रहित है कि महाभारत बहुत बड़ा ग्रन्थ है इसमें एक लाख के लगभग श्लोक हैं और अनेक विषयों पर व्याख्यान हैं। वैशम्पायन जी कहते हैं—

अस्मिन्नर्थश्च धर्मश्च निखिलेनोपदिश्यते।
इतिहासे महापुण्ये बुद्धिश्च परिनैष्ठिकी॥
धर्मशास्त्रमिदं पुण्यमर्थशास्त्रमिदं परम्।
मोक्षशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामितबुद्धिना॥

म०भा० १-१-६२-१७, २३

अर्थात् इस ग्रन्थ में पूर्ण रूप से अर्थ और धर्म का उपदेश है। इसमें इतिहास है और महा पवित्र मोक्ष दिलाने वाली बुद्धि का भी उपदेश है। अमित बुद्धि वाले व्यास जी ने इसमें धर्मशास्त्र और उत्तम अर्थशास्त्र और सबसे उत्तम मोक्ष शास्त्र का वर्णन किया है। धर्म शास्त्र, अर्थ शास्त्र मोक्ष शास्त्र के वर्णन में कुछ कथाएं इस प्रकार लिखी मिलती हैं जो इतिहास तो नहीं, वरंच सत्य हैं; सत्य इस अर्थ में कि उन कथाओं के निष्कर्ष शाश्वत सत्य का निरूपण करते हैं।

महाभारत ग्रन्थ का परिचय प्राप्त करने के लिए हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि उन कथाओं को इतिहास का अंग नहीं मान लेना चाहिए। वे किसी शाश्वत सत्य को प्रकट करने के लिए लिखी गई हैं। उदाहरण के रूप में ययाति कथा है। ययाति किसी कारण से पुंसत्वहीन हो गया था। महर्षि शुक्राचार्य ने उसे यौवन प्राप्त करने का एक उपाय बताया। ययाति ने उस उपाय का प्रयोग कर अपने पुत्र पुरु का यौवन प्राप्त कर लिया और फिर उस यौवन से—

पौरवेणाथ वयसा ययातिर्नहुषात्मनः।
प्रतियुक्तो नृपश्रेष्ठश्चचार विषयान् प्रियान्॥
यथाकामं यथोत्साहं यथाकालं यथासुखम्।
धर्माविरुद्धं राजेन्द्र यथार्हति स एव हि।

म०भा० १-१-१-८५-१, २

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इसका अर्थ है कि महाराज ययाति ने पुरु का यौवन प्राप्त कर प्रिय विषयों का भोग प्रसन्नता पूर्वक आरम्भ कर दिया। जिनकी जैसी कामना, उत्साह (सामर्थ्य) और समय होता है उसके अनुसार विषयों का भोग धर्मानुसार माना जाता है, और वे यह सब करते थे। इस विषय में यह लेख है—

विश्वाच्या सहितो रेमे व्यभ्राजन्नन्दने वने।
अलकायां स कालं तु मेरुश्रृङ्गे तथोतरे॥
यदा स पश्यते कालं धर्मात्मा तं महीपतिः।
पूर्णां मत्वा ततः कालं पूरुं पुत्रमुवाच ह॥

(म० भा० १-१-८५-६, १०)

ययाति विश्वाची अप्सरा के साथ अलकापुरी में मेरु पर्वत पर रमण करते रहे। यह कार्य सहस्र वर्ष तक चलता रहा जब उस धर्मात्मा राजा ने देखा कि यौवन-काल समाप्त हो रहा है तब वहाँ से अपने पुत्र के पास आ गया और उसका यौवन वापस कर दिया।

यह कथा है। इसमें कितना सत्य है और कितना अंश कल्पना का है, यह विचारणीय नहीं। महर्षि व्यास ने इस कथा के द्वारा एक बात का वर्णन किया है। वह यह कि भोग विलास यदि मर्यादा के भीतर हो तो उसकी प्राप्ति पर भी मनुष्य धर्मात्मा बना रह सकता है। इतना धर्मात्मा, कि जीवन के अन्त होने पर वह स्वर्ग लोक को प्राप्त हो सके।

स्वर्गमितो गतः (म० भा० १-१-८६-२)

यह स्वर्ग लोक उनको विषय भोग करने के परिणाम से नहीं मिला। न यह विश्वाची अप्सरा के साथ रमण करने का ही फल था। इस स्वर्ग प्राप्ति के कारण को महर्षि इस प्रकार स्पष्ट करते हैं:

देवानतर्पयद् यज्ञैः श्राद्धैस्तद्वत् पितृनपि।
दीनाननुग्रहैरिष्टैः कामैश्च द्विजसत्तमान्॥
अतिथीनन्नपानैश्च विशश्च परिपालनैः।
आनृशंस्येन शूद्रांश्च दस्यून् संनिग्रहेण च॥
धर्मेण च प्रजाः सर्वा यथावदनुरञ्जयन्।
ययातिः पालयामास साक्षादिन्द्र इवापरः॥

(म० भा०-१-१-८६-३,४,५)

अर्थात् ययातिने यज्ञों के द्वारा देवताओं को, सेवा के द्वारा पितरों को, दीन दुखियों को अनुग्रह के अनुसार, मुँह मांगी भोग्य वस्तुएं ब्राह्मणों को देकर प्रसन्न किया। अतिथियों की अन्न-जल से, वैश्यों को उनके धन सम्पदा की रक्षा करके, शूद्रों को दया भाव से और लुटेरों को कैद कर और सम्पूर्ण प्रजाओं का धर्म-पूर्वक रक्षण और पालन कर उन्होंने साक्षात् इन्द्र के समान राज्य चलाया। इन कर्मों के करने से ययाति को स्वर्ग लोक में वास मिला, ऐसा महर्षि का कथन है। अभिप्राय यह कि काल, सामर्थ्य और कामनाओं के अनुसार धर्म-पूर्वक विषयों का भोग स्वर्ग प्राप्ति में बाधक नहीं होता।

यहां कथा के ऐतिहासिक होने का प्रश्न नहीं। यह तो धर्म के स्वरूप का वर्णन करने के लिए कथा लिखी गयी है। महर्षि को यहां यह बताना अभीष्ट था कि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

काल सामर्थ्य और धर्मानुसार विषयों के सेवन से मनुष्य को स्वर्ग लोग प्राप्त करने में बाधा नहीं होती। हाँ स्वर्ग प्राप्ति के लिए देवताओं को प्रसन्न करने के निमित्त यज्ञ आवश्यक है। दीन-दुखियों पर अनुग्रह, वैश्यों का रक्षण, शूद्रों पर दया भाव और दुष्टों को कठोर दण्ड; ये सब स्वर्ग प्राप्ति में साधक हैं। श्री महाभारत में इस प्रकार की अनेक कथाएँ हैं। कई कथाओं में ऐतिहासिक घटनाओं के कारण भी बताये गए हैं। जैसे धर्म का निरूपण करने में उक्त कथा लिखी गई है, वैसे ही घटनाओं का कारण करने में भी कल्पना से काम लिया गया है। यहाँ हम द्रोपदी के पांच पतियों की कथा का उल्लेख करते हैं।

कथा इस प्रकार है। महाराज द्रुपद ने अपनी पुत्री द्रोपदी का स्वयंवर रचा था। उस समय पाण्डु के पांचों पुत्र अपनी माता कुन्ती के साथ वन में अज्ञातवास करते थे। भ्रमण करते हुए महर्षि व्यास जी मिल गए और वे चाहते थे कि पाण्डव द्रोपदी से विवाह कर लें, कथा तो यह है कि महर्षि जानते थे कि द्रोपदी को महादेव का वर है कि उन्हें पांच पति प्राप्त होंगे। अतः उन्होंने द्रोपदी का, पूर्व जन्म में, एक ऋषि की कन्या होना और अपने लिए योग्य वर माँगने के लिए भगवान् की उपासना करना, तथा भगवान् का प्रसन्न हो द्रोपदी को वर देने की बात सुना दी। महर्षि ने बताया था कि जब वर दिया तो ऋषि कन्या ने आग्रह पूर्वक बार-बार कहा, भगवन्! मुझे योग्य वर प्रदान करिए। द्रोपदी का बार-बार कहने का कारण यह था कि वह वर प्राप्ति के लिए आतुर थी, परन्तु भगवान् शिव ने कहा;.........

पञ्चकृत्वस्त्वया ह्युक्तः पतिं देहीत्यहं पुनः।

(म०भा० १-१-१६८-१३)

अर्थात्, तुमने मुझसे पांच बार कहा कि मुझे तुम्हें वर चाहिये इस कारण अगले जन्म में पाँच वर मिलेंगे।

अतः जब द्रोपदी का विवाह होने लगा तो जहाँ पांचों भाई आग्रह कर रहे थे कि उन पाँचों का विवाह द्रोपदी से होगा, वहाँ द्रोपदी इसे स्वीकार कर रही थी। कथा का सार यह है कि प्रत्येक घटना इस जन्म अथवा पूर्व जन्म के कर्म-फल से ही होती है। महर्षि ने बताया कि यह अधर्म भी नहीं है; ऐसी प्रथा भी है। अतः हमारा यह कहना है कि महाभारत में जहाँ इतिहास है, वहां ऐतिहासिक एवं कल्पित कथाओं द्वारा धर्म, अर्थ और मोक्ष की प्राप्ति के उपाय भी बताये गए हैं। इस कारण महाभारत एक पुराण है।

महाभारत में किसका इतिहास है? यह प्रश्न उपस्थित होता है। अतः हम महाभारत का परिचय देने में इस प्रश्न का उत्तर भी दे देना चाहते हैं। इसमें जगत् की रचना का इतिहास है। आदि देव परमात्मा और व्यक्त अक्षर से जगत् के आविर्भाव का इतिहास महाभारत में है; काल-गणना का भी वर्णन इसमें है। सत्य युग का भी जिसे आदि युग भी कहते हैं; इसमें संक्षिप्त-सा वर्णन है। विधिवत इतिहास त्रेतायुग से आरम्भ होता है और तदनन्तर चन्द्र वंशियों का इतिहास भारत युद्ध के अन्त तक इसमें वर्णित है। अतएव महाभारत मुख्यतः चन्द्र वंशियों के इतिहास का ग्रन्थ है। इतिहास से उतर कर यह धर्म, काम और मोक्ष की भी चर्चा करता है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धर्म-अर्थ और काम समाज के स्वरूप को बनाते हैं। इनका स्रोत तो व्यक्ति ही हैं। व्यक्ति धर्म को करता है। अर्थ का उपार्जन भी व्यक्ति ही करता है, और कामनाएँ तो व्यक्ति के लिए होती ही हैं, परन्तु महाभारत व्यक्तियों से समाज के निर्माण में कारण और इसका ढंग बताता है। अतएव समाज निर्माण और ढंग में वर्ण-धर्म का उल्लेख भी इसमें मिलता है। वर्ण-धर्म के स्थापन और संचालन में राज्य व्यवस्था एक यन्त्र है, जिसका वर्णन भी महाभारत में विद्यमान है।

इस प्रकार महाभारत में मानव के व्यवहार और कल्याण की पूर्ण सामग्री उपस्थित है इस कारण इसे ज्ञान का भण्डार और वेद का प्रतीक माना जाता है।

वैशम्पायन की उक्ति है—

इदं हि विदैः समितं पवित्रमपि चोत्तमम्।
श्रांव्याणामुत्तमं चेदं पुराणमृषिसंस्तुतम्॥
(म०भा० १-१-६२-१६)

अर्थात् यह महाभारत ऋषियों द्वारा स्तुत है, सुनने के योग्य और उत्तम है, तथा ज्ञान का भण्डार है।

लक्ष्मी कहां रहती है ?

वसामि नित्यं सुभगे प्रगल्भे दक्षे नरे कर्मणि वर्तमाने।
अक्रोधने देवपरे कृतज्ञे जितेन्द्रिये नित्यमुदीर्णसत्त्वे॥

लक्ष्मीजी रुक्मणीजी से बोलीं—देवि ! मैं प्रतिदिन ऐसे पुरुष में निवास करती हूँ जो सौभाग्यशाली, निर्भीक, कार्यकुशल, कर्मपरायण, क्रोधरहित, देवाराधन-तत्पर, कृतज्ञ, जितेन्द्रिय तथा बढ़े हुए सत्वगुण से युक्त हो।

नाकर्मशीले पुरुषे वसामि न नास्तिके साङ्करिके कृतघ्ने॥
न भिन्नवृत्ते न नृशंसवर्णे न चापि चोरे न गुरुष्वसूये॥

जो पुरुष अकर्मण्य, नास्तिक, वर्णसंङ्कर, कृतघ्न, दुराचारी, क्रूर, चोर तथा गुरुजनों के दोष देखने वाला हो, उसके भीतर मैं निवास नहीं करती हूँ।

वसामि स्त्रीषु कान्तासु देवद्विजपरासु च।
विशुद्धगृहभाण्डासु गोधान्याभिरतासु च॥

जो स्त्रियाँ कमनीय गुणों से युक्त, देवताओं तथा ब्राह्मणों की सेवा में तत्पर, घर के वर्तन-भाण्डों को शुद्ध तथा स्वच्छ रखने वाली एवं गौओं की सेवा तथा धान्य के संग्रह में तत्पर होती हैं, उनमें सदा मैं निवास करती हूँ।

पापामचोक्षामवलेहिनीं च व्यपेतधैर्यां कलहप्रियां च।
निद्राभिभूतां सततं शयानामेवंविधां तं परिवर्जयामि॥

जो स्त्री पापाचार में तत्पर रहने वाली, अपवित्र, चटोरी धैर्यहीन, कलहप्रिय, नींद में बेसुध होकर सदा सोये रहने वाली है, ऐसी नारी से मैं सदा दूर ही रहती हूँ।
(महाभारत, अनुशासनपर्व ११वां अध्याय)

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

महर्षि दयानन्द के दिव्य स्वप्नों की पूर्ति व
धरती पर वैदिक विचारधारा का साम्राज्य
स्थापित करने के लिए

— ० ० —

दीवाली के दिन : भारत को
ज्ञान समृद्ध करने हेतु

"दयानन्द संस्थान" के सदस्य बनिये
(पंजीकृत ट्रस्ट)

१००१)	प्रति वर्ष	देकर	"संरक्षक-सदस्य"
५०१)	"	"	"पोषक-सदस्य"
२५१)	"	"	"प्रेरक-सदस्य"
१०१)	"	"	"संचालक-सदस्य"
५१)	"	"	"दाता-सदस्य"
२५)	"	"	"सहायक-सदस्य"
११)	"	"	"प्रचारक-सदस्य"

आपका सहयोग ही हमारी शक्ति है।

विनीत—
अध्यक्ष
दूरभाष : ५६६६३९
दयानन्द संस्थान,
नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

क्या आप ने

वेद भाष्य प्रकाशन के लिए

अपनी आहुति भेज दी है ?

यदि आप संसार में

'वेद' का प्रचार चाहते हैं तो

आज ही : दीवाली मनाते हुए

卐

उदारता पूर्वक श्रद्धा से

पवित्र यज्ञ में

आहुति दीजिए

卐

१२,५०० वेद भाष्य छपाने का

पुण्य और गौरव प्राप्त कीजिए

अध्यक्ष, दयानन्द संस्थान

नई दिल्ली-५

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

—: लेखक :—
—आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री

वेद प्रतिपादित
मानव-वर्ण-विभाग

संसार की सामाजिक व्यवस्था को सुव्यवस्थित करने के लिए आज नाना प्रकार बताये जाते हैं; किन्तु हमारा यह निश्चित मत है कि वैदिक वर्ण व्यवस्था प्राकृतिक है, और विश्व का कोई भाग कभी इसके बिना न अपना कार्य चला सका है, न चला सकेगा। जन्म से सभी समान हैं और फिर जैसे कर्म हम करते हैं वह बन जाते हैं। इसी तथ्य को प्रभावशाली ढंग से विद्वान् लेखक ने प्रस्तुत लेख में प्रतिपादित कर अंधकार में भटकने वालों को नयी ज्योति प्रदान की है। कोई न देखे तो इसमें हमारा क्या दोष ? —संपादक

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज की अटूट इकाई है। व्यक्ति ही समाज की इकाई होती है, और वही समाज को निर्मित करती है। मनुष्य की इस व्यक्ति को व्यक्त करने वाला 'अहम्' पद है। इसका व्यवहार इस तथ्य को ही सूचित करता है। 'अहम्' का अर्थ 'अहन् अर्थात् जो हना या काटा न जावे—है। वह मानव व्यक्ति का द्योतक 'अहम्' इस भाव का व्यंजक है कि मनुष्य व्यक्ति समाज की वह यूनिट है जो पुनः बाँटी नहीं जा सकती। मनुष्य में समाज निर्माण की योग्यता है अतः वही इस समाज का व्यक्तिरूप अंग भी हो सकता है। पशुओं के समूह को समाज न कहकर 'समज' कहा जाता है और मनुष्य के संघ को समाज कहा जाता है। कारण यह ही है कि मानव-व्यक्ति समाज के प्रति कुछ कृतज्ञता और कुछ अधिकार दोनों ही रखती है। पशु में ये दोनों बातें नहीं हैं। कृतज्ञता और अधिकार के मिश्रण की भावना ने ही समाज के निर्माण की प्रेरणा दी है। राष्ट्र भी समाज का ही एक उदात्त रूप है अन्य कुछ नहीं। कोई समाज एवं राष्ट्र अपने अंगों की योग्यता पर ही आधारित है। अंग ठीक है तो अंगी चल सकेगा अन्यथा विश्लथ हो नष्ट-भ्रष्ट हो जावेगा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद में और तत्सम्बन्धी साहित्य में समाज के इकाईभूत मानव को चार भागों में बाँटा गया है। ये विभाग पैतृकता के आधार पर नहीं अपितु इनकी योग्यता—अर्थात गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार हैं। वेद में समाज की कल्पना एक 'पुरुष' एवं विराट् पुरुष के रूप में मिलती है इस पुरुष अर्थात् समाज के अंग चार प्रकार के व्यक्ति कहे गये हैं। वे चारों अंग—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र शब्दों में व्यवहृत हैं। किसी समाज को चार शक्तियों की आवश्यकता है—मस्तिष्क (Mind), बाहुबल-सैन्य (Military or Defence), वैश्य (Trader) और शूद्र (Labour)। इन चारों को बतलाने के लिए पूर्वोक्त चारों शब्दों का प्रयोग है। यजुर्वेद ३१।१०-११[1] मन्त्रों में इसका उल्लेख है। यही मन्त्र ऋग्वेद १०।९०।११-१२ में आया है और अथर्व १९।६।५-६ में भी थोड़े पाठ भेद से विद्यमान है। प्रथम यह प्रश्न उठाया गया है कि जिस विराट् पुरुष अर्थात् समाज की कल्पना की गई—उसका मुख क्या है? बाहु क्या है और ऊरू क्या है? तथा पांव क्या है? दूसरे मन्त्र में उत्तर दिया गया है—ब्राह्मण इसके मुख के रूप में है, क्षत्रिय बाहु, वैश्य ऊरू और शूद्र पांव सदृश है। जिस प्रकार शरीर में चारों अंग आवश्यक हैं वैसे ही समाज में भी इन चारों की आवश्यकता है। शरीर में चारों ही अंग अपने कार्यों की दृष्टि से उपयोगी हैं और समाजरूपी अंगी को भी इन चारों की आवश्यकता है। समाज में मस्तिष्क का कार्य करने वाले, फौजी रक्षा करने वाले, व्यापारी और श्रमिक वर्ग इन चारों की ही आवश्यकता है। जो लोग वर्ण-व्यवस्था नहीं मानते उनके यहाँ भी ये चारों भेद उपस्थित हैं। मनुष्य जब एक है तो ये चारों भेद कैसे उठे? इसका वेदों के सिद्धान्तानुसार यही उत्तर हो सकता है कि योग्यता भेद से। वैदिक ग्रन्थों के ऊहापोह से योग्यता का अर्थ गुण, कर्म और स्वभाव निकलते हैं। सृष्टि में मानव जन्म से छोटा-बड़ा नहीं पैदा हुआ। उसमें भेद योग्यता से हुआ। क्योंकि सबकी योग्यता एक-सी नहीं होती। ऋग्वेद ५।६०।५[2] में यह बतलाया गया है कि सर्गारम्भ में समयगत ज्येष्ठ और कनिष्ठभाव से रहित धन और ऊंच-नीच की भावना से रहित युवा मनुष्य पैदा होते हैं। सब भाई-भाई से हैं और अपने-अपने अभ्युदय के लिए प्रयत्न करते हैं। अजर-अमर परमेश्वर उनका पिता और पृथ्वी उनकी माता है—यह भावना उनके साथ है। मन्त्र से सब में समानता का भाव है यह व्यक्त किया गया है। इस समानता के रहते हुए भी गुण, कर्म, स्वभाव से मानवों में पुनः समाज में भेद हो जाता है। ऐसा भेद क्यों? इसका समाधान भी ऋ० १०।११७।९[3] में इस प्रकार किया गया है, दोनों हाथ समान हैं लेकिन कार्य समान नहीं, एक ही गाय की दो सन्तानें समान दूध नहीं देतीं। एक माता से उत्पन्न युगल सन्तानों में भी समान बल नहीं होता, एक समाज के दो

---

१. यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत् की बाहू का ऊरू पादा उच्येते॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्ययद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत॥

२. अज्येष्ठासो अकनिष्ठासएते संभ्रातरो वावृधुः सौभगाय।
युवा पिता स्वपारुद्र एषां सुदुघा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः॥

३. समौ चिद्धस्तौ न समं विविष्टः संमातरा चिन्न समं दुहाते।
यमयोश्चिन्न समा वीर्याणि ज्ञाती चित् सन्तौ न समं पृणीतः॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

व्यक्तियों की योग्यता और देयशक्ति बराबर नहीं होती। इस प्रकार मनुष्य समान होते हुए भी योग्यता से भेद को प्राप्त हो जाते हैं। भेद कारण को एक दूसरे स्थल पर ऋ० १।११३।६[1] में दूसरे प्रकार से भी दिखलाया गया है। वहाँ पर ऐसा कहा गया है कि मनुष्यों में एक को राष्ट्र सम्बन्धी कार्य के लिए एक को बड़े-बड़े यज्ञों और ज्ञानयज्ञों के लिए, एक को अर्थ के लिये और एक को चलने, फिरने, सेवा करने के लिए प्रवृत्त किया गया है। इससे स्थिति स्पष्ट हो जाती है कि मनुष्य में चार भेद क्यों हुए ? वेद मन्त्र ने सबकी शक्तियों का भेद बतलाते हुए ज्ञान, रक्षण, अर्थ और श्रम की योग्यता के भेद से ब्राह्मण आदि चार भेद मनुष्यों में बताये हैं। इन्हीं को चार वर्ण का नाम दिया जाता है। यह वर्ण भी इस पूर्वोक्त योग्यता के अनुसार एक चुनावमात्र है। योग्यता के अनुसार चुनकर श्रेणीबद्ध करना वर्ण बनाना है। ऋग्वेद में मनुष्यों के भेद का एक प्रकार दूसरा भी मिलता है। ऋ० १०।५३।५ में "**पञ्चजना**" मम होत्रं जुषन्ताम् तथा ६।४।४३ में पाञ्चजन्यया विशा और ६।६६।२० में अग्नि को पाञ्चजन्यः पुरोहित कहा गया है। इस "पांचजन्यः" शब्द के अर्थ को लेकर आचार्य लोग मानव के पाँच वर्गों में भी पूर्वोक्त चारों वर्ण आते हैं। पांचवा वर्ग वह है जो योग्यता से शून्य और इस दृष्टि से उसका वर्गीकरण नहीं किया जा सकता। अर्थात् वह योग्यता की कोटि में नहीं आता। फिर भी उसे यज्ञ आदि करने का अधिकार है। इस 'पांचजन्य' पद पर यास्क ३।२।७ पर कहते हैं—[2] किन्हीं आचार्यों के मत में गन्धर्व, पितर, देव, असुर और राक्षस—ये पांचजन्य हैं। परन्तु औपमन्यव के मत में—चार वर्ण और पांचवां निषाद—ये पांचजन्य हैं। यहाँ पर ऐसा ज्ञात होता है कि प्रथम भेद आश्रम के अनुसार और दूसरा वर्ण के अनुसार है। अन्य आचार्यों ने भी पांचजन्य पद से यह औपमन्यव का ही अर्थ अधिकतर लिया है। कुछ भी हो चार वर्ण गुण, कर्म, स्वभाव से होते हैं—इसकी सिद्धि यहाँ भी है निषेध नहीं। इस वर्ण के निर्धारण की व्यवस्था राजसभा एवं संसद् करती है। ऋग्वेद १०।१२५।५[3] में इस का वर्णन मिलता है। यह मन्त्र वागम्भृणीय सूक्त का है। 'अम्भृण' शब्द का अर्थ है बहुत। अतः वागम्भृणीय से तात्पर्य बहुतों की वाणी अर्थात् सभा से है। मन्त्र में सभा की उक्ति दिखलाई गई है। सभा कहती है कि जिसको चाहूँ उग्र अर्थात् गुण कर्म से ऊंचा बनाऊं और ब्राह्मण तथा ऋषि और विद्वान् की उपाधि दूं। ऋषि दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में लिखा है कि वर्ण की व्यवस्था राजसभा द्वारा होनी चाहिए। यह वस्तुतः इस पूर्व मन्त्र का ही भावार्थ है। वर्ण शब्द का अर्थ जाति नहीं जैसा कि आजकल कुछ लोग समझते हैं। वर्ण योग्यताजनित चुनाव, विशेषता अथवा श्रेष्ठता का द्योतक है। ऋग्वेद ३।३४।[4] और २।१२।४[5] मन्त्रों में वर्ण पद

---

१. क्षत्राय त्वं श्रवसे त्वं महीया इष्टये त्वंमर्थमिव त्वमित्यै ।
विसदृशा जीविताभि प्रचक्ष उषा अजिगर्भुवनानि विश्वा ॥
२. गन्धर्वाः पितरो देवा असुरा राक्षसीलोके ।
चत्वारो वर्णा निषाद् पंचम इत्यौपमन्यवः ॥
३. अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ।
यं कामये तंतमुग्रं करोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥
४. सांसानात्यां उत सूर्यं ससानेन्द्रः ससान पुरुभोसं गाम् ।
हिरण्यमुत भोगं ससान हत्वी दुस्यून् प्रार्य वर्णभावत् ॥
५. येनेमा विश्वा च्यवना कृतान यो दासं वर्णमधरं गुहाकः ।
श्वघ्नीव यो जिगीवांलक्षमाददर्यः पुष्टानि स जनास इन्द्रः ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि यह औपाधिक है और जाति का सूचक नहीं। इनमें से पहले मन्त्र में 'आर्य वर्णम्' और दूसरे में 'अधर वर्णम्' पद आये हैं। इनमें वर्णपद से 'जाति' का अर्थ निकलता नहीं दिखाई पड़ता। तात्पर्यतः यही कहना पड़ेगा कि वेदों में, मनुष्य में वर्ण विभाग को गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार ही स्थापित किया गया है। अथर्व १२।१।१५, ऋ० १।७।९ तथा अथर्व १२।१।४२ में क्रमशः जो 'पंचमानवा' 'पंचक्षितीनाम्:' और 'पंचकृष्टयः' पद आये हैं—ये भी पूर्वोक्त 'पांचजन्य' शब्द के अर्थ को ही बताते हैं। वर्ण सम्बन्धी भेदों को दिखलाते हुए यजुः० १८।४८ और अथर्व १८।६२।१[1] में इनमें तेज आने की प्रार्थना की गई है। समाज के ये प्रधान अंग हैं अतः इनमें तेजस्विता का होना ठीक ही है अन्यथा समाज का कार्य चल ही कैसे सके? अथर्ववेद वाले मन्त्र में इनके प्यारा बनाने की प्रार्थना की गयी है। आजकल कई लोग शूद्र को अनार्य कहते हैं, परन्तु यह ठीक नहीं। शूद्र भी आर्यों में ही हैं और वह चौथा वर्ण है। शूद्र शब्द का अर्थ कहीं-कही पर अनाड़ी और चोर डाकू है, ऐसी स्थिति में वह अर्थ के भेद से शूद्र वर्ण से अन्यतर और आर्येतर अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। वेद और स्मृतियों को देखने से जो थोड़ा-सा भेद कहीं-कहीं पर पड़ता है वह इस अर्थान्तर के ही कारण है। वेद के इस वर्णभेद का ही समर्थन स्मृतियों और इतिहास ग्रन्थों से भी मिलता है। यजुर्वेद ३१।८ के 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत्' मन्त्र के भाव को मनु ने १०।४५[3] में दर्शाते हुए इन्हें मुख, बाहू, उपज्ञ, आदि शब्दों से व्यवहृत किया है। वृहदारण्यक उपनिषद् के प्रथम अध्याय के चतुर्थ ब्राह्मण की ११-१२, काण्डिकाओं में वर्णो का उनकी क्रिया की उपयोगिता के आधार पर निर्माण बतलाया गया है। वहाँ लिखा है कि सृष्टि[4] के आरम्भ में एक ब्राह्मण वर्ण ही था। वह अकेला समाज के व्यवहार को सिद्धि करने में समर्थ न हुआ उसने एक उत्तम वर्ण 'क्षत्रिय' को बनाया। जब दोनों से कार्य न चल सका तो वैश्य वर्ण को बनाया। तीनों के भी कार्य में असमर्थ होने पर फिर शूद्र वर्ण को बनाया। इस प्रकार समाज के उपयोगी अंग चारों वर्णों की व्यवस्था की गयी। इस इतिहासपूर्ण प्रमाण का समर्थन महाभारत शान्तिपर्व अ० १८८ में[5] किया गया है। महाभारतकार कहते हैं कि पहले एक ही वर्ण था परन्तु कार्य विभाग से चारों वर्णों की स्थापना हुई। बहुत ही नवीन साहित्य भागवत पु० स्क० ७।१४[6] में इसी विषय को दूसरे शब्दों में व्यक्त किया गया है। बतलाया गया है कि पहले वेद ही एक

---

१. रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजसु नस्कृधि।
रुचं वैश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम्॥
२. प्रियं मा कृणु देवेषु प्रियं राजसु मा कृणु।
प्रिय सर्वस्य पश्यत उत शूद्रे उतार्ये॥
३. मुख बाहूरूपज्ञाने या लोके जातयो वहिः।
म्लेच्छवाचश्चार्य वाचः सर्वे ते दस्यवः स्मृताः॥
४. ब्रह्म वा इदमासीदेकमेव तदेकं सन्नव्यभवत् तच्छ्रेयो रूपमत्यस्टजत् क्षत्रम् सनैव व्यभवत् विशमसृजत्...सनैव व्यभवत् शौद्रं वर्णमसृजत्॥
५. एकवर्णमिदं पूर्वं विश्वमासीद् युधिष्ठिर।
कर्मक्रिया भेदेन चातुर्वर्ण्यं प्रतिष्ठित॥
६. एक एव पुरा वेदः प्रणवः सर्ववाङ्मयः।
देवो नारायणो नान्य एकोऽग्नि वर्ण एव॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वाङ्मय, ओंकार ही एक जाप, नारायण ही एक देव और विज्ञान का मुख्य अंग एक अग्नि; और एक ही वर्ण था। इन वर्णों के बन जाने पर कोई परस्पर छोटे बड़े की भावना का आखेट न बने इसलिए मनु ने मनु० ९।२९७[1] में यह व्यवस्था दी कि "उन उन कर्मों में वही अंग बड़ा और श्रेष्ठ है जिससे जो कार्य सिद्ध होता है[2]। यजुर्वेद में पुनः इन वर्णों के कार्यों का वर्णन इस प्रकार किया गया है कि 'उपदेश, मानव जाति की उन्नति के कार्य के लिए ब्राह्मण, क्षत्र के लिए क्षत्रिय और व्यापार के लिये वैश्य तथा तप अर्थात् श्रम के लिए शूद्र को नियुक्त किया गया है। इन वर्णों के कार्यों का योग्यता से भेद करने पर भी वेद में धर्मकृत्य यज्ञ आदि करने और वेद आदि के पढ़ने का विधान सबके लिए है। शूद्र को भी यज्ञ करने का अधिकार है। पांचवा भेद निषाद भी यज्ञ कर सकता है। अर्थात् मनुष्यमात्र के लिए इनके करने का विधान है। ऋ० १०।५३।५[3] और यजु० २६।२[4] में इसका वर्णन मिलता है। इस प्रकार वर्ण विभाग के सिद्ध होने पर थोड़ा-सा विचार इस विषय में फैली हुई वर्तमान भ्रांति पर भी करना है। वह भ्राति यह है कि कई लोग इस वर्णभेद को गुण, कर्म स्वभाव से न मानकर जन्म से ही मानते हैं। यद्यपि यह निश्चित है कि जिस वर्ण में जो पैदा हुआ है उसे उस वर्ण का बनने का अवसर अधिक प्राप्त है परन्तु वर्ण विभाग में जन्म की ही कारणता हो, यह सिद्धान्त नहीं। वैदिक सिद्धान्त तो गुण, कर्म स्वभाव का ही है। पूर्वोक्त दिये गये प्रमाणों से इस पर पर्याप्त प्रकाश पड़ चुका है। जन्म से वर्ण व्यवस्था मानने वालों के सामने दो प्रश्न बड़े भयंकर खड़े हैं—पहला है कि कन्या का गोत्र-परिवर्तन विवाह के साथ क्यों हो जाता है और दूसरा यह कि धर्म परिवर्तन के साथ वर्ण का परिवर्तन क्यों हो जाता है? यजुर्वेद ३१।८ के 'ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् मन्त्र में भी इस विषय पर अच्छा प्रकाश डाला है। इस मन्त्र में ब्राह्मण के साथ 'असीत् त्रिया लगी है। वह विराट् एवं परमेश्वर का मुख वही था. अच्छा मुख से नहीं पैदा हुआ बल्कि मुख के सदृश था शतपथादि से ऐसा ही अर्थ लगता है। राज्य के साथ 'कृतः' त्रिया लगी है शूद्र के साथ "अजायत" क्रिया है। आसीत् और 'कृतः' समानार्थक मालूम पड़ते हैं 'अजायत' पर ही विचार करना चाहिए। 'अजायत' कहने से तात्पर्य यह निकलता है कि पहले पैदा होने पर सब शूद्रवत् ही पैदा होते हैं पश्चात् गुण, कर्म स्वभाव के कारण क्षत्रिय ब्राह्मण और वैश्य आदि वर्णों में विभक्त होते हैं। यहाँ पर यह प्रश्न हो सकता है कि पूर्व प्रमाणों में ब्राह्मण को एक वर्ण कहा गया है— उसका कैसे समन्वय होगा। इसका समाधान यह है कि वैसे तो अधिकतर प्रमाणों में एक वर्ण पद आया है जिसका इससे कोई विरोध नहीं। एक प्रमाण में ब्राह्मण वर्ण आया है जो अमैथुनी सृष्टि में उत्पन्न मनुष्यों की उत्कृष्टता के कारण यह कहा गया है और यहाँ यजु० ३१।८ से वर्ण व्यवस्था का साधारण सिद्धान्त निर्धारित किया गया है। जन्म से वर्णव्यवस्था मानने वाले एक युक्ति यह देते हैं कि ब्राह्मण और क्षत्रिय शब्द अपने

---

१. तेषु तेषु तु कृत्येषु तत्तदंग विशिष्यते।
येन यत्साध्यते कार्यं तत्तास्मन् श्रेष्ठमुच्यते॥

२. ब्राह्मणे ब्राह्मणं क्षत्राय राजन्य मरुद्धो वैश्यं तप से शूद्रम्।

३. यथेमां वाचं कल्याणी मा वदानि जनेभ्यः ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय॥ यजु० २६।२

४. पंचजना मम होत्रं जुषन्ताम्।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

प्रत्ययों से जात्यर्थ में सिद्ध हैं, अतः जन्म से ही वर्ण व्यवस्था होनी चाहिये। यहाँ थोड़ा सा इस पर विचार किया जाता है। 'ब्राह्मण' पद को ही लीजिए। अष्टाध्यायी ६।४।१७१ सूत्र "ब्राह्मोऽजातौ" के अनुसार 'ब्रह्म' शब्द अनपत्यार्थ में निपातित है। यहाँ 'अजातौ' कहने से ही तात्पर्य है कि जात्यर्थ में ब्राह्मण बनेगा। ऐसी स्थिति में 'ब्राह्म' का अपत्य ब्राह्मण मानकर ब्रह्म शब्द से 'तस्यापत्यम्' करके 'अण' प्रत्यय और 'अत्' भाग का अलोप मानकर ब्राह्मण शब्द बनेगा और यह जात्यर्थ में होगा। इसका उत्तर यह है कि शब्द की सिद्धि कई प्रकार से हो सकती है। यहाँ का दिखलाया प्रकार ही वेदवर्णित वर्णसूचक ब्राह्मण पद में भी वत/ जावे कोई नियम नहीं। ब्रह्माधीते इति ब्राह्मणः ऐसा जानकर 'तदधीते तद्वेद' अ० ४।२।५९ सूत्र से अण करके भी सिद्ध किया जा सकता है। अथवा 'ब्रह्मजानाति ब्राह्मणः' ऐसी व्युत्पत्ति करके 'शेषे' अ० ४।२।८२ सूत्र में भी इस पद की सिद्धि हो सकती है। इसमें जात्यर्थ की कोई आवश्यकता नहीं। इसी प्रकार 'क्षत्रिय' पद की सिद्धि क्षत्रादयः अ० ४।१।१३८ सूत्र से अपत्यार्थ में न करके, क्षतात् त्रायते, ऐसा करके 'पृसोदरादीति यथोपदिष्टम्, अथर्व ६।३।१०८ सूत्र से की जा सकती है। वैश्य शब्द 'स्वार्थेष्यज' करके बनाया जा सकता है। अमरकोश ब्रह्मवर्ग श्लोक ४, क्षत्रवर्ग और वैश्यवर्ग में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य शब्द की सिद्धि इसी प्रकार से की है। जन्म से वर्णव्यवस्था का निर्देश भागवत ७ स्कन्ध के ११वें अध्याय के ३५ श्लोक[1] से भी होता है। वहाँ कहा गया है जिस वर्ण के जो लक्षण कहे गये हैं वे यदि उनसे अतिरिक्त वर्णों में भी पाये जावें तो उन्हें भी वही वर्ण कहा जाना चाहिए। इस पर भाष्य करते हुए श्रीधर स्वामी ने भावार्थदीपिका, वीरराघवाचार्य ने चन्द्रचंद्रिका[3] और विश्वनाथ चक्रवर्त्ति ने सारार्थप्रदर्शिनी[4] टीकाओं में ऐसा ही स्वीकार किया है। इस तथ्य को स्वीकार करने से ही महाभारत पुराणों में वर्णित वर्णपरिवर्तनों की सगति लग सकती है। ऐसे वर्णनों से कि एक ही कुल में चारों वर्ण के लोग हुए, पुराण भरे पड़े हैं। महाभारत शान्ति पर्व अ० १९६ श्लोक १४-१६ में लिखा है कि—पराशर ऋषि ने कहा—हे राजन् मेरे नाना शृंगी ऋषि, कश्यप, वेद, ताण्ड्य, कृप कक्षीवान् कमट, यवक्रीत, द्रोश, आयु, मातंग, दत्त, द्रुपद, मातृन्य, आदि बहुत से ऋषि नीच कुल में उत्पन्न हुए थे; इस पर भी तप तथा वेदाध्ययन से वे श्रेष्ठपद को प्राप्त हुए। वायु पुराण में ऐसा वर्णन मिलता है कि गृत्समद के पुत्र शुनक और उसके पुत्र शौनक के वंश में कर्मों के भेद से ब्राह्मण, क्षत्रिय और शूद्र चारों वर्ण

---

१. यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यंजकम्।
यतन्यत्रापि दृश्येतंते नैव विनिर्दशेत्॥

२. शमादिभिखे ब्राह्मणादिः व्यवहारो मुख्यो न जातिमात्रादित्याह—यस्वेति यद्यदि अन्यत्र वर्णान्तरे ऽपि दृश्येत तद्वर्णान्तरं तेनैव लक्षणेन निमित्तेनैव वर्नेन विनिर्दिशेत्। न तज्जातिनिमित्तैनेत्यर्थः॥

३. पूर्ववत् ही लिखा है।

४. किञ्च यस्य पुंसो वर्णाभिव्यंजकं यल्लक्षणं वर्णं ब्राह्मणाद्द्विजातिमभिव्यंजयति यत् तच्च सामान्यतो विहितमेव शमदमादिकं यद्यन्यत्र जात्यन्तरेऽपि दृश्येत् तज्जात्यन्तरमपि तेनैव ब्राह्मणादि शब्देनैव विनिर्दिशेत्॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पैदा हुये[1] यही बात विष्णु पुराण में दूसरे ढंग पर लिखी है। हरिवंश पुराण अ० २९[2] और अ० ३२[3] में भी इस घटना को दुहराया गया है। महाभारत में अनुशासन पर्व अ० १४१ श्लोक ५०५१ में गुणकर्म से वर्ण व्यवस्था का अच्छा वर्णन है। महाभारत अनुशासन पर्व अ० २६६।१४ में भी ऐसा ही वर्णन है। यहां यह लिखा गया है कि ब्राह्मणत्व के कारण योनि, आदि, नहीं अपितु आचार है। भविष्य पुराण में मु० पु० अ० ४४।३२[4] में ऐसा वर्णित है कि शूद्र भी यदि ज्ञान सम्पन्न हो तो वह ब्राह्मण से भी श्रेष्ठ है। श्लोक ३५[5] में निष्कर्ष निकाल कर जन्मगत वर्ण व्यवस्था को खंडित कर दिया गया है। लिखा है कि गौ और घोड़े के समान मनुष्य वर्णों में कोई जाति भेद नहीं। केवल कार्य और शक्ति निमित्त से कृत्रिम संकेत मात्र है। इस प्रकार इन प्रमाणों के आधार से भी यह सिद्ध है कि वर्ण निर्माण में गुण, कर्म, स्वभाव कारण है जन्म नहीं। कुछ लोग ऐसा कहते हैं कि विश्वामित्र आदि तप से ऋषि तो बन गये परन्तु उन्हें कहीं ब्राह्मण सूचक शब्द से संबोधित नहीं किया गया है। उत्तर में मैं यहां ऐसे प्रमाण रखता हूँ जिनमें विश्वामित्र को ऋषि, ब्राह्मण, ब्रह्मर्षि, और विप्रेंद तथा परमर्षि कहा गया है। वाल्मीकि रामायण बाल काण्ड १६।३६ में —महातेजा विश्वामित्रो महामुनिः ४२वें श्लोक में विश्वामित्रमृषिम्, श्लोक ५३ में पात्रभूतोऽसि में ब्रह्मन्। ५६वें श्लोक में 'ब्रह्मर्षित्वमनुप्राप्तः', ५५वें श्लोक में विप्रेन्द्र, ६० मे परम ऋषिः परमं जगाम हर्षम्॥ इत्यादि वाक्यों का प्रयोग हुआ है। न्याय दर्शन वात्स्यायन भाष्य ४।१।५७ में[6] शतपथ १।७।२।१ के 'जायमानो ह्वै ब्राह्मणः त्रिभिऋर्णैऋर्णवान् जायते, इत्यादि वाक्यों को पैदा होते ब्राह्मण में तीन ऋणों का होना और उनकी अदायगी असम्भव है क्योंकि उत्तमशक्ति को ही उत्तम कर्म का अधिकार है अतः वात्स्यायन ने "जायमान" का अर्थ 'संपद्यमान' और "ब्राह्मण" का अर्थ गृहस्थ कर लिया। वात्स्यायन का यह भाव इस बात का प्रमाण है कि जिस कर्म के करने की जिसमें सामर्थ्य हो उसी को उसका अधिकार है। तो

---

१. पुत्रो गृत्समदस्य च शुनको यस्य शौनकः। ब्राह्मणाः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शूद्रास्तथैव च। एतस्य वंशे संभूता विचित्रा कर्मभिर्द्विज॥
गृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वर्ण्यप्रवर्त्तयिताऽभूत।

२. पुत्रो गृत्समदस्यापि शुनको यस्य शौनकः।
ब्राह्मणः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शूद्रास्तथैव च॥

३. येते ह्यांगिरसः पुत्रा जाता वंशेऽभार्गवे।
ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राश्च भरतर्षभ॥

४. शूद्रोऽपि ज्ञानसंपन्नो ब्राह्मणादधिको भवेत्।
ब्राह्मणे विगताचारः शूद्रात्प्रत्यवरो भवेत्॥

५. तस्मान्न गोऽश्ववत् कश्चित् जातिभेदोऽस्ति देहिनाम्।
कार्यशक्तिनिमित्तस्तु संकेतः कृत्रिमो भवेत्॥

६. जायमान इति गुणशब्दो विपर्ययेऽन धिकारात्। जायमानो ह्वै ब्राह्मण इति शब्दो—गृहस्थः संपद्यमानो जायमान इति। यदा अयं गृहस्थो जायते तदा कर्मभिरधिक्रियते। मातृतो जायमानस्यानधिकारात्। यदा तु मातृतो जायते कुमारो न तदा कर्मभिरधिक्रियते अर्थिनः शक्तस्यः च चाधिमात्॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

फिर जन्म से वर्ण मानने पर वर्णों के कर्मों की सामर्थता को तो देखना ही चाहिए। जब तक गुण, कर्म, स्वभाव नहीं, तब तक जन्म से होने वाले ब्राह्मण आदि वर्ण किस प्रकार अपने कर्मों को पूरा कर सकेंगे? यजुर्वेद की मैत्रायणी शाखा ४।८।१ और कांक ३०।१[1] में बहुत स्पष्ट शब्दों में इसी लिये वर्ण व्यवस्था का गुण-कर्मानुसार प्रतिपादन किया गया मिलता है। वहाँ वर्णन किया गया है कि 'ब्राह्मण के माता पिता को मत पूछो, श्रुति ही इसका पिता और पितामह है। ऋग्वेद ९।११२।३[2] में यह बतलाया गया है कि एक ही कुल में वर्णानुसार भिन्न-भिन्न कार्य करने वाले रह सकते हैं। निरुक्त में इस मन्त्र का अर्थ देते हुए यह स्पष्ट किया गया है कि "मैं कारीगर हूँ, मेरा पिता वैद्य है, मेरी माता चक्की पीसती है। इस प्रकार भिन्न-भिन्न ज्ञान और योग्यता वाले हम गौवों की भांति मिल कर रहते हैं। वर्ण व्यवस्था के गुण कर्म स्वभावानुसार होने का इससे स्पष्ट वर्णन और क्या हो सकता है? आजकल आदिवासी जाति की धारा चलाने वाले यह कहते हैं कि आर्यों से पहले एक जाति यहाँ विद्यमान थी और आर्यों ने उन्हें पराजित कर उनकी संस्कृति को नष्ट किया। यह वस्तुतः इन लोगों की कल्पना मात्र है। आज जिन को मूल निवासी कहा जाता है वे भी आर्यों में से ही हैं। धर्म आचार आदि गिर जाने से वे दासी हो गयीं। विपक्षी लोग ऋग्वेद ३।३५।१४[3] मन्त्र को उपस्थित कर कहते हैं कि कीकट देश विहार में प्रमगन्द नाम का राजा था जिसके धन को हरण करने की आर्यों ने इस मन्त्र में प्रार्थना की है। ऋग्वेदिक इण्डिया के लेखक ने भी इस मन्त्र में यही अर्थ किया है। परन्तु यह इनकी थोथी कल्पना है। कीकट का अर्थ यास्क के अनुसार उनसे है जो कर्म विहीन हैं। प्रमगन्द सूदखोर को कहते हैं। जहां गाय आदि के दूध का यज्ञादि कार्यों में व्यवहार न हो और सब कुछ निकम्मा पड़ा हो तथा जो सूदखोर हो उसके धन के हरण की बात कही गयी है। यहां किसी इतिहास के व्यक्ति का वर्णन नहीं। ये पहाड़ी बनवासी आदि जातियां आर्यों में से ही हैं ऐसा एतरेय ७।१८[4] में वर्णन किया गया है। भागवत और विष्णु पुराण ९।१६।३३ ९/२३-२६ में भी ऐसा ही वर्णित है। मनु ने १०/४३-४४[5]
में भी इन जातियों को क्षत्रियों से पृथक हुई माना है। ये धर्मोपदेश न मिलने से पथ-

---

१. किमु ब्राह्मणस्य पितरं किमु पृच्छसि मातरम्।
श्रुतं चेदस्मिन् वेद्यं स पिता स पितामहः।

२. कारुरहं ततो भिषक् उपलप्रक्षिणी नना।
नानाधियो वसूयवोऽनुगा इव तस्थिमेन्द्रायेन्दो परिस्रव ॥

३. किं ते कृण्वन्ति कीकटेषु गावो नाशिरं दुह्रे न तपन्ति धर्मम्।
आनो भर प्रमगन्दस्य वेदो नैचा शाखं मघवन्न्धया नः ॥

४.ताननु व्याजहार अन्तान् वः प्रजा भक्षी टेत त एतेन्ध्रा पुण्ड्राः शवरा पुलिन्दा मूर्तवा उदन्त्या बहवो भवन्ति वैश्वामित्रा दस्यूनां भूयिष्ठा ॥

५. शनकैस्तु क्रियालोपादिमाः क्षत्रियजातयः।
वृषलत्वं गताः लोके ब्राह्मणादर्शनेन च ॥
पौण्ड्रकाश्चोड्रद्रविड़ाः काम्बोजा यवनाः शकाः।
पारदा पह्लवाश्चीनाः किराता दरदा खशाः ॥

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

भ्रष्ट हो गयीं। महाभारत शा० प० अ० ६५।१३-१४[1] में औड़ पुलिन्द आदि को चारों वर्णों में ही पैदा हुई माना है। स्वभाव का अर्थ कई लोग जन्मगत स्वभाव मानते हैं यह गलत है। स्वभाव से अभिप्रेत है अभ्यस्त एवं सभ्य होना। अर्थात् गुण कर्म स्वभाव जिनमें जीवन के अंग बन गये हों और वैसा वे स्वभाव में दाखिल हो गये हों वे ही अपने गुणों और कर्मों से वर्ण बन सकते हैं। इस प्रकार वर्ण व्यवस्था का ऊंचा स्वरूप वेद में मिलता है। 'ब्राह्मणाऽस्य मुखमासीद्' में चारों वर्णों की जो उपमा चार अंगों से दी गयी है वह भी वैज्ञानिक है। क्षत्रिय को बाहू कहा गया है। आज भी आर्मी (Army) शब्द उसी का द्योतक है[2] ये चारों वर्ण समाज में किस प्रकार जगमगाते हुए हों इसका प्रशस्त वर्णन ऋग्वेद ६।५०।२ में मिलता है। वहां दिखलाया गया है कि द्विजन्माओं को नियमबद्ध, सत्यशील, सुखयुक्त, यज्ञशील और तेजस्वी वाणी वाला होना चाहिए। यह है वैदिक वर्ण व्यवस्था अर्थात् मानव समाज की इकाई का वैदिक स्वरूप।

---

१. यवनाः किराताः गन्धाराश्चीना शवरबरबरा ॥
शकास्तुषारा कंकाश्च पह्लवाश्चान्द्रमद्रकाः ॥
चौड्रा पुलिन्दा रमठा काम्बोजाश्चैव सर्वशः।
ब्रह्मक्षत्रप्रसूताश्च वैश्याः शूद्राश्च मानवाः ॥

२. द्विजन्मानो य ऋतसाताः सत्याः स्वर्वन्तः। यजता अग्निजिह्वाः ॥

उत्कर्ष मार्ग

द्वे कर्मणी नरः कुर्वन्नस्मिल्लोके विरोचते।
अब्रुवन् परुषं कञ्चिदसतोऽनर्चयंस्तथा ॥

किसी के प्रति कठोर वचन न बोलना और असत्पुरुषों का आदर करना, इन दो कार्यों से मनुष्य इस लोक में शोभा को प्राप्त होता है।

पञ्च त्वाऽनुगमिष्यन्ति यत्र यत्र गमिष्यसि।
मित्राण्यमित्रा मध्यस्था उपजीव्योपजीविनः ॥

तुम जहाँ कहीं भी जाओगे, वहाँ-वहाँ मित्र, शत्रु, उदासीन, आश्रय देने वाले, तुम पर आश्रित रहने वाले, ये पाँच तुम्हारे साथ लगे ही रहेंगे।

षड् दोषा पुरुषेणेह हातव्या भूतिमिच्छता।
निद्रा तंद्रा भयं क्रोध आलस्यं दीर्घसूत्रिता ॥

जो अपना कल्याण चाहे, उसे निद्रा तंद्रा (निद्रा से पूर्व की अवस्था), भय, क्रोध, आलस्य और विलंब से काम करने की आदत, इन छः दुर्गुणों को छोड़ देना चाहिये।

आरोग्यमानृण्यमविप्रवासः सद्भिर्मनुष्यैः सह संप्रयोगः।
स्वप्रत्यया वृत्तिरभीतवास षड् जीवलोकस्य सुखानि राजन् ॥

नीरोग होना, ऋणी न होना, सदा प्रवास निरत न रहना, सज्जनों का साथ, स्वाधीन आजीविका और भयरहित निवास, ये इस संसार के छः बड़े सुख हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

धारावाहिक उपन्यास —तीसरी किश्त—

मोपला

अनुवादक
बनारसीसिंह

लेखक
वीर सावरकर

मुसलमानों द्वारा मतान्ध होकर केरल के मोपला क्षेत्र में हिन्दुओं पर किए गए अत्याचारों की रोमांचकारी गाथा आप पढ़ चुके हैं। आप पढ़ चुके हैं कि किस तरह अल्लाहो अकबर के नारों के साथ हिन्दू ललनाओं के सतीत्व से खिलवाड़ किया गया। मनुष्य की पशुता का नंगा रूप देखने के बाद अब आगे पढ़िए......... —संपादक

उधर सुमति को लेकर उसका भाई तथा वे दोनों थिय्या युवक जहां मार्ग निकलता था वहां से होते हुए आगे बढ़ते जा रहे थे। थोड़ी देर पश्चात् ही स्थूलेश्वर शास्त्री की पुत्री और पत्नी को लेकर दूसरे दोनों थिय्या भी, जिनके हाथों हरिहर शास्त्री ने उन दोनों स्त्रियों को सौंपा था, वहीं आ पहुँचे। अब वे तीन पुरुष और तीन स्त्रियां लुकते-छिपते तथा अपने पीछे छूट गए सम्बन्धियों, प्रियजनों का क्या होगा, इस सम्बन्ध में शंका-कुशकाएँ करते हुए कुट्टम से जितनी दूर निकल सकें, उतनी दूर निकलने के प्रयास में चलते जा रहे थे। परन्तु उस प्रलयंकर झंझावात में हरिहर के शौर्य के कारण बच जाने वाली एक चौथी नारी भी थी। वह थी तरुणा लक्ष्मी। वह एकाकी वृक्षों के एक झुण्ड के पीछे छिपकर बैठी हुई थी। हरिहर शास्त्री पर टूट जाने के पश्चात् भी मुहम्मद सनकी को बहुत देर तक अपनी पकड़ में लिए रहे थे। इसी से लक्ष्मी को बचकर निकल जाने का अवसर मिल गया था। वह कुछ दूर तक भागने के उपरान्त उस वृक्षों के समूह के मध्य जा छिपी थी। वह थी तो साहसी परन्तु थी तो स्त्री और वह भी युवती। उन सघन वन में उसे दूर से आती हुई गीदड़ों की आवाज और बाघों की गर्जना जब सुनाई देती तो इस युवती के मन में इतनी अधिक घबराहट होती थी कि वह सोचती थी कि भला इस घोर वन से बड़ा और संकटापन्न स्थान कौन-सा हो सकता है! वह यह भी विचार करने लगती थी कि इससे कुट्टम ग्राम में रहना ही अधिक अच्छा था। साँप और अँधकार दोनों से ही उसे एक समान भय लगता था। वह बार-बार यही सोच रही थी कि क्या ही अच्छा हो यदि

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कोई मनुष्य वहाँ आ जाये। किन्तु जिस कुंज में वह छिपी हुई थी, वहां कोई भी भयंकर जीव-जन्तु नहीं आया ! मोपलों से अधिक भयानक जन्तु भी भला कोई और हो सकता था क्या ? परन्तु किसी भी जीव-जन्तु के समीप न होने से भी उसे इस निर्जीव और निर्जन वन में भय लग रहा था ! अपने प्रियजनों की गोदी और कंधे पर चढ़कर वही लक्ष्मी यद्यपि बहुत अधिक भयभीत हो गई थी, परन्तु फिर भी किसी प्रकार उसने धीरज धरा और रात वहीं काट दी। अभी पौ फटने को ही थी कि उसने पुनः वहाँ से भाग चलने का निश्चय किया। अभी वह एक-दो मील ही भाग पाई होगी कि उसने अपने ही समान भयभीत होकर बढ़ती हुई दो अन्य स्त्रियों को कुछ दूरी पर देखा। लक्ष्मी के मन में एक बार यह शंका भी उठी कि कहीं ये मोपलों के पक्ष की ही स्त्रियां न हों, किन्तु वह तो निर्जनता से ऊब गई थीं अतः किसी प्रकार की आवाज न करती हुई वह उन स्त्रियों के समीप जा पहुँची। उन महिलाओं ने भी उसी जिज्ञासा-सहित लक्ष्मी को देखा। उसे देखते ही धीमी-सी आवाज में उनमें से एक स्त्री बोल उठी "अरी बहन। तू यहाँ-कहाँ ! तुम ब्राह्मणी हो ! तुम्हारे तो नाखून भी हमने कभी नहीं देखे। देवताओं का यह कोन-सा प्रकोप है ! इन मरे मुसण्डों के दंगे से तुम्हें भी निकलना पड़ा। तुम्हारे द्वार की झूठन हमने अनेक बार खाई होगी ! तुम्हारे कुट्टम ग्राम की ही हम दोनों मसकुनियां हैं, बहन !"

"बहिनो," लक्ष्मी ने नेत्रों से अश्रु गिराते हुए कहा, "तुम इधर कहाँ जा रही हो ?"

"हम पर भी उन मरदूद मोपलों ने अत्याचार किए हैं। भाई, हमारे पास तो पैसा-धेला कुछ भी नहीं था। तब भी उन्होंने हमारी झोंपड़ी में आग लगा दी। हमारे पुरुषों की धर-पकड़ की और हम सबसे बोले, 'मुसलमान हो जाओ, नहीं तो मार दी जाओगी।" पर बाई; हम अपनी मसकुनि जाति को कैसे छोड़ दें ? बाई, हमने उनसे कहा, "हम ब्राह्मणी नहीं, हमारे पीछे क्यों लगते हो ?" तभी उनमें से एक बुढ़िया हमारी धोतियों में आग लगाने लगी और बोली "पर तू हिन्दू तो है ना ! हम कुत्तों से तुम हिन्दुओं को अधिक नीच समझते हैं, परन्तु तुम मसकुनि लोग मुसलमान नहीं होते। तुम्हीं ब्राह्मणों, क्षत्रियों और वैश्यों के पैर हो। वे तुम्हारे ऊपर ही खड़े हुए हैं। तुम हटे कि वे धम्म से नीचे आ पड़ेंगे !" उसके द्वारा घर जला दिए जाने पर किसी प्रकार हम बचते हुए यहाँ तक भाग आई हैं। परन्तु हमारा क्या ! हम तो मसकुनि हैं। परन्तु बहन ! तेरा इस जंगल में क्या होगा ?" यह कहते-कहते उस मसकुनि के नेत्रों से गंगा-यमुना प्रवाहित उठी। मलबार में यह मसकुनि जाति अस्पृश्यों से भी अस्पृश्य मानी जाती है। थिय्या भी उनके साथ व्यवहार नहीं करते जैसे महार डोंबों को अपने से नीचे मानते हैं इसी प्रकार यह मसकुनि जाति वहां थिय्यों से भी नीची समझी जाती है !

लक्ष्मी का भी कण्ठ भर आया और वह बोल उठी "बहिनो, तुम अपना दुख भुलाकर मेरी चिन्ता न करो ? देवताओं ने तुम्हें इतना उदार हृदय दिया है। तुम मसकुनियाँ तो मेरे जैसी ब्राह्मणी की अपेक्षा कहीं अधिक उच्च जाति की हिन्दू हो। नहीं, नहीं, बहिन तू इस तरह पीछे न हट। यह देख मैं कितनी देरी से किसी के गले से लिपटकर कुछ देर रो लेने के लिए अकुला रही हूँ। तुम संकोच न करो। क्षण भर मुझे अपनी गोदी में भर लो। तुम्हीं मेरी माता हो !" ऐसा कहती हुई लक्ष्मी उस मसकुनी से लिपट गई। किन्तु वह मसकुनी अपने आपको मन ही मन यह विचारते

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

हुए दोष देने लगी कि इस ब्राह्मणी से छूकर मैंने भारी पाप किया है। किन्तु फिर भी वह मसकुनी लक्ष्मी को सांत्वना देने लगी। थोड़े समय बाद ही उस दुख की बेला में उन तीनों में उमड़े प्रेम का ज्वार शान्त हो गया और वे फिर भयभीत होतीं, लुकती छिपतीं आगे बढ़ने लगीं। थोड़ी दूर पहुँचने पर ही उन्हें अपने ग्राम का विष्णु नायर नामक एक व्यक्ति दूरी पर जाता हुआ दिखाई दिया। उन भयभीत स्त्रियों को लगा कि परमात्मा ने ही उसे हमरी सहायता के लिए यहाँ भेजा है। वे बड़ी आशा सहित उसके पास पहुंचीं। उन्हें देखते ही विष्णु नायर की भृकुटी तन गई। मानो वह अपने आपसे ही कह उठा मैं तो अपना ही पाप ज्यों-त्यों बचा पाया हूँ ये कहाँ से गले पड़ गई। वह बोल उठा "मेरे पास क्या धरा है ! यहाँ क्यों आई हो ?" वह वृद्ध मसकुनी हाथ जोड़कर बोली—"महाराज, आप नायर लोग अपने आपको क्षत्रिय कहलवाते हैं। हम अबला हैं। हमारा दूसरा कोई नहीं इस ब्राह्मणी की मौसी का ग्राम यहां से दो कोस की ही दूरी पर है। इसे वहां तक पहुंचा दीजिए। मोपलों ने रास्ता रोका हुआ है, इसीलिए हमें डर लग रहा है।" "परन्तु तुम्हारी जाति क्या है ?" नायर बोला। "मसकुनि-डोम, बाबा !" "और तू मुझ से २०० फूट दूर न रहकर बात कर रही है ? राक्षसिनी, मेरा धर्म डूब गया है ? जानती नहीं मैं क्षत्रिय हूँ, धर्म के लिए तो हम अपने प्राणों की भी चिन्ता नहीं करते।" ऐसा कहते हुए उस स्त्री की छाया अपने ऊपर पड़ जाने से क्रुद्ध होने वाले उस क्षत्रिय ने उस अस्पृश्य वृद्धा को तड़ाक से धक्का दे दिया। उसकी पुत्री सहसा ही रो पड़ी। तब लक्ष्मी क्रोध और दया से लाल हो गई और गरज उठी। "अरे विष्णु ! इस बेचारी अछूत नारी पर तो तू पराक्रम दिखा रहा है और वे तेरे बाप ! वे मुसलमान मोपले तेरे घरों की महिलाओं पर और तेरे देवालयों पर अत्याचार कर रहे हैं, उनको अपना यह पराक्रम क्यों नहीं दिखाता ? उनके भय से तो तू किसी नरसक के समान अपने प्राण बचाकर भागा जा रहा है। तेरी इस कायरता से तेरा क्षत्रिय धर्म नहीं डूबा। परन्तु इस बेचारी वृद्धा की छाया-मात्र पड़ जाने से ही तेरा धर्म नष्ट हो गया है। मुसलमान इन्हें हिन्दू कहकर जान से मारते हैं, हिन्दू इन्हें मसकुनी-अस्पृश्य कहकर ठोकर मारते हैं, धक्का देते हैं। तो फिर बता ये जाएँ तो कहाँ जाए ? वह नायर जरा संभलते हुए बोला—"तू चाहती है तो मेरे साथ चल। यद्यपि तेरे समान सुन्दर तरुणी को साथ लेकर चलना भी मोपलों के संकट को न्यौता देना ही है। फिर भी तू मेरे ग्राम की ब्राह्मणी है, तू चल ; मैं तुझे पहुंचा देता हूँ। परन्तु ये मसकुनी स्त्रियां मेरे साथ चलीं तो क्षत्रिय मुझे जाति से निष्कासित कर देंगे।"

"क्यों नहीं निकालेंगे !" लक्ष्मी ने तिरस्कार सहित कहा—"अबलाओं की परधर्मियों से तूने रक्षा न की तो भला तेरा क्षत्रियत्व कहां से बच जाएगा ? परन्तु तूने तो ऐसा कोई 'पाप' किया नहीं है। हिन्दू धर्म और हिन्दू जाति पर भयंकर अत्याचार हो रहे हैं और तू इन अत्याचारों के करने वाले विधर्मियों के समक्ष लड़ा भी नहीं है। तू तो भाग निकला है। मुसलमानों ने तेरी बहिनों और बेटियों को उठाया है, इससे तेरा धर्म नष्ट हो गया है, यह तू नहीं समझता। परन्तु हिन्दू अस्पृश्यों की छाया-मात्र पड़ने से ही तेरा धर्म रसातल को चला गया है। वस्तुतः तू सच्चा धर्म-ज्ञाता क्षत्रिय है, इसमें तो किंचित्मात्र भी शंका नहीं की जा सकती ! मैं तेरे साथ नहीं जाती। मैं तो अपनी इन मस्कुनी बहिनों के ही साथ रहूँगी। डोम्बों की स्त्रियों का सुख-दुख मेरा अपना ही सुख-दुख है ! हिन्दुत्व पर संकट आता है तो डोंब, महार,

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

मागे, ब्राह्मण, ये डोंब, महार, मागे नहीं केवल हिन्दू हैं, ऐसा मानने वाली तथा तदनुसार आचरण करने वाली आत्मा ब्राह्मणों में है यह सिद्ध करने के लिए मैं इन मस्कुनियों के साथ रहूँगी। तू जा, चला जा !"

लक्ष्मी अभी यह कह ही रही थी कि वह नायर क्षत्रिय कभी का दूर निकल चुका था। थोड़ी देर तक ये स्त्रियां आगे बढ़ती रहीं। उन्हें दूर से उठता हुआ शोर सुनाई दिया। वे तीनों ही भयभीत होकर एक वट-वृक्ष के समीप ही लगे हुए करौंदे के झाड़ के पीछे छिप कर कुछ समय काट देने के विचार से वहाँ गईं। वहाँ अचानक ही उनकी स्थूलेश्वर शास्त्री के परिवार की दोनों स्त्रियों तथा सुमति से भेंट हो गई। दुख का कितना आवेग ! कितना भय ! पीछे क्या कुछ हुआ है, यह बताने की आतुरता। किन्तु इन सभी मनोविकारों को दबाए रखने पर भी सुमति के मुख से ये शब्द निकल पड़े "तेरी मेरे पिता जी से कहीं भेंट हुई है क्या ?" इसका उत्तर लक्ष्मी केवल यही दे पाई "उन्होंने ही तो मेरा जीवन और धर्म बचा दिया, परन्तु इस युद्ध में शत्रु ने उनका पैर कुल्हाड़ी से काट कर अलग कर दिया और उन्हें बन्दी भी बना लिया है।"

"हाय बहिन !" कहते हुए सुमति एकदम फूट-फूट कर रो पड़ी। "हे बेटी, धैर्य धर। मत रो मेरी लाड़ली।" ऐसा कहते हुए स्थूलेश्वर शास्त्री की पत्नी सुमति को सान्त्वना देने लगी। परन्तु भय ने उसका रोना बीच में ही रोक दिया था, कारण यह था कि तीन चार थिय्या और उसका भाई जब आवाजें कहाँ से आ रही हैं यह जानने के लिए गए थे तो उन्होंने इन स्त्रियों को यह चेतावनी भी दे दी थी कि वे चूं-चाँ कुछ भी न करते हुए इसी झाड़ी में छिपे रहें, यह आदेश दे गए थे। मेरे रोने से कहीं कोई नया संकट ही उपस्थित न हो जाए, यह सोचकर ही सुमति भय के कारण चुप हो गई थी।

अब प्रातःकाल हो गया था, दस बज रहे होंगे। रात्रि भर चलते-चलते, भय से त्रस्त, भागते-भागते दुःखाग्नि में जलते-जलते उन सभी स्त्री-पुरुषों का कण्ठ सूख गया था। आस-पास कहीं पानी की बूंद के भी दर्शन नहीं हो पाये थे। कल दस बजे इसी समय शान्त और रमणीय कुट्टम ग्राम में हरिहर शास्त्री-अग्नि के समक्ष आहुतियाँ समर्पित कर रहे थे। सुमति अपने द्वारा तोड़े गए पुष्पों की माला गूंथने में व्यस्त थी कि उसके भाई ने चुपचाप अपने हाथों से उसके नेत्र मूंद लिये थे। लक्ष्मी तुलसी की प्रदक्षिणा कर रही थी और उधर पारिजात पर बुलबुल बैठती और उड़ती तथा वह अपने हाथ की माला से उन्हें उड़ाती हुई मनोरंजन कर रही थी। वे बुलबुलें उड़ती थीं और पुनः आ बैठती थीं। वह मसकुनी तरुणी अपनी बहन के समक्ष गीत गाती हुई कह रही थी —

"चोटी कर चोटी कर, वेपी घाल, बे पी छाल।
मालती के फूल डाल, ससुराल चाल ॥"

और स्थूलेश्वर शास्त्री की पुत्री ससुराल से पहली बार आई अपनी प्रिय बहिन से प्रेम के अतिरेक में कह रही थी, "क्या करूँ, मैं क्या करूँ, मेरी बहन ?" और वह वृद्ध मसकुनी अपने गृह-आँगन में लगी हुई शाक-सब्जियों में से अपनी मनपसन्द कोई सब्जी तोड़ती हुई कह रही थी, "यह भाजी मेरी बच्ची को बहुत ही पसन्द है, नहीं ! अच्छा इसे तो मैं अब कल ही तोड़ूंगी।"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अभी चौबीस घण्टे बीते ही होंगे, दस ही तो बज रहे हैं, किन्तु ये सब आज क्या कर रहे हैं ? यह कोई भयंकर कल्पना नहीं अपितु एक सत्य अनुभूति है । उन्हें जो इतना भयंकर अत्याचार सहन करना पड़ रहा है, वे जो इस भयंकर पीड़ा से त्रस्त हैं, भला उन्होंने ऐसा कौन-सा पाप किया है, कौन-सा अपराध हो गया है, उनसे ?"

यही न, कि उन्होंने हिन्दू समाज में जन्म ग्रहण किया है । और वे हिन्दू ही रहने के इच्छुक हैं ! व्यक्तिगत रूप से बस इतनी ही तो उनकी इच्छा है !

किन्तु सामाजिक दृष्टि से स्थिति क्या है ? यह कितना बड़ा अपराध है कि उनका अपना हिन्दू समाज इतना असंगठित है और उसमें है परस्पर इतना अधिक असहयोग । यह समाज जो बालू के कणों के ढेर के समान है । जो केवल पूर्वजों के पुण्य कर्मों के अवशिष्ट अंश के कारण ही एक समाज के रूप में विद्यमान है । परन्तु अवशिष्ट पापों से प्रतिक्षण विशृंखलित होता जा रहा है, छिन्न-भिन्न होता जा रहा है ।

अब यह शोरगुल कैसा है, यह जानने के लिये गए हुए वे पुरुष वापस लौट आए थे । यह शोर-गुल-शत्रुओं द्वारा ही किया जा रहा था । कारण यह था कि जिस मार्ग पर ये सब चले जा रहे थे, उसी मार्ग से मोपलों की एक दूसरी बड़ी टोली हिन्दुओं की मृगया करती हुई आ रही थी । इस संकट को देखते ही वे पुरुष भयभीत हो उठे थे तथा इस चिन्ता से ग्रस्त हो उठे थे कि अब क्या होगा । एक भयंकर संकट का सामना करने और आत्मरक्षा का मार्ग खोजने में ही उनकी सम्पूर्ण शक्ति लग रही थी । उनके कंठ जल के अभाव में सूख गए थे । स्नायु विश्राम के अभाव में शिथिल हो रहे थे । किन्तु इतने पर भी यदि वे ब्राह्मण कुमार और वे थिय्या युवक यदि अभी तक हाथों में शस्त्र लिए हुए खड़े रह सके थे तो वह अकेले दामू के ही धैर्य और दृढ़ निश्चय के भरोसे । "जीवन की अन्तिम घड़ी तक लड़ेंगे, धर्म के लिए मरेंगे, मलबार का हिन्दू लड़ सकता हैं । हमने तो अपना कर्त्तव्य पूर्ण किया, बस !" यह वाक्य उनमें से किसी एक के मुख से निकला ही था कि सुमति आवेश सहित बोल उठी, "मुझे एक छुरी दो, मैं भी एक-न-एक हिन्दू-द्वेषी को मार कर ही मरूंगी ।"

दामू ने उसे एक छुरी दी और बोला, 'देवी ! जब तक मैं जीवित हूँ, तुम्हारे हाथ की छुरी मैं हूँ । मेरी मृत्यु के उपरान्त यह ।" उस तरुण और तरुणी के उत्साह से प्रेरित होती हुई मसकुनि जाति की वह अस्पृश्य बाला मालती भी आवेश में आकर बोल उठी, "मुझे भी एक छुरी दे दो । मैं भी हिन्दू धर्म के लिए लड़ते-लड़ते ही अपने प्राणों की भेंट चढ़ाऊँगी ।" दामू ने उसे एक और छुरी दे दी । परन्तु वह उस छुरी को अपने हाथों में नहीं पकड़ रही थी । "नीचे डाल दो, मैं इसे नीचे से उठा लूंगी । मेरी जाति मसकुनि है । तुम थिय्या हो । मैं ग्राम में. तुम सब से, दूर रही । मेरा आपका स्पर्श हो गया तो आपका अशुभ हो जाएगा न ।"

दामू हँसा और बोला, "हमारी इच्छा है कि हम ब्राह्मणों की बराबरी करें । ब्राह्मण भी हमें अपने बराबर का अधिकार दें यह हम मांग करते हैं । किन्तु ऐसा कहने से पहले महारों को तथा डोम्बों को अपने समान अधिकार देने होंगे । तू मसकुनी है, किन्तु तू हिन्दू भी है न । मैं भी हिन्दू हूँ । अतः मेरे हाथ से यह छुरी ग्रहण कर ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

जब मुसलमानों से मेरे छू जाने में कोई दोष नहीं होता तो फिर भला तुझ हिन्दू से छू जाने से क्या अनिष्ट होगा ! आज तुझमें हिन्दू धर्म के लिए मरने का उत्साह जाग्रत हुआ है, अतः तू मेरे लिए ब्राह्मण की अपेक्षा भी अधिक पूज्य है ! ले पकड़ यह छुरी अपने हाथ में। और जो धर्म का शत्रु पहले दिखाई दे, और जो आततायी सामने आए, उस पर इसी से प्रहार कर।"

मालती ने दामू के हाथ से वह छुरी ले ली। दैव की क्या इच्छा है, यही देखने के लिए वे सभी उस झाड़ी के पीछे छिप गए थे।

कुछ ही क्षण बीते होंगे कि "दीन-दीन", और "अल्लाहो अकबर" की गर्जना करती हुई डेढ़ सौ-दो सौ मुसलमानों की टोली और आगे बढ़ आई। इस उपद्रव में १०-१२ ग्रामों के मोपले एकत्रित होकर एक हरे कपड़े की पताका बनाए उसे तुर्कों का ध्वज बताते और फहराते हुए हिन्दुओं की लूट-मार करते हुए चले आ रहे थे। जो मुसलमान जितना बड़ा गुण्डा और जितना अधिक गुण्डा था, वह उतना ही बड़ा धर्मवीर बन गया था। क्योंकि जिहाद-सरीखा कोई अन्य धंधा मिलना भी तो उनके लिए आसान नहीं था। वे राक्षस आगे बढ़ते इधर-उधर भी टटोलते हुए चल रहे थे। क्योंकि जो हिन्दू अपने प्राण बचाकर इधर-उधर छिपे हुए थे, वे उन्हें भी मृत्यु के मुख में ठेलते आगे बढ़ते आते थे। दुर्दैव से अब वे उस झाड़ी के समीप ही आ पहुंचे और उनमें से किसी ने उधर झांकते ही चिल्लाना आरम्भ कर दिया "काफिर, काफिर।" पहले जो दस-पाँच मोपले आगे बढ़े उन्हें तो उस तरुण थिय्या तथा उसके सहायकों ने अपनी तलवारों की भेंट चढ़ा दिया। किन्तु अब तो यह सारी टोली ही उन पर टूट पड़ी थी। दामू के पास भी छुरियाँ और अधिक नहीं थीं। अन्यथा वह उन महिलाओं को भी एक-एक छुरी दे देता। अब निराशा साक्षात् रूप धारण कर उनके सम्मुख आ खड़ी हुई थी। वह टोली उनकी ओर बढ़ आई थी। युवतियों के हाथ में तलवारें देखकर वे मोपले चीत्कार कर उठे। खटाखट तलवारें एक-दूसरे से टकराने लगीं। तीन चार मुसलमानों की निर्जिव देह भूलूंठित हो गई। इस समय तक हरिहर शास्त्री का वीर पुत्र अपने शौर्य का प्रदर्शन करता हुआ उन स्त्रियों से शत्रुओं को दूर रखे हुआ था। किन्तु सहसा ही तीन-चार तलवारें उस पर एक साथ पड़ीं और उसकी देह टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गई। एक पूरा आघात लगने से उस मसकुनी का सिर भी नारियल के समान कटकर टूट गया था। अपने भाई की हत्या होते हुए देखते ही सुमति क्रुद्ध सिंहिनी के समान उसका वध करने वाले मुसलमानों पर टूट पड़ी। उसने अपनी छुरी के प्रहारों से दो के पेट चीर दिए। किन्तु सहसा ही कई मोपलों ने एक साथ उसे पकड़ कर उसके हाथ से छुरी छीन ली। वे अब उसे अपनी-अपनी भुजाओं में भरने का प्रयास कर ही रहे थे कि सहसा एक आवाज गूंज उठी "हाँ, दूर, हो जाओ।" इस अधिकारपूर्ण स्वर को सुनते ही वे मोपले उसे छोड़ कर अलग हो गए। उसी समय उस टोली के मुखिया ने कहा "इस छोकरी को जाने मत दो, किन्तु इसके हाथ बाँधकर इसे मेरे साथ-साथ ले चलो।" आँखें मटकाते हुए ये मोपले पुनः सुमति को बन्दी बनाने के लिए आगे बढ़े। वे उसे बन्दी बनाकर ले चले। मार्ग में ले जाते समय सुमति अचेत हो गई थी। उधर वह थिय्या तरुण भी अनेक घावों के लगने के कारण बेचैन हो रहा था और उसे भी मोपले बन्दी बनाकर अपने साथ लिए चल रहे थे। वह मसकुनी मालती, लक्ष्मी और हरिहर शास्त्री की पत्नी; उन्हें मोपलों ने उड़ा लिया था अथवा वे मारी गई थीं। उनका भी किसी को पता नहीं था। थोड़ा आगे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

बढ़ते ही एक गाड़ी दिखाई दी। उस टोली का मुखिया बोल उठा "इस छोकरी को उस गाड़ी में बैठा दो।" सुमति को उठाकर उस गाड़ी में पटक दिया गया और वह मुखिया भी उसी गाड़ी में सवार हो गया। वह गाड़ी उस दिशा से विपरीत दिशा में बढ़ चली, जिसमें दामू थिय्या को ले जाया जा रहा था। इस प्रकार कठिन-से-कठिन और भयंकर-से-भयंकर जो कोई संकट सुमति पर आ सकता था वह उसे झेल रही थी।

उसका धैर्य-मेरु डगमगा उठा और वह दहाड़ें मार कर रो पड़ी! "दामू! दामू!" ही उसके कंठ से निकल रहा था। वह आज इतनी अधिक विह्वल थी कि जीवन में इससे पहले कभी भी नहीं हुई थी। उसने बड़े जोर-जोर से दामू को आवाज लगाई, किन्तु गाड़ी तेजी से भागती हुई आ रही थी और अब दामू उसकी दृष्टि से पूर्णतः ओझल हो गया था। उस निराधार स्थिति में, उस किशोरी के मन में चुभते हुए वियोग के दंश, उससे फूटती हुई वेदना की लहर का वर्णन भला कोई क्या कर सकेगा? वह तो उसी भाँति तड़प उठी थी, जिस भाँति मछली जल से बाहर निकलते ही तड़पती है।

और बेचारा दामू? विगत दो दिनों से तो उसकी सम्पूर्ण भावनाएं उसका विचार, उसका विकार, उसके रक्त बिन्दुओं का प्रत्येक स्पन्दन सुमति के लिए ही समर्पित था। और वह आज उसी सुमति की रक्षा कर पाने में असफल रहा था। फिर भी वह जीवित है, यह विचार आते ही दामू—वह अठारह वर्ष का तरुण लड़का—वह भी उस किशोरी का स्मरण कर दहाड़ें मार मारकर रुदन कर उठा।

सुमति को उस मुखिया ने थोड़ा डांटा, कुछ दया का भी प्रदर्शन किया और बोला, "छोकरी! रोती है! अरे रोकर तो तू अपने आपको ही अधिक कष्ट दे रही है? जितना तू अधिक रोएगी उतना ही अधिक संकट में पड़ेगी। तेरे ऊपर बन्धन उतने ही अधिक कठोर हो जाएंगे। परन्तु तू ऐसी पागल नहीं है। तू मेरे बारे में जानती है न! देख मैं इस टोली का मुखिया हूँ। इस तालुके का कलेक्टर हूँ। मेरा नाम क्या तुझे विदित नहीं है। इस खिलाफती राज्य में मैं भी अलिमुसेलियर के समान बराबर का अधिकारी हूँ। उसके समान ही मेरा भी हुक्म चलता है। खलीफा ने मुझे कलेक्टरी दी है और कट्टम ग्राम का मौलवी भी मेरे ही मातहत है। अब तुझसे मुझे प्रेम हो गया है और तुझ पर मेरा विश्वास भी है। क्या तू नहीं जानती कि मेरा नाम क्या है? मेरा नाम ऐटखान है।"

अपने-आप ही प्रश्न करने वाला तथा स्वतः ही उनका उत्तर देने वाला यह ऐटखान वही था, जिसका उल्लेख पहले कालिकत की सभा में किया जा चुका है! वह सुमति का मनोरंजन कर रहा था। हां मनोरंजन, किन्तु ठीक वैसा ही जैसा मनोरंजन उस मछियारे द्वारा जल से निकाल कर अपने जाल में फंस जाने वाली उस तड़पती हुई मछली का किया जाता है, जिसे पाकर वह झूम उठता है और मस्ती में आकर गाने लग जाता है।

गोपुर ग्राम समीप आ गया था। ऐटखान ने एक मकान में मिट्टी की एक दीवार के सहारे चादर तान कर एक पुरानी अलग कोठी बना दी और उसमें सुमति को छोड़ वहां भोजन की भी व्यवस्था कर दी गई थी और बाहर कठोर पहरा बैठा दिया था। सुमति को वहां बैठाकर उसने कहा "मैत्रिणी! तू शान्त होने तक मेरे

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इसी बंगले में रह। शान्त हो, तुझे मेरी गर्दन की कसम ! मैं यहां के ब्राह्मणों को ठिकाने लगाकर उन्हीं के बंगलों में अपना थाना स्थापित करूंगा। आज का दिन तो यहीं बिता। मैं सांयकाल वापस आऊँगा।" ऐसा कहते हुए वह मोपला वहां से विदा हुआ ! इधर सुमति तड़प रही थी ! अन्न ग्रहण करना तो दूर रहा, उसने पानी की बूंद तक भी अपने कंठ से नीचे नहीं उतारी। बाबा ! दामू ! भय्या ! कहते-कहते पुनः वह दहाड़ें मारकर रोने लगी ! अब वह क्या करेगी ! इन नराधमों के बन्दीगृह से मुक्त होने की उसे कोई भी आशा नहीं रह गई थी। वह सायंकाल तक इसी प्रकार तड़पती रही।

परन्तु मन के दु:ख की भी नियति ने नैसर्गिक मर्यादा निर्धारित की हुई है। आज असहनीय कष्टों को सहते-सहते दो दिन व्यतीत हो गए थे। उसका शरीर थक चुका और मन भी इतना अधिक थक गया था कि उसका प्रत्येक मज्जापिंड, प्रत्येक रक्तपिंड शिथिल होता जा रहा था और अब उसे नींद नहीं अपितु मूर्छा आ गई थी और वह निश्चल और निर्वेदन होकर पड़ गई थी।

दिन बीता, रात आई। ऐटखान भी पुनः आ धमका। सुमति प्रगाढ़ निद्रा अथवा मूर्च्छा की अवस्था में थी। यह देखकर ऐटखान को एक-प्रकार के आनन्द की अनुभूति हुई। क्योंकि उसके रुदन और चीखने-चिल्लाने से तो इस दुराचारी के रंग में भंग ही पड़ता था। उसने उस मूर्च्छित ब्राह्मण कन्या को कस कर पकड़ लिया और मन ही मन सोचने लगा "यह ब्राह्मण कुल की शुचिमूर्ति, सुन्दर युवती मेरे जैसा व्यक्ति पीढ़ी दर पीढ़ी पुण्य करेगा तब भी उसके पल्ले न पड़ेगी। कनकलतिका आज मेरे हाथों में है।" ऐसा विचारते-विचारते उसने अपने मन की कलुषित वासना को पूर्ण करने का निश्चय किया। वह सोच रहा था कि अच्छा ही है कि इसे नींद आई हुई है, अन्यथा यह प्रतिरोध अवश्य ही करती ! यह सोचते-सोचते ही वह उसके पास लेट गया ! उसे उसने अपनी ओर समीप खींच लिया और मन ही मन बोला 'या अल्लाह ! तूने मुझे मेरे धर्मवीरत्व का श्रेय प्रदान किया है ! अल्लाह ! यह परी तुमने मुझे प्रदान की है ! निसंशय कुरान ईश्वर प्रणीत है। उसके वचन सत्य हैं ! 'ईमानदार' को परी मिलेगी ! यह वचन अल्लाह तुमने सत्य ही कहा है ! कितनी मृदुल है, इसकी देह ?' मोपला विचारों में खोया-खोया कामोन्मत्त हो उठा। उसने पुनः उसे अपनी छाती से चिपटा लिया। सुमति कमलिनी-सी मुरझा गई। रात्रि-भर इसी तरह रहना। जागना नहीं छोकरी ! ऐसा कहते हुए उसकी साड़ी की ओर हाथ बढ़ाने लगा। इस किशोरी के जिन अंग-प्रत्यंगों को कभी सूर्य की किरणों ने भी स्पर्श नहीं किया था, उत्कट काम में अन्धा होकर वह कामुक लम्पट उन्हें स्पर्श करने ही लगा था कि तोबा ! तोबा ! कहते हुए चीख उठा। परन्तु उस एकान्त में तो उसकी पुकार सुनने वाला कोई भी नहीं था।

रात्रि बीती ! सवेरा हुआ। इस ग्राम में आकर मोपलों की एक अन्य टोली ने उपद्रव करना आरम्भ कर दिया। ऐटखान की टोली के लोग घबराकर उसे इस समाचार से अवगत कराने के लिए आ पहुंचे। उन्होंने आकर द्वार ठकठकाया। भीतर से कोई आवाज न आने पर उसे तोड़ दिया तो देखकर हतप्रभ रह गए !

ऐटखान मरा पड़ा था और एक भयंकर नाग अपने फण को छत्री के समान सुमति के सिर पर फैलाए हुए था। ऐटखान के शरीर पर सर्पदंश के इतने अधिक चिह्न थे कि उसके प्रत्येक रन्ध्र से विष से दूषित रक्त प्रवाहित हो रहा था।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

'नाग !' 'नाग ।' चारों ओर यही चीत्कार होने लगा। सुमति भी द्वार पर हुई ठकठक से अपनी नींद से कुछ जाग उठी थी। ज्यों ही वह उठी तो वह नाग उसके पैरों को चाटने लग गया। "फणीन्द्र, मेरा फणीन्द्र" कहते हुए सुमति ने उसके शरीर को सहलाया और सहज में ही उसके कंठ से वह गीत मुखरित हो उठा जो प्रतिदिन गाकर वह नाग को रिझाया करती थी। प्रगाढ़ निद्रा से उठते ही ऐसा लगा कि वह अपनी फूलों की बगिया में ही प्रातःकाल फणीन्द्र के साथ खेल रही हो।

उसी समय उसका ध्यान समीप ही पड़े ऐटखान और उसके समीप पड़ी हुई छुरी की ओर गया। इससे उसे सम्पूर्ण स्थिति समझ में आ गई। वह समझ गई कि मेरी रक्षा के लिए फणीन्द्र इस प्याले में पिलाए गए दूध का उपकार स्मरण कर मेरे मार्ग में आया है। जिस समय मैं बेसहारा हालत में थी, तब इस दुष्ट ऐटखान के स्पर्श से मेरा कौमार्य भंग हो जाएगा यह समझकर फणीन्द्र ने मेरे साथ हुए अत्याचार का प्रतिशोध लेने के लिए ऐटखान को डस कर यमलोक भेज दिया। वस्तुतः इस सर्प के रूप में परमात्मा ही मेरे रक्षक बन कर आए। जिसने द्रोपदी की लाज रखी थी, उसीने मेरी लाज बचाई है। वह सर्वदा भक्तों की लाज इसी प्रकार रखता है ! यह विचार सहसा ही सुमति के मन में कौंध उठा।

पर, हे बेचारी लड़की ! थोड़ा ठहर, केवल न्याय की इस कल्पना में ही न खो जाना। घटनाक्रम का भी स्मरण कर। परमेश्वर ने यह न्याय और धर्म, उसकी रक्षा और संरक्षण तो वह सदा करता ही है ! किन्तु इसी कल्पनालोक में न खोई रहना ! अब परमेश्वर ही तेरी लज्जा की रक्षा करेगा केवल इसी मान्यता के भरोसे न रहते हुए तू अपनी कमर में बंधी कटार पर अधिक अवलम्बित हो। समय आने पर तेरी इस भावना के स्थान पर शायद यही अधिक उपयोगी सिद्ध होगी ! कारण ऐटखान तो मर गया परन्तु मोपले तो अभी जीवित ही हैं।

अभी सुमति इन विचारों के ऊहापोह में रमी हुई थी कि मोपले उस कोठरी में आ घुसे। उस नाग ने किसी निर्भीक वीर के समान उनमें से एक को फुंकारें मारते हुए डस लिया। किन्तु तभी दो-तीन तलवारें उस पर पड़ीं और उसके टुकड़े-टुकड़े हो गए। तभी वे मोपले सुमति पर टूट पड़े। सुमति ने भी सहज ही एक आड़ का आश्रय लिया और अपनी छुरी निकाल ली ! उसने उन मोपले में से दो-तीन के पेट को अपनी छुरी के प्रहारों से फाड़ दिया और वे दम तोड़ गए। अब वह छुरी अपने पेट में भोंकने ही वाली थी, उसने हाथ ऊपर ही किया था कि उसका हाथ पकड़ लिया गया। उसने अपने हाथ को छुड़ाने का असफल प्रयास किया, परन्तु भला उसे मरने कौन देता ? केवल इस छीना-झपटी में उसके सिर पर मोपलों की तलवार का आघात लगा था, जिससे उसके सिर में घाव हो गया था। उस घाव से निकलता हुआ रुधिर उसके कंठ तक बह कर आ रहा था। उन मृत पड़े मोपलों के पेट से बहे रक्त से वह कोठरी भर गई थी। उस रक्त में उस नाग के टुकड़े तड़प रहे थे। जो पांच-छः मोपले कोठरी में घुस आए थे वे सुमति को पकड़े खड़े थे और उन्होंने उसके हाथ से छुरी छीन ली थी। वे इस पुष्प-सी कोमल-कन्या को फूल के समान मसलने लग गये थे। ऐसी विकट स्थिति थी और चारों ओर फैले रक्त ने स्थिति की बीभत्सता को और भी अधिक बढ़ा दिया था।

"फजल ! देखता क्या है !" एक मोपला सुमति के दोनों हाथों को, जो ऊपर की ओर उठे हुए थे, पकड़े खड़ा हुआ अपने साथी से कह रहा था। "अरे, कल उस

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

झाड़ी से यही पखेरू अपने हाथ आया था । परन्तु ऐटखान ने बीच में ही धोखा दे दिया । अब देखता क्या है ? अन्यथा यदि उस मौलवी की टोली के लोग एक बार यहाँ आ पहुंचे तो वे इस छबीली को उठा लेंगे और फिर यह उस मौलवी के कब्जे में पहुंच जाएगी । तुम फिर मक्खियाँ मारते रह जाओगे ।" ऐसा कहते हुए उस उन्मत्त ने सुमति के रक्त से सने कपोलों का चुम्बन लिया "अरे यार मेरे वास्ते भी रख !" इस प्रकार उच्छृंखल विनोद करते हुए वे पाँच-छः पशु नितान्त कामोदित्तहोकर घायल कन्या से लिपट गए ।

समाज की सुव्यवस्थित अवस्था में मानव के मनोविकार मर्यादित और दबे रहते हैं । उसमें एक प्रकार का असन्तोष भी निहित होता है । राक्षसी प्रवृत्ति के लोगों में ये मनोविकार जितने उग्र होते हैं, उनमें असन्तोष भी उतना ही अधिक होता है । पाशविक वृत्ति के समाज में जब कभी विप्लव होता है तो यह दुष्ट और तामसी प्रवृत्ति औरभी अधिक खुल खेलती है । उससे उनके कामुक विकारों की शान्ति नहीं हो पाती अपितु वे और अधिक भड़क उठते हैं । वह कन्या रक्त-से सरावोर, बेहाल थी, बिलबिला रही थी । किन्तु कामुकता के इन जीवित पुतलों का इन्द्रियोन्माद और भी अधिक बढ़ गया था---"अरे यार ! इस साली ने दो मुसलमानों को यहीं मार डाला है । इसलिए इससे अच्छी तरह प्रतिशोध लेना चाहिए । हाँ, जी भर कर प्रतिशोध लेना चाहिए ।" इस प्रकार कहते तथा खों-खों करके हाँफते हुए इन नर-पशुओं ने इस कन्या से भयंकर बलात्कार करना आरम्भ कर दिया था । एक नहीं, दो-दो, तीन-तीन नराधमों ने 'बदला लो' कहते हुए उस बेवस कन्या का शीलभंग किया और इस अमानुषिक भीषण अत्याचार द्वारा वे अपनी कामवासना का अमानुषिक ढंग से ही समाधान कर रहे थे । इसी प्रकार ९-१० नराधमों ने इस कन्या के साथ बलात्कार कर अपने इन्द्रियोन्माद की जीभर कर पूर्ति की ।

किन्तु यह बलात्कार इस निष्पाप और निरपराध कन्या से नहीं अपितु अब तो इसकी निर्जीव देह से हो रहा था । क्योंकि वह बेचारी तो कभी की इस भयंकर और क्रूर यातना को सहन करने में असमर्थ होकर इस संसार से विदा ले चुकी थी ।

हाँ, उसने अपनी बलि दे दी थी । किन्तु एक धर्मवीर के समान ही वह शत्रुओं को मारते-मारते बलि हुई थी । गत दिवस वह इसी समय सुगंधित पुष्पों की माला गूँथ कर भगवान श्रीरंग की मूर्ति को समर्पित करने के लिए स्नान करने के उपरान्त स्तोत्र-पाठ करती हुई जा रही थी । और देवपूजन के लिए जाती हुई इस पुष्प के समान सुकुमार और कोमल कन्या का स्पर्श करने में वायु को भी संकोच होता था । वायुदेव भी शायद सोचते होंगे कि अनेक जन्मों का संचित पुण्य जिसकी गाँठ में है वही सौभाग्यशाली युवक इस कन्या का हाथ पकड़ेगा ।

परन्तु एक दिन और रात के पश्चात ही देव ने स्थिति कितनी अधिक परिवर्तित कर दी थी । और क्यों ? भला क्या ऐसा था इसका ! ऐसी उसने किसी का क्या अनिष्ट किया था ? वह तो सर्पों से भी प्रेम करती थी । उसने जिस हिन्दू जाति में जन्म लिया था उसी हिन्दू जाति के समान उसने भी तो सर्पों को दूध पिलाया था ।

और हाँ, यही तो था उसका अपराध कि उसने हिन्दू जाति में जन्म ग्रहण किया था । केवल इसीलिए तो उसके समक्ष यह प्रसंग उपस्थित हुआ था । किन्तु इस स्थिति में ही तो उसने अपनी दृढ़ता का परिचय दिया था । इस भयंकर स्थिति में भी

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कल्याण-कामना

शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु
शं नश्चतस्त्र प्रदिशो भवन्तु
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु
शं नः सिन्धुवः शमु सन्त्वाप ॥

—विपुल तेजवाला सूर्य हमारे लिए
कल्याण-कारी होकर उगे, चारों दिशाएं
हमारे लिए कल्याण-कारी हों, अविचल
पर्वत हमारे लिए कल्याणकारी हों;
नदियां हमारे लिए कल्याणकारी हों;
उनके जल हमारे लिए कल्याणकारी हो।

ऋगवेद ६.३५.८

—बनारसी सिंह

उसने हिन्दुत्व का परित्याग नहीं किया । अपितु एक धर्मवीर हिन्दू के समान हिन्दू राष्ट्र और हिन्दू धर्म के शत्रुओं को मारते-मारते ही उसका बलिदान हुआ । उसकी पवित्रता, सुमधुर कण्ठों से गाए 'स्तोत्रों' और पुष्पों की मालाओं के अर्पित करने से श्रीरंग जितने प्रसन्न नहीं हो पाए उतने वे आज उसकी इस अशुद्ध, घायल और घावों से प्रवाहित होने वाले रक्त से लथपथ और बलात्कार से अपवित्र हुई देह को देखकर सन्तुष्ट थे। देवालयों के शान्त, निर्विघ्न वायुमण्डल में गोमुखी में हाथ डाले जो जप करते रहते हैं केवल घण्टे की मंजुल आवाज से जिनकी शान्ति भंग नहीं होती, ऐसे शान्त वातावरण में जो पंच पकवानों और नैवेद्य को देवमूर्ति के समक्ष प्रस्तुत कर पूजन-वन्दन में तल्लीन रहते हैं, ऐसे भक्तों और पुजारियों की संख्या तो कम नहीं ! उनकी पूजा भी परमात्मा स्वीकार करता है, जिसने जप करने वाले किसी हिन्दू साधु की अपेक्षा हिन्दू धर्म और हिन्दू राष्ट्र पर भयंकर आपत्ति आने पर और सिर पर संगीनें तने रहने की स्थिति में भी न घबराते हुए हिन्दू धर्म पर एकनिष्ठ रहते हुए लड़ते-लड़ते हुए प्राण विसर्जित कर दिए और बलात्कार और बीभत्स अत्याचारों में भी अपनी निष्ठा को डगमग नहीं होने दिया, ऐसी यह हिन्दू कन्या भी तो कम पवित्र नहीं थी। अरे नहीं, नहीं उसका यह अशुद्ध स्थिति में भी की गई पावन पूजा ही अधिक शुद्ध है ! देवताओं की दृष्टि में निश्चित ही उसकी पूजा अधिक मान्य है ! क्योंकि इस भयंकर आपत्तिकाल, घोर राक्षसी अत्याचारों की घड़ी में देवालय में पद्मासन लगाकर बैठे रहने की अपेक्षा रणांगण में अपने पराक्रम का प्रदर्शन वेद, सती और धर्म का रक्षण करना ही अधिक गौरवास्पद है। हवन में समिधाएं समर्पित करने की तुलना में हुतात्माओं का प्राण-बलिदान देवताओं की दृष्टि में अधिक श्रेयस्कर है।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

* शतपथ ब्राह्मण *

[व्याख्या : भाष्य]

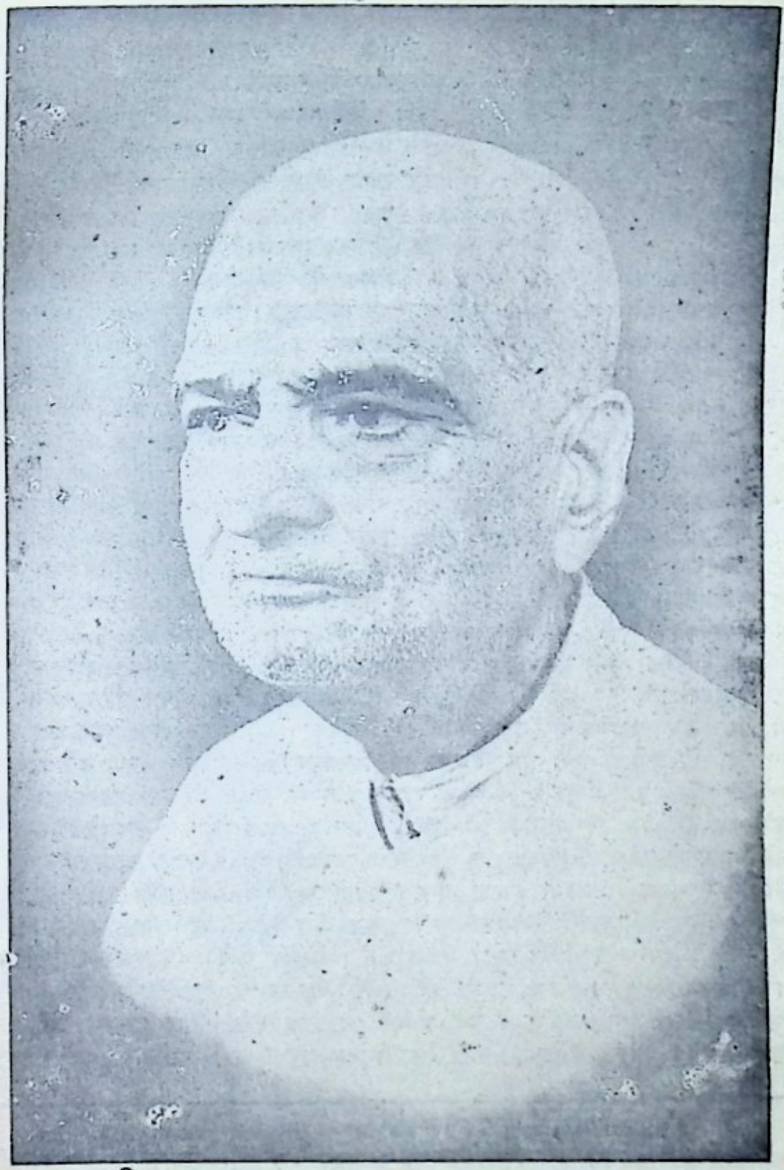

भाष्यकार—प्रसिद्ध वैदिक विद्वान्
आर्यसमाज के गौरव
स्वनामधन्य : स्वामी समर्पणानन्द सरस्वती

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ग्रन्थ-परिचय

ग्रन्थ का परिचय देने के लिए मुझे यही ठीक जान पड़ता है कि इस बात का परिचय दूं कि मेरा इस ग्रन्थ से परिचय किस प्रकार हुआ। वाद-रसिक मैं बाल्य-काल से ही था। गुरुकुल में पढ़ते हुए यह रसिकता कदाचित् नीरस मात्रा तक बढ़ी हुई थी। मुझे इसका परिचय यों है कि एक समय सहाध्यायी लोग मुझे दूर से देखते ही कन्नी काटने की चिन्ता करने लगते थे। विशेषकर जिन्हें परीक्षा की तय्यारी के लिये अथवा किसी अन्य कारण से पढ़ाई में विशेष मनोयोग देना अपेक्षित होता था। इसका कारण यह था कि मेरा दूर से उदय होता देखकर ही वे समझ लेते थे कि अब उनके स्वाध्याय को वाद-राहु का खग्रास लगा चाहता है। पीछे से एक आदरणीय बन्धु की सुशिक्षा से मेरा यह लोक-पीड़ा-कर स्वभाव तो दूर हो गया परन्तु इतनी बात अब भी स्मरण है कि उन दिनों के विवाद के विषय में यज्ञों में पशुहिंसा भी एक विषय था। मेरा पक्ष होता था पशुयाग के विरुद्ध। अन्त को तान पूर्व-मीमांसा पर और पीछे उसके आधारभूत ब्राह्मण ग्रन्थों पर आकर टूटती थी। इन दोनों ग्रन्थों का ज्ञान न होने के कारण हम लोग यों ही चिरकाल तक व्योमताडन करके चुप हो जाते थे। यद्यपि पीछे से महाविद्यालय में शतपथब्राह्मण पाठ्यग्रन्थ भी था परन्तु उससे तीन ही लाभ हुए। एक तो निरर्थक यज्ञ क्रियाओं के द्वारा हास्यरस के आलम्बन विभाव की प्राप्ति दूसरे उस समय के शतपथाध्यापक पण्डित श्री सूर्यदेव जी की विचित्र भाव-भंगी पूर्ण किन्तु सरलता द्योतक विचित्र भाषा द्वारा कुछ विनोद रसिकों का विनोद, और तीसरे परीक्षा में कुछ अंकों की प्राप्ति। परन्तु उस वाद-रसिकता तथा ग्रन्थ पाठ से हृदय में यह संकल्प अवश्य जागृत हो गया कि एक दिन इस बीहड़ ग्रन्थ रूपी जंगल में स्वतन्त्र संचार का मार्ग अवश्य ढूंढ़ निकालना है। इसी पशुयाग के निर्णय के लिए मैंने पूर्व-मीमांसा पढ़ने का भी प्रयास किया। किन्तु जितनी बार यह उद्योग किया उतनी बार ही यह दीखा कि जब तक यज्ञ प्रक्रिया और ब्राह्मण ग्रन्थों का ज्ञान न हो पूर्व-मीमांसा पढ़ना नदी के किनारे खड़े होकर तैरना सीखने के समान है। तैरने के सब सूत्र याद हो जायेंगे परन्तु डूबने से बचना न आएगा। यही कारण था कि गुरुकुल छोड़ने के पश्चात् बरेली रहकर भी मैं यथा-सम्भव इस ग्रंथ का स्वाध्याय करता रहा। उसके पश्चात् घटना चक्र में पड़कर मैं लाहौर आया। वह लम्बी कथा है और यहां अप्रासंगिक भी है। बस मैं आ गया। उन दिनों आचार्य रामदेव जी वेद-प्रचार के अधिष्ठाता थे और मैं उन्हीं के साथ एक प्रकार का अन्ते-वासी होकर रहता था। एक प्रकार का इस लिए कहा कि यद्यपि मैं उनसे कोई ग्रंथ अथवा विषय नहीं पढ़ता था तथापि वहां रहकर मैंने वह सीखा जिसे मैं अपने जीवन में सबसे मूल्यवान् पाठों में से एक समझता हूँ। अर्थात् मैंने अपनी आंखों से प्रत्यक्ष देखा कि लक्ष्मी एक सच्चे ब्राह्मण के आंगन में किस प्रकार ठोकरें खाती है। धन में अनुराग पहले भी कुछ अधिक न था, परन्तु हां, एक पाठ पढ़ना शेष था। सो वहां सीख लिया। मैं तो उसी दिन से उन्हें आचार्य कहता हूँ उससे पहले तो वह 'विचारं

सभी को यह जान हर्ष होगा कि यह अनुपम भाष्य धारावाहिक 'जन-ज्ञान' में छपना प्रारम्भ हो रहा है और हम इसे पृथक ग्रन्थ रूप में भी छाप रहे हैं। प्रथम भाग का मूल्य १०) होगा। संपादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

ग्राहयति विचार्यः' थे 'आचारं ग्राहयति आचार्यः' नहीं। अस्तु उस अन्तेवास काल में आगरे से पण्डित घनश्याम जी की लिखी एक पुस्तक 'भूमिकाधिक्कार' निकली। मुझे कहा गया कि इसका उत्तर लिखो। मैंने इन्कार कर दिया। कारण यही था कि उसमें ऋषि दयानन्द पर आक्षेप किया गया था कि उन्होंने शतपथादि के अनुसार भाष्य करने की प्रतिज्ञा तो की परन्तु निभा न सके। हृदय नहीं मानता था कि ऋषि निभा न सके। परन्तु उत्तर तो तभी दे सकता था जब शतपथ का ज्ञान हो। उधर वेद में पशुयाग वादियों का पक्ष पूर्व-मीमांसा की प्रक्रिया सहित विशाल व्यूह में सुसज्जित खड़ा था। इस समय से मेरी शतपथ पढ़ने की इच्छा एक प्रबल भूख का रूप धारण कर उठी। जितनी बार शतपथ का पारायण करता था यही दीखता था कि इस ग्रन्थ के साथ अन्याय हुआ है। अन्त को शतपथ ने ही मुझे वेद के पारायण के लिये बाधित किया। यह कथा तो यहां सुनानी अत्यन्त आवश्यक है। शतपथ ब्राह्मण में सोमयाग प्रकरण में पढ़ा कि "दीक्षातपसोहवा कुश्योरन्तर्निहितः सोम आस" अर्थात् सोम दीक्षा और तप के गमलों में लगा हुआ था, वहां से वह लाया गया। एक और वाक्य जिसने मुझे अत्यधिक प्रभावित किया वह पुरोडाश विषयक था। वह यों था—"यान्येवास्य शीर्ष्णः कपालानि तान्येवास्य कपालानि मस्तिष्क एव पिष्टानि" अर्थात् पुरोडाश के कपाल वही कपाल हैं जो इस हमारे सिर के हैं, और उसमें पीस कर रक्खी हुई चावलों की पिट्ठी वस्तुतः मस्तिष्क है। अस्तु इस वाक्य की कथा तो यथा-प्रसंग फिर कहूँगा। यहाँ तो केवल सोम की कथा कहानी है। मैंने विचारना आरम्भ किया कि दीक्षा और तप के गमलों में तो तो ब्रह्मचारी ही लगा होता है। तब फिर यह सोम जंगल का सोम नहीं किन्तु अवश्य ही कुछ और है। जंगल का सोम दीक्षा और तप के गमला में नहीं होता। इसे मेरी सम्पूर्ण खोज का सूत्रपात कहिए। फिर सोम का जो सोमयाग में 'आतिथ्य' होता है उसे गुरुकुल से समावृत्त स्नातक के स्वागत से अत्यन्त मिलता जुलता पाया। यहां से यह सन्देह और भी दृढ़ हो गया। हृदय कहने लगा कि हो न हो जिन्होंने सोम को एक बूटी समझ कर अर्थ किया है उन्होंने निस्सन्देह वेद का अनर्थ किया है। इसी खोज की इच्छा ने वेद के पारायण के लिए बाधित किया। जिसका फलस्वरूप वह व्याख्यान है जो मैंने सोम के विषय में गुरुकुल विश्वविद्यालय व्याख्यानमाला में दिया और जो अब पुस्तकरूपेण प्रकाशित है। उस समय तक ऋक्, यजुः, अथर्व तीन वेदों का पारायण किया था, साम का नहीं। किन्तु मैं समझता हूँ कि उस पुस्तक में मैं निर्विवाद-रूपेण सिद्ध कर चुका हूँ कि सोम शब्द का प्रयोग कहीं वनस्पति, ऐश्वर्य, विद्वान् न्यायाधीश आदि के लिये भी हो, परन्तु उसका वेद में सब से अधिक मात्रा में प्रयोग गुरुकुल के स्नातक के अर्थ में हुआ है। इस पुस्तक के लिखने के पश्चात मैंने साम का पारायण भी किया जिसमें एक मन्त्र ऐसा देखा जो मेरी स्थापना को इतना पुष्ट करता है कि कदाचित् फिर विवाद के लिये कोई स्थान ही नहीं रहता। मन्त्र यों है--

"शिशु जज्ञानं हर्य्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति विप्रं मरुतो गणेन। कविर्गीर्भिष्काव्येन कविः संन्तसोमः पवित्रमत्येति रेभन्। ऋषिमनाः ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्रनीथः पदवीः कवीनाम्। तृतीयं धाम महिषः सिषाससन्त्सोमो विराजमनुराजतिष्टुप्। चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत्। अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति' (सामवेद उत्तरार्चिक पंचम प्रपाठक प्रथमार्ध, मन्त्र १३)

इसका अर्थ सुनिये—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"वह सोम 'हर्यंत" है—सब का वात्सल्य भाजन है, सब का प्रममात्र है। जब से वह जन्मा था, नन्हा सा शिशु था, तब से उसे मांजते आये हैं। वह 'विप्र' मेधावी है। सैनिक लोग अपने गण में रखकर उसे सुशोभित करते हैं। वह अनेक विद्याओं का अनेक भाषाओं का पण्डित है। कविता करता हुआ बड़ी पवित्र भावनाएं लिये हुए सभा में प्रवेश करता है। उसका मानसिक विकास हुआ है, उसका मन ऋषियों का मन है। वह आगे भी ऋषि पैदा करेगा, क्योंकि वह स्वयं "स्वर्षाः" सूक्ष्मदर्शी है। हजारों को रास्ता दिखाने वाला है। कवियों की पग-डण्डी है। वह विराट् अर्थात् प्रजा में शोभा पाता हैं, और फिर पीछे से विद्या बांटने की भावना से वह महान् सोम तृतीय धाम अर्थात् वानप्रस्थाश्रम में स्तम्भ के समान विराजमान होता है। यदि वह क्षत्रधर्म धारण करता है तो शक्तिशाली सब का विभृत्वा (भरण करने वाला, क्वनिप्) होकर सेना में प्रवेश करता है और शस्त्र धारण करता हुआ नई-नई भूमि लाभ करता है और ऐश्वर्य्य रस में सब को स्नान कराता है। यदि वह महान् सोम तुरीयधाम अर्थात् संन्यास में प्रवेश करता है तो फिर वह नदी, पर्वत और समुद्र की सीमाओं से ऊपर उठ जाता है, उसका कोई स्वदेश नहीं रहता, वह समुद्र तरंगों में बिहार करता हुआ देश-देशान्तरों में शास्त्र का विवेचन करता है।"

इस प्रकार शतपथ ने मुझे वेद तक पहुंचाया और फिर वेद ने शतपथ के रहस्य खोले। आज मुझे निश्चय है कि महाभारत में जो पशुयाग के विषय में लिखा है कि—

धूर्त्तैः प्रकल्पितं चक्रं नैतद्वेदेषु कल्पितम्। (शान्ति पर्व २६४ अ०)
यह बिल्कुल ठीक लिखा है।

यद्यपि 'मैं शतपथ के तत्त्व को पा गया हूं और इसके विषय में कुछ जानना शेष नहीं' ऐसा कहने का दुस्साहस वही कर सकता है जिसे कभी विद्वन्मण्डली में बैठने का सौभाग्य न मिला हो, किन्तु इतना तो अवश्य कह सकता हूं कि मैंने शतपथ के विषय में अब तक जो कुछ जाना है यह आगे आने वाले भाष्यकारों के लिये मार्गदर्शक होगा तथा अनेक ग्रन्थ ग्रन्थियों को सुलझाने नें सहायक होगा।

पशुयाग के विषय में भी इतना वक्तव्य है कि हो सकता है कि जिन स्थलों से पशुयाग के विधान की भ्रान्ति होती है उनमें से सब का यथार्थ अर्थ क्या है, यह मैं पूर्णरूपेण प्रकाशित न कर सकूं, परन्तु मेरा विश्वास है कि मैं पाठकों को इतना मनाने में तो सफल हो जाऊँगा कि पशुयाग विधान परक अर्थ ठीक नहीं। और अधिकतर स्थलों का रहस्य खोलने में भी समर्थ हो जाऊँगा। यदि मेरे दिखाये मार्ग से मेरे किये अर्थों का प्रत्याख्यान करके भी कोई विद्वान् ठीक अर्थ तक पहुंचने में समर्थ हो जावे तो मैं समझूंगा कि भगवती श्रुति के हृदय-मन्दिर तक पहुंचने में एक विद्वान् का चरण सोपान बन कर मेरा मस्तक धन्य हो गया है।

अब मैं संक्षेप से ग्रन्थ का परिचय देता हूं। इस परिचय में अधिकतर स्थापनाएं ही होंगी। प्रमाण बहुत कम होंगे। जिन्हें प्रमाण-पुरस्सर उन स्थापनाओं की उपपत्ति देखनी हों वे मेरे बनाए लघु ग्रन्थ "शतपथ में एक पथ" का परिशीलन करने की कृपा करें।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस ग्रन्थ के विचार महर्षि याज्ञवल्क्य के हैं और उनके किसी शिष्य ने इसकी रचना की है। इसमें १४ काण्ड हैं। इनकी विषय-सूची इस प्रकार है—

प्रथम काण्ड	दर्श-पौर्णमासयाग
द्वितीय काण्ड	अग्न्याधान
	अग्निहोत्र
	उपस्थान
	पिण्ड पितृयज्ञ
	आग्रयण
	दाक्षायण
	वैश्वदेव
	वरुण प्रघास
	साकमेध
	महाहविः
	त्र्यम्बकयाग
	शुनासीर्य्य
तृतीय काण्ड	सोमयाग
चतुर्थ काण्ड	
पंचम काण्ड	वाजपेय
	राजसूय
षष्ठ काण्ड	
सप्तम काण्ड	
अष्टम काण्ड	चयन विद्या
नवम काण्ड	
दशम काण्ड	अग्नि-रहस्य
एकादश काण्ड	यज्ञ रहस्य
द्वादश काण्ड	सौत्रामणी
त्रयोदश काण्ड	अश्वमेध
चतुर्दश काण्ड	बृहदारण्यकोपनिषत् अर्थात् ब्रह्मविद्या

इस प्रकार देखने से पता लगता है कि समस्त ब्राह्मण में यज्ञ की विद्या है। फिर प्रश्न उठता है कि ऋषि दयानन्द ने ब्राह्मण को वेद का व्याख्यान-ग्रंथ क्यों कहा है, इसे तो यज्ञ का व्याख्यान-ग्रन्थ कहना चाहिये। इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिये पहले यज्ञशब्द का समझना होगा। प्रायः यज्ञ का अर्थ अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेघ पर्यन्त कर्मकाण्ड गत क्रिया कलाप लिया जाता है। परन्तु यह घोर भ्रान्ति है। वस्तुतः यज्ञ शब्द का अर्थ अग्निहोत्र, अश्वमेधादि कुछ भी नहीं। यज्ञ शब्द का अर्थ तो है---'संगठित समारम्भ' (Organised activity)। व्याकरण में जो संगतिकरण के साथ देवपूजा और दान यह दो शब्द और लगे हैं वस्तुतः वे स्पष्टीकरणार्थ हैं, देवपूजा और दान संगीतकरण के ही दो रूपान्तर हैं। जब कोई अवयव आपस में संगत होते हैं तो उन्हें संगत करने वाला उन्हें

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

संगतिदान करता है और वे संगत होने वाले उस की पूजा करते हैं। जब एक सभा लगती है तो सभापति अथवा व्याख्याता निर्देशादेशोपदेश दान करते हैं और सभा उन की पूजा करती है। सो भोजन खाने से लेकर सार्वभौम साम्राज्य की स्थापना तक सम्पूर्ण संगठित कर्म्म यज्ञ हैं। अंगों की दृष्टि से भोजन यज्ञ है। परिवार की दृष्टि से गर्भाधान यज्ञ है। समाज की दृष्टि से वर्ण-व्यवस्था यज्ञ है। मानव-जगत् की दृष्टि से सार्वभौम राज्य यज्ञ है। और सम्पूर्ण चराचर की दृष्टि से संन्यासियों का सर्वभूत-दयामय वेद-प्रचार यज्ञ है। किन्तु जिस प्रकार घर में व्यूह रचना की सुशिक्षा पाए बिना सेना युद्ध-क्षेत्र में नहीं लड़ सकती इसी प्रकार बारम्बार स्मरण किए बिना समुदाय के लिए एक अंग के बलिदान की वह भावना जो सम्पूर्ण यज्ञ-क्रिया का मूल है, मनुष्यों के हृदय में घर नहीं कर सकती। वेद का मन्त्र २ इसी भावना से भरा है। उन मन्त्रों के भाव को लेकर ऋषियों ने कुछ स्थूल क्रियाएँ ऐसी रचीं जो देखने में अति साधारण प्रतीत हों परन्तु उनका भाव अति गम्भीर हो। उदाहरण के लिए बालकों की शिक्षा ले लीजिए। एक मनुष्य बड़ा भारी विज्ञानवेत्ता है। उसने एक ऐसे अस्त्र का आविष्कार किया है जिससे एक घण्टे में लाखों मनुष्यों का संहार हो सकता है। वह इस अस्त्र को एक डाकू के हाथ बेचना चाहता है। उसके एक मित्र को इस बात का पता चलता है। वह कहता है, देख भाई, इससे लाखों नर-नारियों का वध होगा, यह अस्त्र तू किसी धर्मात्मा को दे जिस से लाखों का विध्वंस होने के स्थान में भला हो। वह वैज्ञानिक उत्तर देता है--हम तो सूखे वैज्ञानिक लोग हैं, हम भावुक नहीं, लाखों मरें चाहे जिएं हमें क्या, हमें तो अपना आराम चाहिए। मित्र कहता है कि वज्र पड़े ऐसी शुष्क शिक्षा के सिर जो मनुष्य को सहृदय नहीं बनाती। उस समय वह अनुभव कर रहा है कि शिक्षा में सरसता अपेक्षित है। दूसरी ओर शत्रु का आक्रमण हो रहा है। संगीताचार्य जी अपना तम्बूरा लेकर चले। रास्ते में तोपखाने वाले मिल गए। उन्होंने पूछा, महाराज! कहां जा रहे हो? आप बोले इन्हें राग सुनाकर कहूँगा--'वैष्णव जन तो तेने कहिए जो पीर पराई जाणे रे'। बस तम्बूरा लेकर दो करुणरस भरी तान लेते ही विदा हो जावेंगे। उस समय तोपखाने का अध्यक्ष कहता है, महाराज! किन पशुओं के आगे राग सुनाने चले हो। ये लातों के भूत बातों से न मानेंगे। यहां तो हमारी तोपों का नाद ही कुछ काम करेगा, आप अपने तम्बूरे का रस रहने दीजिए। उस समय हम अनुभव करते हैं कि शिक्षा में शुष्क ज्ञान की कितनी अपेक्षा है। यह दोनों ही अंश शिक्षा के लिए आवश्यक हैं।

वेद में यह बातें यों कही गई हैं--

अग्नीषोमाभ्यां जुष्टं गृहणामि यजु १।१०

अर्थात् हे मनुष्य, तुझे अग्नि और सोम दोनों की सेवा में लगा हुआ ग्रहण करता हूँ।

'अग्नीषोम' की व्याख्या करते हुए शतपथ में याज्ञवल्क्य ऋषि कहते हैं--

द्वयं वा इदं न तृतीयमस्ति आर्द्रं चैव शुष्कं च यच्छुष्कं तदाग्नेयं यदार्द्रं तत् सौम्यं············अग्नीषोमयोः पुरोडाशः। श० का० १।६।३।२३

"अर्थात् यह संसार दो भागों में बंटा है, एक गीला, एक सूखा तीसरा कोई नहीं। जो सूखा है वह आग्नेय है जो गीला है वह सोम्य है। पुरोडाश अग्नि और

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

सोम का बना है।" सो उत्तम शिक्षा में शुष्क तथा आर्द्र, अग्नि तथा सोम (Intellect और Emotion) ज्ञान तथा भावना, विज्ञान तथा ललित-कला, आचार तथा विचार दोनों का उचित समावेश होना चाहिये। यही बात पौर्णमासयाग में पुरोडाश द्वारा कही गई है। ऊपर हम कह आए हैं कि "अग्नीषोमयोः पुरोडाशः" अर्थात् पुरोडाश अग्नि और सोम दोनों का मिलकर बना है। अब वह पुरोडाश क्या है, सो सुनिए :–

शिरो ह वा एतद्यज्ञस्य क्रियते यत् पुरोडाशः (का. १. २. ५–२.)

अर्थात् पुरोडाश यज्ञ का सिर होता है।

पुरुष को यज्ञ कहा ही है। सो सब का सार यों हुआ :—

पुरुष=यज्ञ
पुरोडाश=यज्ञ का सिर। इसलिए
पुरोडाश=पुरुष का सिर
पुरोडाश=अग्नीषोम। इसलिए
अग्नीषोम=पुरुष का सिर
अग्नीषोम=शुष्क आर्द्र। इसलिए
शुष्क+आर्द्र=पुरुष का सिर

शुष्क का प्रतिनिधि पिष्ट तथा आर्द्र का जल तथा घृत है।

सो परिणाम यह हुआ कि शिक्षा सहृदयता बिना ऐसी है जैसे बिना जल के तथा घृत के आटा। उसका न कोई पिण्ड बन सकता है न रोटी। वह खाने के काम का नहीं। आग दोगे तो भस्म हो जायेगा। दूसरी ओर ललित कलाओं की शिक्षा बिना वैज्ञानिक तथा सांसारिक शिक्षा ऐसी है जैसा बिना आटे का जल। उससे प्यास मिट सकती है भूख नहीं।

सो बिना इस शिक्षा के यह क्रिया बिलकुल निरर्थक है। और वह शिक्षा मंत्रों में भरी है। इस प्रकार यज्ञ भावनोत्पादक अग्निहोत्रादि कर्म जो उपचार से यज्ञ कहलाते हैं, वह मन्त्रों के बिना लगभग निरर्थक हैं। जो तत्त्व है सो तो मन्त्रों में भरा है। इसलिए जब तक मन्त्रों के अर्थ का ज्ञान न हो तब तक यज्ञ एक प्राणहीन देह है। इसलिये यज्ञ क्रियाओं में वेदमन्त्रों के अर्थ के प्रति जो अनुकूलता है उसका समझना आवश्यक है। किन्तु वह तब तक समझ में नहीं आ सकती जब तक मन्त्रों के अर्थों का ज्ञान न हो। इस प्रकार हमने देखा कि यज्ञों का रहस्य समझने के लिये तीन बातों का ज्ञान आवश्यक है :—

(१) मन्त्रों का अर्थ
(२) यज्ञ की प्रक्रिया
(३) मन्त्रार्थ और क्रिया का परस्पर सम्बन्ध।

इन तीन से मिलकर शतपथ ब्राह्मण बना है। अतः मन्त्रार्थ और यज्ञ प्रक्रिया के परस्पर सम्बन्ध को समझाने के लिये महर्षि याज्ञवल्क्य को मन्त्रों के अर्थ भी दिखाने पड़े। इसलिये यज्ञ की व्याख्या के निमित्त से मन्त्रों की व्याख्या अपने आप हो गई है।

ऋषि दयानन्द ने अपने यजुर्वेदभाष्य में उस व्याख्या का ही उपयोग किया है, यज्ञ प्रक्रिया का नहीं। इसीलिये अबोध अथवा दुराग्रही लोग कह उठते हैं कि ऋषिकृत भाष्य अपनी प्रतिज्ञा के अनुकूल नहीं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस प्रकार हमने संक्षेप से शतपथ ब्राह्मण का परिचय दिया है। क्रमशः भाष्य होने पर आप देखेंगे कि शिक्षाशास्त्र, समाजशास्त्र, युद्धकला, राजनीति आदि के गहरे तत्त्वों को शतपथकार ने सीधीसादी क्रियाओं द्वारा कैसा अभिव्यक्त किया है! यह उपलक्षण (Symbol) द्वारा भाव व्यक्त करने की चाल थोड़ी बहुत सारे भूमण्डल के साहित्य तथा जीवन में देखने में आती है। परन्तु पूर्वापर-सम्बद्ध व्याख्यान के व्याख्यान उपलक्षण द्वारा कदाचित् संसार-भर के साहित्य में कहीं व्यक्त नहीं किये गए। पर शतपथ में यही किया गया है। इस दृष्टि से यह ग्रंथ विश्व के साहित्य में अद्वितीय है। इतने दिनों तक यह रत्नों की खान रुधिर, मांस, हड्डी और कराहते पशुओं के आर्तनाद के भीषण ताण्डव के नीचे दबी पड़ी थी। ऋषि दयानन्द ने वेद की कुदाली हमारे हाथों में दी। उससे खोद कर मैंने यथाशक्ति जो कुछ निकाला है वह विद्वन्मण्डली के सामने है। मेरा जीवन तो इसके शब्दमय तथा कार्यमय दोनों प्रकार के भाष्य के अर्पण है। इसमें सफलता कितनी होगी वह फलदाता ही जाने। हाँ, कुदाली हाथ से न छोड़ना मेरा काम है। सो वह न छूटेगी, यह मेरा पूर्ण विश्वास है। भगवान् इन दुर्बल हाथों में बल दें। 卐

—समर्पणानन्द सरस्वती

*

राष्ट्र-वन्दना

यस्येमे हिमवन्तो महित्वा
यस्य समुद्रं रसया सहाहुः।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू
कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१०।१२१।४

जिस के फैले बाहु पाश में
आवेष्टित होने को आतुर दिशा-दिशान्तर
उद्घोषित हो रहा समुद्रों के सीने में
जिसके गौरव-गीतों का संघोष निरन्तर
हिम-मण्डित पर्वतमालाएं जिसे दे रहीं
अभिनन्दन का मौन समर्पण
उस महिमा शाली स्वदेश के कर्म यज्ञ में
मेरी जीवन-समिधा-अर्पण

—बशीर अहमद 'मयूख'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शतपथ ब्राह्मण का भाष्य

प्रथमं काण्डम्

(१)

गाम्भीर्य्यं यदि तच्छ्रुतेरभिनवः पन्था यदि स्वीकृतः,
पूर्वाचार्य्यविलक्षणो [1]यतिवरस्यानुग्रहः कोऽप्यसौ।
[2]शालग्रामगुरोः कृपा यदि पुनः पांडित्यलेशः क्वचित्,
किं किं नात्र परोपकारजनितं दोषास्तु ये ते मम॥

प्रथमाध्याये प्रथमं ब्राह्मणम्

पौर्णमास यज्ञ के आरम्भ में व्रतोपायन विधि है। उससे पहले नाट्यारम्भ में नाट्यार्थ सूचक नान्दी की तरह आचमन क्रिया की जाती है। उसकी विधि इस प्रकार है कि—

व्रतमुपैष्यन् अन्तरेणाहवनीयञ्च गार्हपत्यञ्च प्राङ् तिष्ठन्नप उपस्पृशति। तद्यदप उपस्पृशत्यमेध्यो वै पुरुषो यदनृतं वदति तेन पूतिरन्तरतो मेध्या वाऽआपो मेध्यो भूत्वा व्रतमुपायानीति। पवित्रं वाऽआपः पवित्रपूतो व्रतमुपायानीति। तस्माद्वाऽअप उपस्पृशति ।१।

"व्रत धारण करने की इच्छावाला यजमान आहवनीय और गार्हपत्य अग्नि के बीच पूर्व की ओर प्राङ्मुख खड़ा हुआ जल का उपस्पर्शन करता है। सो इसका अभिप्रायः यह है कि पुरुष अनृत बोलने (आदि दुष्ट कर्मो) से अपवित्र हो जाता है सो इसीलिये इस पवित्र कर्म में "इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि" (यजु० १।५) कहकर व्रत धारण करता है जैसा कि अभी आगे बताएंगे। सो वतधारण से मन में अनुकूलता उत्पन्न करने के लिये जल का उपस्पर्शन अर्थात् आचमन करता है, क्योंकि जल मेध्य है। मैं भी मेध्य होकर व्रत धारण करूं। जल पवित्र है मैं भी पवित्र पदार्थ से पवित्र होकर व्रत धारण करूं।"

अब प्रश्न उठ सकता है कि जल तो शरीर को पवित्र करता है, मन को नहीं। तो इसका उत्तर यह है कि मन को पवित्र करनेवाले सत्य का व्रत धारण करते समय शरीर को पवित्र करनेवाले जल को भी अन्दर लेना एक विशेष सामञ्जस्य रखता है। स्वतन्त्र रूपेण जल मन की शुद्धि नहीं कर सकता, किन्तु हां आन्तरिक शुद्धि की इच्छा वाले व्रत धारणकर्त्ता की सहायता मधुरकण्ठ से गाते हुए कलाधर की मधुर वाद्य के समान सहायता अवश्य कर सकता है। यों तो किसी अंश तक जल का मन पर साक्षात् प्रभाव भी होता है, इसी लिये क्रोधाविष्ट मनुष्य को

---

१. ऋषि दयानन्द जी २. पं० श्री० शालग्राम जी शास्त्री

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

शीत जलपान का उपदेश दिया जाता है। किन्तु विशेष सुन्दरता इसमें यह है कि मनुष्य चिन्तन करता है जिस प्रकार जल शरीर में शान्ति उत्पन्न करनेवाला तथा मल का-क्षालन करने वाला है, इसी प्रकार सत्यरूप व्रत मेरे मन को शान्त तथा निर्मल करेगा। जिस प्रकार गान-वाद्य एक स्वर में मिले होते हैं इसी प्रकार यहाँ भी बाह्य तथा आभ्यन्तर शुद्धि है। सो यह शुद्धि का स्वर दोनों ओर बज रहा है। इस आचमन क्रिया का यही स्वारस्य है।

सोऽग्निमेवाभीक्षमाणो व्रतमुपैति। 'अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यता (यजुः १।५) मि' त्यग्निर्वै देवानां व्रतपतिस्तस्मा एवैतत्प्राह व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यतामिति नात्र तिरोहितमिवास्ति ॥२॥

"वह अग्नि को ही देखता हुआ व्रत धारण करता है। उस समय मन्त्र पढ़ता है 'अग्ने व्रतपते व्रत चरष्यामि तच्छकेयंतन्मे राध्यताम्" सो इसका कारण यह है कि अग्नि अर्थात् परमात्मा सब देवों का व्रतपति है। जिस प्रकार यह भौतिक अग्नि प्रकाशमान् होने के कारण मार्ग-दर्शक है उसी प्रकार इस व्रतपालन में परम प्रकाशधाम परमाग्नि अर्थात् परमाग्रणी प्रभु मार्गदर्शक है। साथ ही जिस प्रकार यह अग्नि दाह-गुण युक्त है उसी प्रकार सत्य-मार्ग से भ्रष्ट होने पर वह प्रभु मुझे दग्ध भी कर सकता है। इस प्रकार अग्नि को देखते ही इन भावों का चिन्तन करता हुआ परमाग्नि परमात्मा को साक्षी करके वह कहता है—हे व्रतपते! मैं व्रत पर चलूंगा। उसे पूर्ण करने में मैं समर्थ होऊं। यह मेरा व्रत सिद्ध हो। इसमें अधिक और स्पष्ट करने की कोई बात नहीं।"

अथ संस्थिते विसृजते। "अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मेऽराधी" (यजु० २।२८) त्यशकद्धयेतद्यो यज्ञस्य संस्थामगन्नराधि ह्यस्मै यो यज्ञस्य संस्था-मगन्नेतेन न्वेव भूयिष्ठा-इव व्रतमुपयन्त्यनेन त्वेवोपेयात् ।३।

"अब समाप्ति पर व्रत विसर्जन के समय इसी को परिवर्तन करके इस प्रकार बोलता है "अग्ने व्रतपते व्रतमचारिषं तदशकं तन्मेऽराधि' अर्थात् हे व्रतपते अग्ने' ! आपकी कृपा से मैंने व्रत पालन किया। आपकी कृपा से मैं यह कर सका हूँ। आपकी कृपा से यह कार्य सिद्ध हुआ। जिसका यज्ञ समाप्त हुआ वह उसे पूर्ण कर सका है। उसी के लिये यज्ञ सिद्ध हुआ है जो यज्ञ की समाप्ति तक पहुँचा है। इसी लिये इस प्रकार कहता है। बहुधा लोग इसी ऊपर कहे 'अग्ने व्रतपते व्रतं चारिष्यामि' इस वाक्य से व्रत धारण करते हैं इसी वाक्य से व्रत धारण करे।"

द्वयं वा इदं न तृतीयमस्ति सत्यं चैवानृतञ्चं सत्यमेव देवा अनृतम्मनुष्याः "इदमहमनृतात् सत्यमुपैमोति" (यजु० १।५) तन्मनुष्येभ्यो देवानुपैति ।४।

"यह निश्चय से दो हैं, तीसरा नहीं है अर्थात् संसार में दो ही प्रकार की शक्ति है, सत्य तथा अनृत। सत्य ही देव हैं। अनृत मनुष्य हैं। जब मनुष्य कहता है कि मैं अनृत को छोड़कर सत्य की ओर आता हूँ तो वह मनुष्यों में से निकल कर देवों की ओर आता है।

"सत्यमेव देवाः" यहां कारण में कार्य की लक्षणा है जिसका उद्देश्य यह व्यञ्जन करना है कि देवो तथा मनुष्यों में और कुछ भेद नहीं। जात्या दोनों मनुष्य हैं। परन्तु सत्यभाषण, सत्याचरण, सत्य-व्यवहार, यह सत्य परायणता ही उनमें देवत्व की उत्पादिका है। किं बहुना जिस समय से मनुष्य यह निश्चय कर लेता है

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

कि अब मैं सत्य की ओर जाऊंगा उसी समय से वह देवों में प्रवेश प्राप्त कर लेता है।

स वै सत्यमेव वदेत् । एतद्ध वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यं तस्मात्ते यशो, यशो ह भवति य एवं विद्वांत्सत्यं वदति ।५।

"इसलिये मनुष्य सदा सत्य ही बोले । देव लोग इसी व्रत पर आचरण करते हैं । इसी लिये वे यश स्वरूप हैं । जो इस बात को जानता हुआ सत्य बोलता है वह भी यशस्वरूप अर्थात् परम कीर्तिमान् होता है ।'

अथ संस्थिते वितृजते 'इदमहं य एवास्मि सोऽस्मी' (यजु० २।२८) त्यमानुष इव वा एतद्भति व्रतमुपैति । न हि तदवकल्पते यद्ब्रूयादिदमहं सत्यादनृतमुपैमीति तदु खलु पुनर्मानुषो भवति तस्मादिदमहं य एवास्मि सोऽस्मीत्येवं व्रतं विसृजेत ।६।

"पूर्वोक्त प्रकार से 'इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि' कहकर व्रत धारण करने वाला व्रत विसर्जन के समय 'इदमहं य एवास्मि सोऽस्मि' अर्थात् इस समय में जो ही हूँ सो हूँ, इस प्रकार कहकर व्रत विसर्जन करे । क्योंकि व्रतोपायन द्वारा मनुष्य अमानुष-सा हो जाता है सो यह बात शोभा नहीं देती कि वह 'इदमहं सत्यादनृत-मुपैमि' कहे अर्थात् वह यह कहे कि अब मैं सत्य छोड़ कर अनृत की ओर आता हूँ । इस प्रकार करने से तो वह फिर मनुष्य कोटि में चला जायगा । इससे तो यज्ञ का उद्देश्य ही नष्ट हो जायगा । यज्ञ का उद्देश्य ही यह है कि प्रति पर्व में इस प्रकार व्रत धारण की आवर्त्तनिका (मुहारनी) से सत्य व्रत को मनुष्यों में दृढ़ करके उन्हें देव बनाना । यहाँ इसलिये 'य एवास्मि सोऽस्मीत्मेव' जो कुछ हूँ सो हूँ, यह कहकर व्रत विसर्जन करे ।

यहाँ एक बात ध्यान देने योग्य है। जो मनुष्य 'व्रतमुपैति' अर्थात् व्रत धारण करता है वह 'अमानुष इव भवति' अमानुष सा हो जाता है। इस 'सा' पर ध्यान दीजिये । व्रत धारण करने मात्र से कोई देव नहीं हो जाता है । किन्तु हाँ, इस प्रकार के दृढ़ सङ्कल्प से उसमें देवत्व का स्वल्प काल के लिये आवेश हो जाता है। किन्तु वह देव होता कब है ? इसका उत्तर है 'सत्यं वै देवाः व्रतं चरन्ति' जब बार-बार व्रतोपायन द्वारा यह उसका स्वभाव उसके आचरण का एक अंग बन जाता है उस समय वह देव हो जाता है ।

'अमानुष इव भवति यो व्रतमुपैति एतद्ध वै देवा व्रतं चरन्ति यत्सत्यम्'

अब आशङ्का हो सकती है कि इसका अर्थ यह क्यों न करें कि मनुष्यों से भिन्न देव योनि विशेष में उत्पन्न लोग सत्य पर आचरण करते हैं तो इसका उत्तर शतपथकार स्वयं दे रहे हैं 'सत्यमेव देवाः' अर्थात् यहाँ देवयोनि विशेष कोई अभिप्रेत नहीं किन्तु 'सत्यमेव देवाः' जो लोग सत्यस्वरूप हो जावें वही देव हैं। 'यदि सत्यादनृतमुपैमि' अर्थात् सत्य से अनृत की ओर आता हूँ ऐसा कहे तो 'पुनर्मानुषो भवति' फिर मानुष हो जाता है इस वाक्य में यह बात और भी स्पष्ट हो जाती है। यहाँ किसी जन्मान्तर वा योन्यन्तर का कथन नहीं। 'यद्ब्रूयाद्……तदु' है। जो ऐसा कहे तो फिर मानुष हो जाता है। देवत्व की प्राप्ति के लिये केवल व्रत धारण करना पर्याप्त नहीं । किन्तु जिसने पूर्णमास नाटक का अभिनय मात्र किया है उसे देवत्व से गिराने के लिये उलटा सङ्कल्प भी पर्याप्त है ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अथातोऽशनानशनस्येव । तदुहाषाढः सावयसोऽनशनमेव व्रतं मेने । मेनो ह्वै देवा मनुष्यस्याजानन्ति तऽएनमेतद्व्रतमुपयन्तं विदुः प्रातर्नो यक्ष्यत इति तेऽस्य विश्वे देवा गृहानागच्छन्ति तेऽस्य गृहेपूपवसन्ति स उपवसथः ।७।

अब यहाँ से खाने न खाने की (बात छेड़ते हैं), अर्थात् यह प्रश्न उठाते हैं कि व्रतोपायन के दिन कुछ खाना चाहिए कि नहीं । सो इस विषय में सवयस् के पुत्र आषाढ़ आचार्य का मत है कि अनशन अर्थात् कुछ न खाना ही व्रत है अथवा यदि बहुव्रीहि समास मान लें तो जिसमें खाना न हो वही व्रत है अर्थात् व्रत के दिन कुछ नहीं खाना चाहिए । यहाँ प्रसंग से उपवसथ अर्थात् उपवास शब्द की भी व्याख्या करते हैं । आजकल हिन्दी भाषा में उपवास शब्द का अर्थ कुछ न खाना यह समझा जाता है । परन्तु इस शब्द में यह अर्थ किस प्रकार आ गया इस बात पर इस प्रकरण में बड़ा सुन्दर प्रकाश पड़ता है । उपवसथ की व्याख्या में कहते हैं कि देव लोग मनुष्य के मन को भली प्रकार जान लेते हैं । हमारी सम्मति में आजानन्ति का अर्थ 'आते हैं' करने से और भी सुन्दरता आ जाती है । उपसर्ग लगने से 'ज्ञा धातु' गमनार्थक बहुत स्थान पर देखी गई है जैसे—

देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते ।

अस्तु 'आजनान्ति' का अर्थ आना हो अथवा जानना यहां सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि इस प्रकरण में 'देवाः' का अर्थ क्या है । हमारी सम्मति में यहां 'देवाः' का अर्थ 'दिव्य भावाः' ऐसा है । पहले हम अपना अर्थ उपस्थित करते हैं और पीछे उसके सम्बन्ध में युक्तियां देंगे । पहिले अर्थ लीजिए । व्रतोपायन के दिन यज्ञ करने के अभिलाषी यजमान के मन में दिव्य, पवित्र भाव अतिथि होकर आते हैं । क्योंकि वह व्रतोपायन के समय देख लेते हैं कि कल प्रातःकाल यह हमारे निमित्त हवन करेगा । इस लिए उस दिन सब पवित्र भाव, सब प्रकार की दिव्य उमंगें उसके घर डेरा करती हैं । सो इन अर्थों में देव लोग उसके घर में आकर उसके समीप बसते हैं । इसलिए वह उपवसथ कहलाता है । सो ज्ञात हो गया कि उपवास शब्द का अर्थ वस्तुतः 'भूखा रहना' नहीं । इस शब्द का अर्थ वस्तुतः वही है जो इसका धात्वर्थ है अर्थात् समीप बसना । इसका अर्थ भूखा रहना किस प्रकार हो गया यह अगली कण्डिका में स्पष्ट हो जायेगा । अब पहिले हम इस पर विचार करना चाहते हैं कि देव शब्द का अर्थ हमने दिव्य भाव किस प्रकार लिया । इसके लिए हम अंग्रेजी के एक शब्द का दृष्टान्त उपस्थित करना चाहते हैं । अंग्रेजी में एक शब्द सैल (cell) है । इसका अर्थ आप क्या करेंगे ? आपको बाधित होकर कहना पड़ेगा कि हमें इसका अर्थ प्रकरण के अनुकूल करना होगा । बिजली के प्रकरण में इसका अर्थ बैटरी का कोष होगा आयुर्वेद के प्रकरण में इसका अर्थ शरीर का घटक छोटा-सा पदार्थ ऐसा किया जाएगा । चलती भाषा में आप लोग इसका अर्थ जेलखाने की कोठरी इस प्रकार करेंगे । और वनस्पति शास्त्र में इसका अर्थ दूसरा ही होगा । इसी प्रकार देव शब्द का अर्थ असाधारण शक्तिमान् अथवा इससे भी सीधा 'देने वाला' इस प्रकार करते हैं । किन्तु प्रकरणवश वह सूर्य्य, चन्द्रादि प्रकाश देने वाले पदार्थों का भी नाम होगा । दक्षिणा 'देने वाले' यजमान का भी नाम होगा । विद्या 'देने वाले' ब्राह्मण का भी नाम होगा । राज्य सुख 'देने वाले' राजा का भी नाम होगा । तथा अध्यात्म सृष्टि में नया उत्साह 'देने वाले' पवित्र भावों का भी नाम होगा । अब देखना चाहिए कि यहाँ क्या प्रकरण है ? सो आचमन प्रकरण में कह आए हैं कि आचमन क्यों करना, "तेन पूतिरन्तरतः" जिससे कि अन्दर से शुद्ध हो जाय ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

पता लग गया कि इस क्रिया-कलाप का वास्तविक कार्यक्षेत्र 'अन्तरतः' अर्थात् अन्दर की ओर है। बस, जिस प्रकार आचमन आभ्यन्तर शुद्धि का प्रतिनिधि है इसी प्रकार भोजन करने न करने का सम्बन्ध भी आभ्यन्तर देवों से हैं। इसीलिए यहां भी आरम्भ में ही कह दिया गया है "मनो ह वै देवा मनुष्यस्याजानन्ति" अर्थात् देव लोग यजमान के मन को भली प्रकार जान लेते हैं। अथवा यदि 'आगच्छन्ति' ऐसा अर्थ करें तो मन में आकर डेरा कर लेते है यह अर्थ होगा। किसी प्रकार भी समझें इस बात का प्रत्याख्यान नहीं किया जा सकता कि यहां देवों का सम्बन्ध मन के साथ है।

अब प्रश्न यह रहता है कि यह सब कल्पना मात्र है अथवा इन अर्थों में देव शब्द का प्रयोग कहीं देखा भी जाता है। इस बात के निर्णय के लिए यथाक्रम प्रमाण उपस्थित करते हैं।

(१) सूर्य्यचन्द्रादि को देवता कहा गया है—
अग्निर्देवता वातो देवता सूर्य्यो देवता चन्द्रमा देवता।

यजु० १४-२०

(२) यजमान को देव कहा गया है—
यो दीक्षते सः देवतानामेको भवति।

श० कां ०३ ब्रा०१ अ०१ कं०८

जो यज्ञ में दीक्षित होता है वह देवों में से एक होता है।

(३) मुग्धा देवा उत शुना यजन्त।

अथ० ७।५।५

इस मन्त्र के भाष्य में सायणाचार्य देवाः का अर्थ यजमानाः ऐसा करते हैं।

(४) 'राजा' के अर्थ में 'देव' शब्द संस्कृत साहित्य में इतना प्रसिद्ध है कि इसके लिए प्रमाण देने की आवश्यकता नहीं।

(५) ब्राह्मण के अर्थ में देव शब्द –
ये ब्राह्मणाः शुश्रुवांसोऽनूचानास्ते मनुष्यदेवाः।

श०कां०२ ब्रा०५ अ०२ कं०६

जिन्होंने पहले गुरु से विद्या पढ़ी है और फिर अनुवचन में लगे हुए हैं वे मनुष्यों में देव हैं।

(६) अश्वमेध प्रकरण में राजा को इन्द्र कह कर कहा है –

तस्य देवा विशस्ता इमा आसत इति श्रोत्रिया अप्रतिग्राहका उपसमेता भवन्ति तानुपदिशति। श०कां०१३ अ०४ ब्रा०१ कं०१४

उसकी प्रजा देव हैं, वे ये बैठे हैं, ऐसा कहकर जो अश्वमेध में प्रतिग्रह न लेने वाले श्रोत्रिय अथात् विद्वान् बैठे होते हैं उन्हें सामवेद सुनाता है (होता)।

(७) मानसिक पवित्र भाव देव –

आकूत्यै प्रयुजेऽग्नये स्वाहा मेधायै मनसेऽग्नये स्वाहा दीक्षायै तपसेऽग्नये स्वाहा सरस्वत्यै पूष्णेऽग्नये स्वाहा। यजु०४।७

शतपथ कां०२ अ०१ ब्रा०४ कं०६-१४

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यहां अग्निदेव के आकूति, मेधा, दीक्षा, सरस्वती यह भेद कहे गए हैं जिनके अर्थ महीधर तक ने सङ्कल्पादि किए हैं।

(८) शतपथ प्रथम काण्ड अध्याय ४ ब्राह्मण ५ कण्डिका ६ में कहा गया है –

मनो वै देववाहनम्।

अर्थात् मन देवों का वाहन है। क्योंकि 'मनोहीदं मनस्विनं भूयिष्ठं वनीवाह्यते' अर्थात् क्योंकि वह मनस्वी को बड़ी भारी उन्नति की दशा तक खींच कर ले जाता है।

(९) अश्वमेध प्रकरण में (कां०१३ अ०४ ब्रा०१ कं०३-१४) एक ही राजा को मनुवैवस्वत, यम वैवस्वत, वरुण आदित्य, सौमावैष्णव, काद्रवेय, कुबेर वैश्रवण, असित धान्व, मत्स्यसांमद, तार्क्ष्यवैपश्यत, धर्म्मइन्द्र, इन दस नामों से याद किया गया है।

अब राजा के यह दस नाम किन्हीं गुणों के भेद के ही कारण हो सकते हैं; अन्य कोई कारण नहीं हो सकता। वह गुण मन के अतिरिक्त और कहां निवास कर सकते हैं। अपनी भिन्न-भिन्न मानसिक अवस्थाओं के कारण ही राजा के दस नाम हैं। मानसिक अवस्थाओं का वह भेद कैसे पैदा होता है? राजा जब राज्य के भिन्न-भिन्न विभागों का अधिष्ठाता होता है तो उसको प्रत्येक विभाग के अनुकूल कोई विशेष भाव कारण करना पड़ता है। वही भाव उस विभाग का देव है। उसके मन में आविष्ट होने के धारण उस समय राजा का भी वही नाम हो जाता है। अब किस अवस्था के धारण राजा का क्या नाम होता है इस पर प्रत्येक अवस्था में जो राजा की प्रजा बताई गई हैं इनसे बड़ा अच्छा प्रकाश पड़ता है। इसलिए हम नीचे उनकी तालिका देते हैं—

राजा	प्रजा	भावार्थ
मनुवैवस्वत	अश्रोत्रियागृहमेधिनः	साधारणगृहस्थ
यमवैवस्वत	स्थविराः	बूढ़े लोग
वरुण आदित्य	युवानःशोभनाः	बांके नौजवान
सोमावैष्णव	युवतयःशोभना	सुन्दर युवतियां
काद्रवेय	सर्पाः सर्पवदश्च	सर्प तथा सर्प विद्या जानने वाले
कुबेरवैश्रवण	पापकृतः	दण्डित दुष्ट लोग
असितधान्व	कुसीदिनः	व्याज खाने वाले महाजन
मत्स्यसांमद	मत्स्यहन्	(ग्राह आदि दुष्ट) मच्छों को मारने वाले पक्षी
वैपश्यतराजा	वयांसि वायोविधिकाश्च	तथा पक्षि-विद्या जानने वाले
धर्म्मइन्द्र	श्रोत्रिया अप्रतिग्राहकाः	निर्लोभ विद्वान्

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

इस प्रकरण में साहचर्य्य के बल से सर्प तथा पक्षी का अर्थ तद्गुण विशिष्ट मनुष्य लेना चाहिये।

अस्तु हमारा इस प्रकरण के उपस्थित करने का यह तात्पर्य नहीं कि हम मनुर्वैवस्वत आदि शब्दों की विस्तृत व्याख्या करें। वह तो हम त्रयोदश काण्ड के भाष्य में करेंगे। किन्तु यहां तो हमें केवल यह दिखाना है कि स्थिति (Capacity) के भेद से एक ही मनुष्य अनेक देवों का नाम पाता है। इससे ज्ञात हुआ कि उस स्थिति के मुख्य भाव का नाम देव है।

वस्तुतस्तु देव नाम है ही भाव विशेषों का। वह भाव विशेष परमेश्वर में एकत्र समुदित हैं। इसलिये परमेश्वर के वह सब नाम हैं। अन्यत्र भी जहां मनुष्यों में, पदार्थों में, मानसिक भावों में, वह गुण पाये जायेंगे, उसी नाम से वह निर्दिष्ट होंगे, यही इसका मर्म्म है।

अस्तु, हमने यह दिखला दिया कि देव शब्द के सूर्य्यादि पदार्थ, राजा, ब्राह्मण, यजमान, दिव्य भाव आदि अनेक अर्थ हैं। अब प्रश्न है कि यहां उपवसथ के अथवा सच पूछिये तो पूर्णमास के प्रकरण में देव का क्या अर्थ है, तो शतपथकार स्वयं ही इसका उत्तर देते हैं--

"मनो ह वै देवा मनुष्यस्याजानन्ति"।

अर्थात् देव लोग मनुष्य के मन को जान लेते हैं। अथवा उसमें आ बसते हैं। इससे स्पष्ट है कि यहां देव शब्द से अभिप्राय पवित्र भावों से है।

अब कण्डिका का अर्थ इस प्रकार हुआ—

"देव लोग अर्थात् दिव्य भाव मनुष्य के मन को जान लेते हैं अथवा उस में आ बसते हैं। क्योंकि वह व्रतोपायन के समय ही जान लेते हैं कि प्रातःकाल हमारे लिये यज्ञ करेगा। सो उस समय सब प्रकार की पवित्र उमंगे, तथा पवित्र मानसिक शक्तियां, उस के घर में आती हैं। सो क्योंकि उस दिन देव लोग, पवित्र भाव रूप देव उसके घर में आकर उसके उप अर्थात् समीप बसते हैं इसी लिये वह दिन उपवसथ कहलाता है।"

अब भोजन न खाने का नाम उपवास कैसे हुआ इसकी व्याख्या अगली कण्डिका में सुनिये---

तन्वेवानवक्लृप्तम्। यो मनुष्येष्वनश्नत्सु पूर्वोऽश्नीयादथ किमु यो देवेष्वनश्नत्सु पूर्वोऽश्नीयात्तस्मादु नैवाश्नीयात्।८।

"सो यही बात बड़ी अनुचित है कि कोई मनुष्य घर में मनुष्य अतिथियों के आने पर उन्हें भोजन कराये बिना उन से पहिले भोजन करले फिर उसका तो कहना ही क्या जब कोई देवों को घर बुला कर उन्हें भोजन कराये बिना उनसे पहिले भोजन करले। इसलिये उस दिन कुछ भोजन न करना चाहिये।"

इस प्रकार आषाढ़ आचार्य्य का मत दिखा कर याज्ञवल्क्य का सिद्धान्त पक्ष उपस्थित करते हैं—

यदु होवाच याज्ञवल्क्यः यदि नाश्नाति पितृदेवत्यो भवति यद्युअश्नाति देवानत्यश्नातीति स यदेवाशितमनशितं तदशनीयादिति यस्य वै हविर्न गृहणन्ति तदशितमनशितं स यदश्नाति तेनापितृदेवत्यो भवति यद्यु तदश्नाति यस्य हविर्न गृहणन्ति तेनो देवान्नात्यश्नाति।९।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"सो इसी विषय में याज्ञवल्क्य कहते हैं कि यदि उस दिन सर्वथा भोजन न करे तो पितृदेवत्य अर्थात् क्षीण हो जाता है और यदि भोजन करता है तो देवों का अपमान करके खाता है (इस उलझन से कैसे निकलना चाहिये ?) सो इस उलझन से बचने के लिये ऐसा करना चाहिये कि जिस द्रव्य के खाने पर भी वह न खाए के बराबर हो वह खा लेना चाहिये। प्रश्न उठ सकता है कि इस प्रकार का द्रव्य कौन-सा हो सकता है तो उत्तर देते हैं कि जिसकी हवि यज्ञ में न दी जावे अर्थात् जो यज्ञ में आहुति देने के काम न आता हो, वह पदार्थ खाने पर भी न खाए के समान है, वह खा लेना चाहिये। सो क्योंकि कुछ खा लेता है इसलिये व्रत-विघातनी क्षीणता नहीं आने पाती वह अपितृदेवत्य अर्थात् अक्षीण हो जाता है। और क्योंकि ऐसा पदार्थ खाता है जो हविरूप से उपयोग में नहीं आता इसलिये देवों का अपमान करके भी नहीं खाता।"

तात्पर्य यह है कि यदि व्रतोपायन के समय मनुष्य बिलकुल भूखा रहे तो यज्ञ में उसका ध्यान क्या लगेगा और यदि उत्तम हविष्यान्न अर्थात् बढ़िया माल खा खाकर पेट भर ले तो भी चित्तवृत्ति रसास्वाद-कषायिता तथा भोजनोत्थ मांसलता के कारण तन्द्रायुक्त सी हो जाती है। इसलिये कोई साधारण हलका भोजन आधार-मात्र खा ले, जिससे बोझ भी न हो और सर्वथा न खाने के कारण व्याकुलता भी न हो। इस प्रकार हमने देख लिया कि उपवास का अर्थ थोड़ा खाना, बहुत खाना, सर्वथा न खाना, आदि कुछ भी नहीं। उपवास शब्द का अर्थ तो समीपवास अर्थात् देवों के समीप बसना है। दिव्य भावों को मन में स्थिर करने के लिये विशेषकर कोई प्रतिज्ञा विशेष धारण करने अथवा पुनरावृत्ति करने के लिये मनकी एकाग्रता विशेष करने के निमित आचार्य लोग समय-समय पर थोड़ा तथा हलका भोजन अथवा सर्वथा भोजन न करने का आदेश करते आए हैं। इसलिये इस शब्द का अर्थ बिलकुल कुछ न खाना ऐसा समझा जाने लगा है। वस्तुतः उपवास शब्द स्वयं खाने न खाने के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहता।

अब यहां एक शङ्का और उठ सकती है। हमने यहां "पितृदेवत्य" शब्द का अर्थ 'क्षीण' ऐसा कर दिया है। यह बहुत लोगों को आश्चर्य में डालेगा। इसलिये हम इसके प्रमाण उपस्थित करते हैं—

(१) वसन्तो ग्रीष्मो वर्षाः। ते देवा ऋतवः शरद्धेमन्तः शिशिरस्ते पितरो य एवापूर्यतेऽर्धमासः स देवा योऽपक्षीयते स पितरोऽहरेव देवा रात्रिः पितरः पुनरह्नः पूर्वाण्हो देवा अपराह्णः पितरः।

श० कां० २ अ० १ ब्रा० ३ कं० १

वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा यह देवऋतु हैं। शरद, हेमन्त, शिशिर यह पितर हैं। जो अर्ध मास बढ़ता है अर्थात् जिस अर्धमास में चन्द्रमा बढ़ता है वह देव है जो अर्धमास क्षीण होता है अर्थात् जिस अर्धमास में चन्द्रमा क्षीण होता है वह पितर है। तात्पर्य यह कि चढ़ता पाख देव तथा उतरता पाख पितर हैं। दिन देव है, रात्रि पितर है। फिर दिन का भी पूर्वाह्ण देव है अपराह्ण पितर है।'

यहां स्पष्ट है कि 'योऽपक्षीयते' जो क्षीण होता है वह पितर है।

(२) और लीजिये—

यमो वैवस्वतो राजेत्याह तस्य पितरो विशस्त इम आसत इति स्थविरा उपसमेता भवन्ति तानुपदिशति।

१३ कां० ब्रा० १ अ० ४ कं ६।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अश्वमेध के पारिप्लवाख्यान में दूसरे दिन राजा को यम वैवस्वत कह कर उसकी स्तुति की जाती है। वहां कहा जाता है—'यह राजा यम वैवस्वत है उसकी प्रजा पितर हैं, वे यहां बैठे हैं । सो जो बूढ़े लोग वहां होते हैं उन्हें वही होता यजुर्वेद सुनाता है।''

स वाऽग्रारण्यमेवाश्नीयात् । या वारण्या ग्रोषधयो यद्वा वृक्ष्यं तदु ह स्माहापि कुंबवार्ष्णो माषान्मे पचत न वाऽएतेषां हविर्गृहणन्तीति तदु तथा न कुर्याद्व्रीहियवयोर्वाऽएतदुपजम् यच्छमीधान्यम् तद्व्रीहियवावेवैतन भूयांसौ करोति तस्मादारण्यमेवाश्नीयात् । १० ।

वह यजमान जंगली पदार्थ ही खावे । जंगली ग्रोषधि ग्रथवा ग्रन्य जंगली वृक्षों के फल ग्रादि जो मिल सकें ग्रर्थात् फल मूलादि हलका भोजन करे। यह स्पष्ट रूप से कहने की ग्रावश्यकता इसलिए पड़ी कि कोई मनचला हविष्यान्न के ग्रतिरिक्त पदार्थों से ही भोग सामग्री पैदा न कर ले । उदाहरण के लिए बद्धवार्ष्ण यजमान बना तो कहने लगा हविष्यान्न का निषेध है, सो उड़द का भी हवि तो कहीं नहीं दिया जाता, चलो मेरे लिये उड़द ही पका दो। परन्तु ऐसा नहीं करना चाहिए। धान ग्रौर जौ की हवि दी जाती है ग्रौर फलियों से पैदा होने वाली दाल ग्रादि भी उनके समकक्ष ही हैं । वहीं उपजती हैं ग्रौर उन्हीं के व्यंजन बनते हैं, उन्हीं में दाल मिला कर उनका परिमाण बढ़ाने के काम में लाई जाती हैं । इसलिए सादा जंगली पदार्थ ही खावे ।

स ग्राहवनीयागारे वैतां रात्रिंशयीत । गार्हपत्यागारे वा देवान्वाऽएष उपावर्त्तते यो व्रतमुपैति स यानेवोपावर्त्तते तेषामेवेतन्मध्ये शेतेऽधः शयीताधस्तादिव हि श्रेयस उपचारः । ५१ ।

"वह यजमान इस रात ग्राहवनीयागार ग्रथवा गार्हपत्यागार में सोए। क्योंकि जो व्रत धारण करता है वह देवों की श्रेणी में सम्मिलित हो जाता है। सो जिन की श्रेणी में सम्मिलित होता है उन्हीं के बीच सोता है। उस दिन भूमि पर शयन करे क्योंकि ग्रपने से बड़ों का ग्रादर करने की यही रीति है कि उन से नीचे बैठे, नीचे सोए इत्यादि।"

स वै प्रातरप एव प्रथमेन कर्मणाभिपद्यतेऽपः प्रणयति यज्ञो वाऽग्रापो यज्ञमेवैतत् प्रथमेन कम्मर्णाभिपद्यते ताः प्रणयति यज्ञमेवैतद्वितनोति । १२ ।

"वह प्रातः सब से प्रथम कर्म द्वारा जल ही को पहुंचता है ग्रर्थात् प्रातः जो कर्म करता है उसमें उसे सबसे पहिला काम जल से पड़ता है। वह काम क्या है? वह जल को प्रणीता पात्र में डालता है। इस घड़े से प्रणीता पात्र में जल डालने को प्रणयन कहते हैं ग्रौर यह प्रणीत ग्रर्थात् विधि पूर्वक 'नीत' ग्रापः जिस पात्र में डाली जाती हैं वह पात्र प्रणीताग्रों का पात्र होने के कारण प्रणीता पात्र कहलाता है। सो ग्रापः (जल) क्यों डाला जाता है क्योंकि वह यज्ञांग होने के कारण साक्षात् यज्ञ रूप है। सबसे पहिले वह जल प्रणयन रूप प्रथम कर्म द्वारा यज्ञ को ही पहुंचता है। सो ग्रापः का प्रणयन भी यज्ञ का ही विस्तार है।"

यहां ग्रापः का क्या ग्रर्थ है, वह किस की प्रतिनिधि हैं इस पर हम कुछ नहीं कहते क्योंकि १८वीं कण्डिका में स्वयं शतपथकार इस की व्याख्या कर देंगे। वहीं हम भी सारे प्रकरण पर ग्रपना ग्रभिप्राय प्रकाश कर देंगे।

स प्रणयति । 'कस्त्वा युनक्ति स त्वा युनक्ति कस्मै त्वा युनक्ति तस्मै त्वा युनक्ति' (यजुः १।६) त्यनिरुक्ताभिर्व्याहृतिभिः । १३ ।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

अब यह व्रतोपायनरूप कर्म तथा यह सम्पूर्ण यज्ञ परमार्थतः किस उद्देश्य से किया जा रहा है यह बताते हैं। क्योंकि गार्हपत्याग्नि कुल संकल्प का तथा आहवनीय यजमान के व्यक्तिगत संकल्प का प्रतिनिधि है ऐसा आगे चल कर स्पष्ट करेंगे। परन्तु वे सब संकल्प अन्ततः किस परम संकल्प के अधीन हैं, किस संकल्प के अनुपघातेन चलते हैं, यह यहां बताने लगे हैं। प्रश्न हो सकता है कि तब तो पहिले महा-संकल्प का वर्णन होना चाहिये था, पीछे छोटे संकल्प का। किन्तु वस्तुतः ऐसा नहीं। जिस प्रकार वरयात्रा में दूल्हा अनेक वृद्ध, गुरु आदि से छोटा होता हुआ भी प्रयोजन-वशात् सबसे अधिक पूजा पाता है तथा मध्यासन पर बैठता है, इसी प्रकार यह यज्ञ व्यक्तिगत संकल्प के अभ्यास निमित्तक होने के कारण अग्नि को देखते हुए व्रत धारण करने के पश्चात् महासंकल्प का वर्णन करते हैं। प्रश्नोत्तर रूप में यह मन्त्र है। "इस यज्ञ में तुझे कौन नियुक्त करता है ? वह किस लिए ? उसके लिए" जहां इस प्रकार परामर्शनीय-विहीन सर्वनाम का प्रयोग होता है जहां इस प्रकार बिना विशेष्य के सीधे 'उस' शब्द का प्रयोग हिन्दी भाषा में भी होता है वहां तात्पर्य परमेश्वर से ही होता है। यही बात यहां कही गई है कि यहां 'अनिरुक्त' अर्थात् देव विशेष नामोल्लेखविहीन 'कौन' किस के लिए' 'वह उसके लिए' इस प्रकार के अस्फुट व्याहृति अर्थात् वचनों से यह क्रिया की जाती है, सो वह अनिरुक्त शब्दों से इशारों का पात्र प्रजापति है। यज्ञ यजमान के लिये प्रजापति है और परम प्रजापति प्रभु परस्परोपकारक अनेक शक्तियों का संगतिकरण होने का कारण यज्ञरूप है। इसलिये प्रजापति के साथ ही इस छोटे प्रजापति अर्थात् यज्ञ को जोड़ता है। तात्पर्य यह है कि ब्रह्मार्पण यह यज्ञ है। उसी को साक्षी रख के उस के प्रसाद निमित्त ही यह यज्ञ किया जाता है। यद्यपि अधिक विस्तार से आगे लिखेंगे किन्तु इतना लिख देना आवश्यक है कि जल यज्ञ में स्त्रीजाति का प्रतिनिधि हैं। इसलिये इस क्रिया में यह दिखाया गया है कि जब तक 'प्रणीता' अर्थात् सुशिक्षिता स्त्रियें भगिनी, माता, पत्नी आदि रूप में सम्मिलित हो कर यज्ञ संकल्प की साक्षी न बनें तब तक पुरुष परमेश्वर से विमुख रहता है।

यद्वेवापः प्रणयति । अभ्दिर्वाऽइदं सर्वमाप्तम् तत्प्रथमेनैवैतत्कर्मणा सर्वमाप्नोति ।१४।

"यह जो जल प्रणयन करता है इसका कारण है कि 'आपः' का अर्थ ही 'आपः' अर्थात् प्राप्त कराने वाली है, सब कुछ इनके द्वारा ही प्राप्त होता है। सो पहिला ही कर्म ऐसा करता है जिस से सब कुछ प्राप्त हो जाता है।"

अब सब कुछ का क्या तात्पर्य है यह अगली कण्डिका में खोलते हैं—

यद्वेवास्यात्र होता वाध्वर्युर्वा ब्रह्मा वाग्नीध्रो वा स्वयं वा यजमानो नाम्यापयति तदेवास्यैतेन सर्व्वमाप्तं भवति। १५।

"अत्र अर्थात् इस यज्ञ में जो कुछ भी होता, अध्वर्यु, अग्नीध्र नहीं प्राप्त करा सकते अथवा स्वयं यजमान भी अपने आपको प्राप्त नहीं करा सकता वह सब उसे इस कर्म से प्राप्त हो जाता है" अर्थात् प्रणीता (सुशिक्षिता) स्त्रियें बहुत से ऐसे काम भी कर सकती हैं जो होता अध्वर्यु अग्नीध्र और स्वयं यजमान भी नहीं कर सकता।" भारतीय सभ्यता के विरोधी इन पंक्तियों को जरा आंख खोल कर पढ़े।

अब प्रश्न उठता है कि स्त्री-जाति जैसी शक्तिशालिनी जाति के लिए जिसे लोग शक्ति के नाम से ही पुकारते रहे हैं, जल प्रतिनिधि क्यों चुना गया तो इस का उत्तर देते हैं—

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

यद्वेवापः प्रणयति । देवन्न वै यज्ञेन यज्ञमानांस्तानसुररक्षसानि ररक्षुर्न यक्ष्यद इति तद्यदरक्षंस्तस्माद्रक्षांस्येसि ।१६। ततो देवा एतं वज्रं ददृशुः यदपो वज्रो वाऽआपो वज्रो हि वाऽआपस्तस्माद्येनैता यन्ति निम्नं कुर्व्वन्ति यत्रोपतिष्ठन्ते निर्दहन्ति तत एतं वज्रमुदयच्छंस्तस्याभयेऽनाष्ट्रे निवाते यज्ञमतन्वत तथो एवैष एतं वज्रमुद्यच्छति तस्याभयेऽनाष्ट्रे निवाते यज्ञं तनुते तस्मादपः प्रणयति ।१७।

"यह जो जल प्रणयन विधि करता है सो इसका अभिप्राय यह है कि जब-जब देवों ने यज्ञ किया तब-तब उन्हें असुरों ने आकर रोक दिया। कहा बस अब तुम और यज्ञ न कर पाओगे। सो क्योंकि उन्होंने रोक दिया इसलिए वह 'रक्षस्' अर्थात् रोकू कहलाते हैं।१६। जब-जब उन्होंने विघ्न किया तब-तब देवों को यही वज्र सूझा कि 'आपः'— स्त्रियें वज्र हैं। जल भी वज्र है। इसीलिए जहाँ से जल जाता है उस प्रदेश को नीचा करता जाता है। जहाँ रक्खा जाता है उस लोहपात्रादि को जला देता है। इसी लिए देवों ने इस वज्र को उठाया अर्थात् स्त्री-जाति की शरण गए। इस वज्र की सहायता से देवों ने 'तस्य' अर्थात् अपने यजमान का निर्भय निवास स्थान में यज्ञ विस्तारा। इसी प्रकार इस यज्ञ में भी यह यजमान उसी वज्र को उठाता है। इसका फल यह होता है कि इसका यज्ञ भी अभय अर्थात् भयहीन, अनाष्ट्र नाश रहित अर्थात् विध्वंसकारियों से रहित निवात स्थान में विस्तारा जाता है। इसी लिए जल प्रणयन विधि की जाती है।"

स्त्री-जाति के लिए जल से बढ़ कर अच्छा अभिनेता और कौन चुना जाय? जिस प्रकार वह आपाततः अबला हैं किन्तु उनमें अद्भुत शक्ति निगूढ़ है, इसी प्रकार जल भी आपाततः कितना सुकुमार है। किन्तु "येनैता यन्ति निम्नं कुर्वन्ति यत्रोपतिष्ठन्ते निर्दहन्ति," जिधर गुजरें बड़ों-बड़ों की अकड़ तोड़ कर नीचा कर दें, जहाँ ठहरें उस लोहे तक को दग्ध कर दें। इसमें भी कैसी शक्ति छिपी है। सब कुछ है पर अनुवाद कर्त्ता बेचारा क्या करे। संस्कृत में स्त्रियें तथा जल पर्य्यायवाची "आपः" हैं। दोनों स्त्रीलिंग हैं। वह भाषा में ऐसा शब्द कहां से लाये और कोई शब्द ढूंढ भी निकाले तो उसमें 'आपः' के धात्वर्थ का "अभ्यापयन्ति" में जो चमत्कार दिखाया गया है वह कहां से लाए ?

ता उत्सिच्योत्तरेण गार्हपत्यं सादयति। योषा वाऽआपो वृषाग्निर्गृहा वै गार्हपत्यस्तद्गृहेष्वेवैतन्मिथुनं प्रजननं क्रियते वज्रं वाऽएष उद्यच्छति योऽपः प्रणयति यो वाऽअप्रतिष्ठितो वज्रमुद्यच्छति नैनच्छंशन्कोत्युद्यन्तु थ्यं स थ्यं हैन थ्यं शृणाति ।१८।

"ताः उनको अर्थात् उस जल को उड़ेल कर गार्हपत्य की उत्तर दिशा में रख देता है। यह काम इसलिए करता है क्योंकि जल स्त्री है, तथा अग्नि पुरुष है गार्हपत्य घर है। जोड़ा मिल कर प्रजनन अर्थात् उत्पत्ति घर में ही करता है (घर के बिना नहीं)। जो आदमी जल प्रणयन करता है वह एक वज्र उठाता है। बिना टेक बनाए जो वज्र उठाता है वह उठा नहीं सकता। क्योंकि वज्र उलटकर उसे मार देता है।"

जब कोई आदमी किसी भारी पदार्थ को दूर फेंकना चाहता है तो उसे अपने आपको टिकाने का भी यत्न कर लेना चाहिए नहीं तो फेंकने का धक्का उसी पर उलट पड़ता है। इसीलिए तोप आदि चलाने के लिए विशेष प्रकार का स्थान बनाना पड़ता है। शतपथकार कहते हैं कि विवाह करना ऐसा है जैसा वज्र फेंकने का यत्न

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

करना। जो आदमी बिना सुखप्रद घर बनाए पत्नी को घर में ले आता है, उसके निवास का उचित प्रबन्ध नहीं करता, तो यह पत्नीरूप वज्र उसका उसी प्रकार नाश कर देता है जैसे जल कच्चे पात्र को अथवा वज्र बिना टेक के फेंकने वाले को। परिणय से पहले प्रणय और प्रतिष्ठा आवश्यक है। किन्तु प्रणय का अर्थ प्रेम नहीं सुशिक्षा भी है यह व्यञ्जना यहां है। स्त्री-जाति मात्र प्रणीता अर्थात् सुशिक्षिता होनी चाहिए, फिर परिणीता प्रणीता अर्थात् प्रणयवती भी होनी चाहिए। और उसका अधिकार है कि वह उत्तम घर में रहे। जो समाज इसका प्रबन्ध नहीं करता उसे यह सुकुमार वज्र "आप:" 'संभृणाति' अर्थात् नष्ट कर देता है। जो पुरुष इस नियम का भंग करता है उसको भी यह नष्ट कर देता है।

स यद्गार्हपत्ये सादयति। गृहा वै गार्हपत्यो गृहा वै प्रतिष्ठा तद्गृहेष्वेवैतत्-प्रतिष्ठायां प्रतितिष्ठति तथो हैनमेष वज्रो न हिनस्ति तस्माद्गार्हपत्ये सादयति।१६।

"वह जो जल को गार्हपत्य में अर्थात् गार्हपत्य के समीप उत्तर में रखता है इसका तात्पर्य्य यह है कि गार्हपत्य घर का प्रतिनिधि है, सो वस्तुतः 'आप:' को घर में प्रतिष्ठा अर्थात् टिकने के स्थान में प्रतिष्ठित करता है। तब उसको यह वज्र नष्ट नहीं करता। इसीलिए गार्हपत्य में रखता है।"

ता उत्तरेणाहवनीयं प्रणयति। योषा वाऽआपो वृषाग्निर्मिथुनमेवैतत्प्रजननं क्रियतऽएवमिव हि मिथुनं क्लृप्तमुत्तरतो हि स्त्री पुमांसमुपशेते।२०।

"आहवनीय के उत्तर की ओर प्रणयन करता है। इसका कारण यह है कि जल स्त्री है और अग्नि पुरुष है। दोनों मिल कर ही प्रजनन करते हैं। जोड़े का यही ढंग सुहाता है। स्त्री की शय्या पुरुष के समीप उत्तर की ओर ही होती है।"

ता नान्तरेण संचरेयुः। नेन्मिथुनं चर्य्यमाणन्तरेण संचरानिति ता नातिहृत्य सादयेन्नोऽअनाप्ताः सादयेत् स यदतिहृत्यसादयेदस्ति वाऽअग्नेश्चापां च विभ्रातृव्यमिव स यथेव ह तदग्नेर्भवति यत्रास्याप उपस्पृशन्त्यग्नौ हाधि भ्रातृव्यं वर्धयेद्यदतिहृत्य सादयेद्यद्यऽनाप्ताः सादयेन्नो हाभिस्तं काममभ्यापयेद्यस्मै कामाय प्रणीयन्ते तस्मादु सम्प्रत्येवोत्तरेणाहवनीयं प्रणयति।२१।

"आहवनीय के उत्तर में जहां प्रणीता पड़ी हों उन के तथा आहवनीयाग्नि के बीच में से आना जाना नहीं चाहिए। क्योंकि कहीं ऐसा न हो जाय कि जोड़े के परस्पर व्यवहार के बीच में से गुजर जावें।" इस का तात्पर्य्य यह है कि स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों में दूसरे लोगों का हस्ताक्षेप जहां तक न हो वहां तक अच्छा है। इसलिए जहां स्त्री-पुरुष परस्पर प्रेमालापादि करते हों वहां जाना सभ्यता विरुद्ध है। यहीं तक नहीं। उनके परस्पर कलह आदि भी यथासम्भव उन्हें ही निपटा लेने चाहिएँ। तीसरे मनुष्य के लिए गहरे सम्बन्धों में यथार्थ तथ्य का ज्ञान प्राप्त करके ठीक-ठीक न्याय करना असम्भवकल्प है। नियम यह है कि जितना कोई व्यवहार अन्तरंग हो उतना ही उसमें बाह्य हस्ताक्षेप अनुचित है। प्रजनन स्त्री-पुरुष का अन्तरंगतम व्यवहार है। वही यहां उनके परस्पर व्यवहारों का उपलक्षण हो कर आया है। इस सिद्धान्त से कोई सहमत हो वा न हो, जिन ऋषियों ने पूर्णमास नाटक की रचना की हैं उनका और कम से कम पूर्णमास के याज्ञवल्क्य संस्करण द्वारा याज्ञवल्क्य का यही मत ह।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

"ता नातिहृत्येत्यादि—सो उस जल को न तो आहवनीय के अत्तन्त समीप ला कर रक्खे और न पहुंच से बाहर।"

ऐसा क्यों करे इसका भाव बताते हैं। वह कहते हैं कि "यदि अत्यन्त समीप ला कर रखें तो याद रखना चाहिए कि जल और अग्नि का परस्पर शत्रुभाव-सा 'अस्ति' अर्थात् जगत् प्रसिद्ध है, सो उसी प्रकार अग्नि पर जल की शत्रुता को बढ़ावे जैसा कि अग्नि पर जल स्पर्श कराने से होती है अर्थात् अग्नि बुझ जावे, यदि अति समीप ला कर रखे। यदि पहुंच से बाहर रखे तो वह उद्देश्य ही पूरा न हो जिस के लिये प्रणयन किया जाता है। इसलिए उचित दूरी पर आहवनीय क उत्तर की ओर प्रणयन करता है।"

प्रश्न हो सकता है कि यहां 'सम्प्रति, का अर्थ उचित दूरी पर ऐसा क्यों किया तो इस का उत्तर यह है कि ऐसा ही अर्थ करना संगत है।

इस विधि का भाव यह है कि पति-पत्नी को गृहस्थाश्रम में इस प्रकार रहना चाहिये जिससे उन्हें परस्पर एक दूसरे के ज्ञानादि अग्नि को उद्दीप्त करने के लिए पर्याप्त समय मिले। किन्तु इतना अधिक समीप न होना चाहिए जिससे कामातुरता बढ़े और पत्नी पति की अग्नि बुझाते-बुझाते अन्त को जीवनाग्नि के भी बुझाने का कारण बन जाय। दूसरी ओर एक दूसरे से वियुक्त भी न रहना चाहिए। क्योंकि यदि वियुक्त रहेंगे तो परस्पर सुसंगति से ज्ञान-वृद्धि आदि द्वारा उत्तम सन्तान प्राप्ति रूप जो गृहस्थाश्रम का उद्देश्य है वह भी पूरा न होगा।

हाय, आज हिन्दू-गृहस्थों का क्या बुरा हाल है? जिस कर्म से बचाने को कहा था उस अग्नि नाशक कर्म के लिए तो सास, ससुर, माता, पितादि सब ही पूरा-पूरा प्रबन्ध कर देते हैं। और परस्पर गम्भीर वार्त्तालाप, ज्ञान चर्चा आदि अग्नि-वर्धक कर्मों के लिए उन का बड़ों के सामने बात करना भी बेहयाई समझी जाती है। जिस जाति में काम के दीप्त होने का और ज्ञान के दीप्त न होने देने का ऐसा सर्वांगसम्पन्न प्रबन्ध हो वह नष्ट क्यों न हो?

अथ तृणैः परिस्तृणाति। द्वन्द्वं पात्राण्युदाहरति शूर्पं चाग्निहोत्रहवणीं च स्फ्यं च कपालानि च शम्यां च कृष्णाजिनं चोलूखलमुसले दृशदुपले तद्दश दशाक्षरा वै विराड् विराड्वै यज्ञस्तद्विराजमेवैतद्यज्ञमभिसम्पादयत्यथ यद्द्वन्द्वं द्वन्द्वं वै वीर्य्यं यदा वै द्वौ संरभेतेऽथ तद्वीर्यं भवति द्वन्द्वं वै मिथुनं प्रजननम् मिथुनमेवैतत्प्रजननं क्रियते।२२।

"फिर वेदि को तृणों से ढकता है। जोड़ा-जोड़ा मिला कर पात्रों को रखता है। वह जोड़े इस प्रकार हैं। शूर्प और अग्निहोत्रहवणी, स्फ्य और कपाल, शम्या और कृष्णाजिन, ऊखल और मूसल, सिल और बट्टा। यह सब मिलकर दस हुए। सो दस पात्रों से यहां दस अक्षरों वाला विराट् छन्द सूचित हुआ। इससे यज्ञ विराट् है। सो इस यज्ञ को भी विराट् रूपता प्रदान की गई। अत्र यह जो जोड़-जोड़े मिला कर रखता है सो इसका अर्थ यह है कि जोड़े में शक्ति है। जब दो मिल कर कार्य करते हैं तब शक्ति उत्पन्न होती है। इससे सिद्ध होता है कि दो का मिलना ही शक्ति है। संसार का पुण्यतम कार्य प्रजनन भी जोड़े से होता है। अतः इस यज्ञ का उद्देश्य-भूत प्रजनन भी जोड़े के अधीन है।"

यहां तृण-परिस्तरण पर अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं। उस पर आगे चल कर लिखेंगे। यहां केवल यह लिखना है कि इसका तात्पर्य यह है कि स्त्री की

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

रक्षा पुरुष का कर्त्तव्य है। आगे जो विधि है उसमें यह बात निश्चय से नहीं कही जा सकती कि दस पात्रों की आवश्यकता थीं और उनकी प्रशंसा मात्र के लिए विराट् छन्द की कल्पना की गई अथवा विराट् छन्द का नाम लाना था इसलिए दस पात्र रखे गए। किन्तु हमारा झुकाव इसी पक्ष की ओर है कि दस पात्र स्वभावतः प्रयोजन सिद्ध थे। यह विराट् की बात तो उसमें चमत्कारमात्र के लिए बढ़ा दी गई है। यदि ११ पात्रों की आवश्यकता होती तो ११ संख्या से सम्बन्ध रखने वाले किसी सुन्दर सिद्धान्त का इससे सम्बन्ध बना दिया जाता। तात्पर्य यह कि यज्ञ का उद्देश्य यजमान का तथा उसके द्वारा सन्तान का संस्कार करना है। कई स्थानों पर भाव-विशेष को सूचित करने के लिए विधि रखी गई है। जैसे 'भूमा' को सूचित करने के लिए गड्डे में रख कर पुरोडास योग्य पदार्थ लाना। कई स्थानों पर स्वभाव सिद्ध बातों में भाव-विशेष का विन्यास कर दिया गया है। जैसे यहाँ दस पात्रों में विराट् का। क्योंकि यदि छन्द के लिए पात्रों की कल्पना मानें तो जिस प्रकार छन्द में अक्षर की कमी होने पर पादपूर्त्यर्थ कई शब्द व्यर्थ भर दिए जाते हैं, ऐसे हो सकता है किसी अनावश्यक पात्र को भी संख्या पूरणार्थ भर दिया गया हो परन्तु इससे यज्ञ की कल्पना के सौन्दर्य में विघात आता है। इसलिए यही मानना संगत प्रतीत होता है कि यथाप्राप्त दस संख्या में उन्होंने विराट् का भाव जोड़ दिया।

अब देखना चाहिए विराट् का भाव क्या है। उलझन की बात है कि विराट् शब्द के दो अर्थ हैं और दोनों एक दूसरे के सर्वथा विपरीत हैं। एक "विशेषेण राजते विराट्" अर्थात् जो विशेष रूप से चमके वह विराट् है। दूसरा 'विगतो राड्यस्मात् स विराट्" अर्थात् जिसमें राट् न हो। यहां "विराड् वैयज्ञः" में कौन सा अर्थ ठीक है यह विचारणीय है। अब हम यहाँ एक ऐसी बात उपस्थित करते हैं जिससे दोनों ही संगत हो जावें। वह इस प्रकार कि यज्ञ विराट् अर्थात् विशेष चमकने वाला है। कौन सा यज्ञ ? जो कि विराट् अर्थात् राट् रहित हो, किन्तु हो फिर भी यज्ञ। इसका तात्पर्य यह है कि यज्ञ नाम संगतिकरण का है। किन्तु भिन्न व्यक्तियों का वही संगतीकरण आदर्श है, वही विशेष चमकने वाला है, जिसमें किसी एक को राजा न बनाना पड़े। इस पर आपत्ति यह होगी कि फिर वह यज्ञ अर्थात् संगतिकरण न रहेगा। क्योंकि राट् के न रहने से वह बिखर जाएगा। इस पर हम यह कहते हैं कि यदि यज्ञ के भिन्न-भिन्न पात्रों में परस्पर संश्लेषक शक्ति बड़ी प्रबल होगी तब तो बिना राट् अर्थात् Central Figure के भी वह 'विराट्' अर्थात् विशेष रूप से चमकने वाला होगा। इसी लिए कहा "विराड् वै यज्ञः" अर्थात् आदर्श यज्ञ वही है जिसमें कोई अकेला राट् न हो। परन्तु सब मिल कर विशेषेण राट् हों। अर्थात् उसका प्रत्येक पात्र इतना निःस्वार्थ रूप के सामुदायिक योगक्षेम के लिए आत्मार्पण करने वाला हो कि हर एक अपने आपको राजा तथा प्रजा समझे। विराट् अर्थात् राजा रहित समुदाय दो प्रकार के होते हैं। एक यज्ञ तथा दूसरे अयज्ञ। अयज्ञ विराट् तो निन्दनीय है, वह तो विशृंखलता (Chaos) है। किन्तु यदि यज्ञ होकर विराट् हो तब तो वह प्रशस्य-तम है। इसीलिए ब्राह्मणों में प्रजातन्त्र राज्य को विराट् कहा है तात्पर्य यह है कि यज्ञ होना आवश्यक है चाहे वह सराट् हो अथवा विराट्। परन्तु यज्ञ-भावना की पराकाष्ठा विराट् है। और उसका मूलसूत्र है, "द्वन्द्वं वै वीर्य्यम् अथवा द्वौ संरभेते", परस्परोपकारकता। सो इस प्रकार विराट् का दोनों में से कोई भी अर्थ करें दोनों संगत हैं।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

निचोड़ इस प्रकार है—

"त्रिशेपेण राजते" इस पक्ष में सन्दर्भ का अर्थ इस प्रकार हुआ–यज्ञ अर्थात् संगतिकरण बड़ी चमकदार वस्तु है और उसका प्रधान साधन है परपस्रोपकारकता।

"विगतो राड्यस्मात्" इस पक्ष में इस प्रकार होगा—यज्ञ का आदर्श है राजा के विना काम चलाना। जहाँ यज्ञ के भिन्न-भिन्न पात्र एक दूसरे का पूरा ध्यान रख सकें वहाँ राजा का प्रयोजन नहीं रहता। वहां ही ऐसी अद्भुत शक्ति उत्पन्न होती है।

इस प्रकार आपने देखा कि नाटककार किसी अवसर को हाथ से नहीं जाने देते। पात्रों के विन्यास तक में दो परम यज्ञोपयोगी उपदेश दे दिए। यह उपदेश यज्ञ सामान्य में उपयोगी हैं। इसलिए यह विशेष अर्थात् पौर्णमास में उपयोगी स्वयं ही हो गए। यह परस्पररोपकारता की शिक्षा सब के लिए ही उपयोगी है, फिर उत्तम पूर्णमासी के चन्द्र अर्थात् श्रेष्ठ पुत्र की कामना करने वाले स्त्री-पुरुषों के जोड़े के लिए उपयोगी क्यों न होगी। स्त्री-पुरुष एक दूसरे के लिए तथा वह दोनों परम यज्ञ अर्थात् ब्रह्मराष्ट्र के लिए उपकारक बनने का यत्न करें। तब ही सन्तान भी इन गुणों से युक्त होने के कारण उपयुक्त होगी—'द्वन्द्वं वै वीर्य्यम्।'

इतिप्रथमम् ब्राह्मणम्

सु-अलंकृत यज्ञ

होताध्वर्यु रावया अग्निमिन्धो ग्रावग्राभ उत शंस्ता सुविप्रः।
तेन यज्ञेन स्वरंकृतेन स्विष्टेन वक्षण आ पृणध्वम्॥

ऋग्वेद १. १६२. ५, यजुर्वेद २५, २८

होता अध्वर्यः आवयाः अग्निम्-इन्धः ग्राव-ग्राभः उत शंस्ता सु-विप्रः।
तेन यज्ञेन सु-अरंकृतेन सु-इष्टेन वक्षणाः आ-पृध्वम्॥

१) जिस यज्ञ में (होता) होता, (अध्वर्युः) अध्वर्यु, (आवया): आवया, (अग्निम्- इन्धः) अग्निमिन्ध, (ग्राव-ग्राभः) ग्राव-ग्राभ, (शंस्ता) शंस्ता, (उत) और (सु-वि-प्रः) सुविप्र—ये सात ऋत्विज हों।

२) (तेन सु-अरंकृतेन सु-इष्टेन यज्ञेन) उस सु-अलंकृत, सु-इष्टयुक्त यज्ञ से (वक्षणाः) वक्षों [सीनों] को (आ पृणध्वम्) पूरो।

१) होता=आह्वाता, आदाता, दाता, देवों का आह्वान करने वाला [क्षेत्रपाल, Field worker]।
२) अध्वर्यु=अहिंसक, अकुटिल, व्यतिक्रमरहित, सतत् सायक।
३) आवया=अवयवा, संगठनकर्त्ता।
४) अग्निमिन्ध=अग्नि को प्रज्वलित रखने वाला जोशीला प्रेरक।
५) ग्राव-ग्राभः=वाणी-ग्राह, अक्षरशः आदेश पालन करने वाला।
६) शंस्ता=प्रशंसक, प्र-स्तोता, विज्ञापक।
७) सुविप्र=सु वि-प्र, सुष्ठुतया—विविधतया—प्रकृष्टतासम्पादक।

—विद्यानन्द 'विदेह'

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

वेद फैलाएं

महोदय,

जन ज्ञान के जून अंक में देवेन्द्र एम. भट्ट, जामनगर के पत्र को पढ़कर कुछ लिखने का विचार हुआ।

आप जन-ज्ञान-प्रकाशन के माध्यम से वैदिक साहित्य के सृजन का जो महान् कार्य कर रहे हो वह प्रशंसनीय है। इतने थोड़े समय में और अल्प साधनों से बड़ा आश्चर्यजनक कार्य कर दिखाया है। यह सब कुछ ईश्वर विश्वास, गुरु प्रेम, दृढ़ संकल्प, घोर परिश्रम, सच्ची लगन एवं साहसिकता का ही परिणाम है। आपकी यह महत्त्वाकांक्षा कि दयानन्द संस्थान गीता प्रेस जैसा शक्तिशाली वैदिक साहित्य-संस्थान बन सके जिससे महर्षि दयानन्द के दिव्य स्वप्नों की पूर्ति के लिए भूतल पर वैदिक विचार धारा का साम्राज्य स्थापित हो, बहुत ही सुन्दर है ! हम तो भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि प्रत्येक वैदिक धर्मी के हृदय में इस विशाल कार्य की सहायतार्थ सद्भावना जाग्रत हो।

महर्षि दयानन्द जी की इच्छा और समस्त जीवन के ध्येय एवं उपलब्धि को दो शब्दों में प्रकट करना हो तो वे हैं—एक निराकार ईश्वर की उपासना एवं वेदों का प्रचार व प्रसार ! सो इसके लिए मैं एक सुझाव देना चाहता हूँ—जहां आप और प्रकाशन का इतना महान कार्य कर रहे हो वहां आप इस ओर भी विचार करें—

वेद ईश्वरीय ज्ञान है और मानव मात्र के लिए है। इसलिए हर मनुष्य तक इसकी पहुँच होनी चाहिए ! मगर इसके विपरीत यह इतना ही मानव से ओझल अगम्य रहा है। वास्तव में जन-साधारण के लिए तो यह सदा ही अदृश्य व अलभ्य रहा है। इसको जनता तक पहुंचाने के लिए गीता-बाइबिल की तरह छोटे आकार में समस्त भाषाओं में इसका प्रकाशन होना चाहिए, और यह ट्रैक्टों के रूप में हो सकता है।

"वेदवाणी के नाम से इसका प्रकाशन हो। वेद और जनता का सीधा सम्पर्क हो। वेद में अनेक विषय हैं सो एक विषय को लेकर किसी वेद के अध्याय या सूक्त के २०-२५ मन्त्र छांट कर लिख दें, पहले वेद मन्त्र, अन्वय, शब्दार्थ और फिर सरल सीधी भाषा में भावार्थ हो। छपाई सुन्दर, आकर्षक व टाइप कुछ मोटा हो। मुख पृष्ठ पर केवल वेद वाणी लिखा हो, नीचे जन-ज्ञान, या दयानन्द संस्थान का नाम हो। किसी मानव का चित्र न हो। अगर चित्र हो तो विषयानुसार प्राकृतिक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

चित्र हो, साइज साधारण किताबी या पाकेट बुक गुटका का हो। दूसरे पृष्ठ पर एक घोषणा हो—वेद ही ईश्वरीय वाणी है। ईश्वर अनादि और अनन्त है इसलिए इसका ज्ञान भी अनन्त अनादि है। मनुष्य मात्र के कल्याण के लिए ईश्वर ने हर आदि सृष्टि में वेद के ज्ञान को प्रकाशित किया है। बाकी संसार में जितने भी मत-मतान्तर पीर-पैगम्बर, धर्माचार्यों गुरुओं और अवतारों की जो भी वाणी है वह सब बहुत बाद की है। उसमें सत-अंश केवल वेदों से आया है और जो भी बात तर्क विरुद्ध है वह सब उनकी अपनी कल्पना है। इसलिए मनुष्यमात्र को अधिक से अधिक वेद वाणी का ही पठन-पाठन करना चाहिए।"

यह है मेरा सुझाव। आपका तो प्रकाशन का कार्य ही है। जैसे भी जिस ढंग से इसे सुन्दर आकर्षक रूप दिया जा सके दिया जावे। हमारा तो कहने का तात्पर्य यह है कि किसी भी प्रकार जनसाधारण तक वेद को पहुँचाया जावे। इससे जो नित्य-नये मत-मतान्तर गुरु-अवतार-ईश्वर पैदा हो रहे हैं शायद उन पर कुछ रोक लग सके।

इस समय धर्म व योग के नाम पर होड़-सी लगी हुई है। हर एक प्रचारक साधु-महात्मा एक दूसरे से आगे बढ़ना चाहता है और उनकी खोपड़ी भी बड़ी उपजाऊ हो गई है। वे लोगों को आकर्षित करने के लिए नये-नये हथकण्डे अपना रहे हैं। जनता की आत्मिक भूख का नाजायज लाभ उठा रहे हैं। इस बारे में एक उदाहरण देता हूं—अभी हम उत्तराखण्ड की छोटी-सी यात्रा पर गए थे। हरिद्वार व्यासाश्रम में आध्यात्मिक साधना शिविर में सम्मिलित हुए। कुछ दिन ऋषिकेश ठहरे। ऋषिकेश में गंगापार गीताभवन के साथ एक वेद-मन्दिर बन रहा है। इसके अधिष्ठाता हैं स्वामी मुनीश्वरानन्द योगी। अच्छे विद्वान व प्रभावशाली वक्ता हैं। भाषण भी सिद्धान्त विरुद्ध कम ही होता है। वह तो स्पष्ट कहते हैं कि तीर्थयात्रा गंगास्नान आदि से मुक्ति मिलने वाली नहीं है। शुभ कर्म करो और भगवान का भजन करो। मूर्ति पूजा का खण्डन तो नहीं करते परन्तु खिलाफ ही लगते हैं। क्योंकि सायंकालीन प्रवचन के बाद उनके भक्तजन स्त्री-पुरुष गुरु जी के नाम पर उन्हीं की आरती उतारते हैं। शायद इस में उनका यह तर्क हो कि मूर्ति की बजाय जिन्दा गुरु को पूजा करो। खैर, ऐसी अनेक बातें रोज देखने को मिलती हैं। सो इनका निराकरण सीधा वेद प्रचार से ही हो सकता है।

शुभ चिंतक

जींद — हरिश्चन्द्र

Dear Editor,

I read Ram-Krishna Upanishad by Revered C. Rajagopalchari in which he has justified incarnation in images. I should like to express that it is against Vedic Philosophy. Revered Sir has written that God is every where so it is in images of clay and copper, with the worship of idol we could attain blessing of Almighty God. Here one thing is very important to write which is as under :—

> "Idol worship is ditch not ladder that climbing on we could reach God but it is ditch falling in it we could not survive or gain till the end of this life"

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

If we take that God is very important to attain in life we could attain it it not by worshiping idols but true knowledge of God and attainment could only be possible by the studies of Vedas and Upanihads and Darashan Shastras in which God express Himself and becomes very clear to us as our soul is capable of knowing. We aryans believe in God, Soul and Prikriti. Soul has to attain knowledge of God residing in human body where God has blessad Soul with Mana, Budhi and Gyan Indries. Soul has two main qualification that is Gyan and Paryatan. Prakriti is power which creates immovable things and is great many where man forget the real and absorbing in the maya thinks about material attainment the only aim of life. Idols worship is just like putting seed in baran land where seed could not grow and will be taken away by very swift winds. So by doing this we unnecessarily waste our time.

We believe that there is Almighty God who is Omnipresent and there is always a desire in every human soul to know about God. The way to attain the knowledge of Almighty is Swadhya, Tapa, Dhayana and Smadhi. The only way to attain God is to gain true knowledge of God through Shastras. If we we want to reach Delhi, we must catch a train which goes to Delhi not a train which goes to Bombay or other places. This different Dharamas Gurus put us in great suspense that we start worshipping Gurus and abstain from the real.

Regarding Incarnation, there is no incarnation of God. God is every where and He need not to reach where He is already. As God is the Supreme Ruler of this World. He feel not coming in tke bound of fles and bonvs. God is every where and knower of the world. He is supreme lord and is all powerful and all-knowing. Rama-Krishna were the Souls who by good deed and knowledge and following the path of God became the benefactor of human race.

May Almighty God bless us Medha Budhi so that we could distinguish between true and untrue. Let us move on the right path so that we could achieve the real aim of life and let us keep away from misrepresentation of Dharma and led us toward reality and truth.

Kul Bhushan Sabharwal

जन-ज्ञान के पाठकों को यह जानकर हर्ष होगा कि जनवरी में हम एक विशेषांक महाभारत पर प्रकाशित कर रहे हैं। इस अंक का मूल्य ४ रु० होगा किन्तु पाठकों को बिना मूल्य दिया जाएगा।

—सम्पादक

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

१९ नवम्बर : जन्म दिवस पर

इन्दिरा गांधी का लघुलेख

रामायण का महत्त्व

कुछ कवि अपने युग की आवाज समझे जाते हैं, लेकिन महान् कवि अपने युग में नहीं, हर युग में वर्तमान रहते हैं और उनकी वाणी समूची मानवता के लिए होती है। रामायण और महाभारत का भी यही साध्य है।

बहुत कुछ भारतीयता इन दो महान् ग्रन्थों की देन है। इन्हीं दोनों ग्रन्थों ने हमें आधार दिया है और इन्हीं मूल्यों और आकांक्षाओं के सूत्र ने भारतवासियों की एक पीढ़ी को दूसरी पीढ़ी से और एक प्रदेश को दूसरे प्रदेश से जोड़ा है। ये ग्रन्थ सदा प्रेरणा और संतोष के स्रोत रहे हैं।

और इन ग्रन्थों को केवल भारतीय या हिन्दू ग्रन्थ मानना ठीक नहीं है। जब भी मैं इंडोनेशिया या दक्षिण पूर्व एशिया के अन्य देशों में गयी हूँ, मैंने रामायण महाकाव्य की सार्व भौमिकता के दर्शन किए हैं। मैंने जकार्ता के विद्यार्थियों और नागरिकों द्वारा प्रस्तुत रामायण की नृत्य-नाटिका देखी थी। विभीषण का पार्ट एक विधि छात्र ने किया था सभी पात्र मुसलमान थे, लेकिन रामायण के प्रति उनकी भावना हमसे किसी तरह कम नहीं थी। रामायण का महत्व औपचारिक धर्म की अपेक्षा और भी अधिक है। उसका मूल तत्व है—सत्य की विजय और कर्त्तव्य की प्रतिज्ञा

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi

Digitization by eGangotri Funding by Arya Samaj Foundation, Chennai

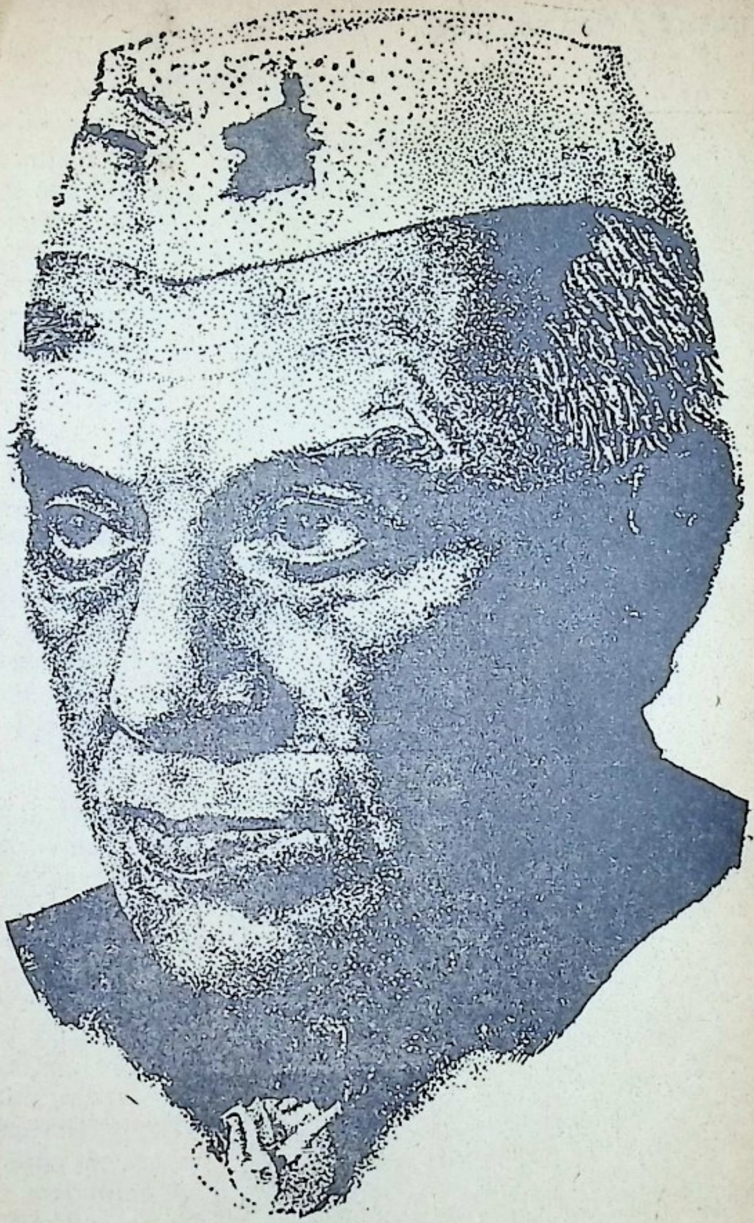

बच्चो !

है आराम हराम बताया नेहरू जी ने,
करो लगन से काम प्रेरणा लेकर जी में,
झगड़े से हो दूर, शक्ति को हम अपनाएं,
कर चरित्र निर्माण स्वजन सबके बन जाएं।

मुद्रक–प्रकाशक पं० राकेश रानी द्वारा नरेन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, नई दिल्ली से छपा।

Dr. Vivek Arya Vedic Library, Delhi